मैं क्राँतिकारी कैसे बना?

लेखक—"राम"

मूल्य १॥)

प्रकाशक— भजनलाल बुकसेलर घंटाघर देहली।

पं० रामप्रसाद "बिस्मिल"

संक्षिप्त विवरण

अगस्त मास सन् १९२५ की बात है। ११ अगस्त को एक अंगरेज़ी दैनिक पत्र में, ९ अगस्त सन् १९२५ की रात को लखनऊ के आगे काकोरी स्टेशन के पास चलती रेल में डाका पड़ने और उसमें से सरकारी खज़ाने के लूटने की ख़बर बड़े मोटे शीर्षकों में छपी थी। इस घटना से प्रान्त भर में बड़ी सनसनी फैल गई। पुलिस बड़ी तत्परता से इस घटना का अनुसन्धान कर रही थी। सम्भवतः डेढ़ महीने तक पुलिस पता लगाती रही। अन्त में २६ सितम्बर के लगभग एकाएक पुलिस ने गिरफ्तारियां और तलाशियां शुरू करदीं। कानपुर, आगरा, इलाहाबाद, लखनऊ, बनारस, शाहजहांपुर आदि शहरों में तलाशियां तथा गिरफ़्तारियां हुईं। न्याय तथा शान्ति-स्थापना के नाम पर अमीर, ग़रीब सभी के घर छाने गये। हर जगह पुलिस का आतङ्क था। गिरफ़्तार हुए व्यक्तियों में अधिकता उन्हीं देशवासियों की थी, जो कि कांग्रेस के कार्यकर्त्ता थे अथवा जो अन्य किसी कारण से जनता के श्रद्धापात्र थे। गिरफ़्तारियों के समय प्रायः सर्वत्र पुलिस की धांधागर्दी देख पड़ती थी।

आश्विन का महीना था और दुर्गा-पूजा के दिन थे। जिस समय देश-वासी विजया-दशमी और दुर्गापूजन बड़े समारोह से मना रहे थे, श्रीमती पुलिस महारानी भी 'कुख्याति का सम्वर्द्धन' कर रही थीं। पूजा और मेले के दिन लोग अपने परिवार वालों,

मित्रों और हितेच्छुओं से विलग किये गये। बड़ा कारुणिक दृश्य था। किन्तु गिरफ़्तार हुए व्यक्तियों के मुख पर भय अथवा चिन्ता के चिह्न न थे, प्रत्युत उन्हें इस आकस्मिक धर पकड़ पर आश्चर्य हो रहा था और उनके हृदय अपने सम्बन्धियों से इस प्रकार अलग होने के कारण विषाद पूर्ण थे। इस समय पुलिस का दमन चक्र पूर्ण ज़ोर पर चल रहा था। जो लोग गिरफ़्तार हुए उनका कहना ही क्या, उनके कुटुम्बी बुरी तरह सताये गये। ज़ब्ती के समय न केवल अभियुक्तों के समान वरन् उनके कुटुम्बियों तक के वस्त्र तक पुलिस अपने साथ ले गई। जो लोग गिरफ़्तार हुए थे वे इतने ख़तरनाक समझे गए कि उनके पैरोंमें बेड़ियां डाल दी गईं। आरम्भमें इन सब व्यक्तियों पर काकोरी डाके में सम्मिलित होने का अभियोग लगाया गया। सरकार तथा "स्टेट्समैन" जैसे पत्रों की राय में यह डाका एक षड्यन्त्रकारी दल द्वारा डाला गया था। इस कारण मामले का अनुसन्धान बड़ी सरगर्मी के साथ होने लगा। डाका किस प्रकार पड़ा यह जानना पुलिस के लिये यदि दुस्साध्य नहीं तो एक टेढ़ी खीर अवश्य था। अनुसन्धान करने और कुछ अभियुक्तों के बयानों द्वारा जो कुछ पुलिस मालूम कर सकी उससे यह प्रकट होता है कि घटना एक वीरता पूर्ण थी। अतः इस रोचक घटना का विहंगावलोकन हम यहां पर करा देना चाहते हैं। पाठक, देखें कि एक पराधीन देश की दूषित और पराधीन हवा में पले हुए व्यक्तियों की भावनाओं में कितनी भीषण हिलोरें उठ सकती हैं, फिर चाहे वह उन्माद क्षणिक ही क्यों न हो, अथवा हमारे देश के आलादिमाग उनके इस कृत्य को बुद्धि की बहक अथवा पागलपन या उनका ग़लत रास्ते पर होना ही क्यों न समझें, किन्तु कम से कम इतना वे अवश्य समझें और मानेंगे कि उनका कार्य निस्वार्थ और वीरतापूर्ण था। सन् १९२५ ई० की ९ अप्रेल की रात उस पक्ष की सब से अंधेरी रात थी।

आकाश मेघाच्छन्न था, कुछ वर्षा भी हो रही थी। दस व्यक्तियों का एक दल सहारनपुर से लखनऊ जाने वाली ट्रेन पर सवार था; कुछ थर्ड क्लास में बैठे थे और अन्य सेकण्ड-क्लास में। सेकण्ड-क्लास की जंज़ीर खींचने का प्रबन्ध था। इस प्रकार गाड़ी खड़ी की गई, गाड़ी खड़ी होने पर सब लोग उतर कर गार्ड के डब्बे के पास पहुंचे। इसी डिब्बे में सरकारी ख़ज़ाना एक लोहे के सन्दूक में रक्खा था। सन्दूक में प्रायः ताला या जंज़ीर नहीं लगी रहती थी। लोहे का सन्दूक उतारकर छेनियों से काटे जाने की व्यवस्था होने लगी, किन्तु छेनियों ने काम न दिया; तब कुल्हाड़ा चला। मुसाफिरों पर आक्रमण करना या उन्हें लूटना इस दल का अभीष्ट न था। अतः उनसे कह दिया गया कि सब गाड़ी में चढ़ जायं। गार्ड गाड़ी में चढ़ना चाहता था, इस पर उसे ज़मीन पर लेट जाने की आज्ञा दी गई ताकि बिना गार्ड के गाड़ी न चल सके। दो आदमी इस बात के लिये पहिले से ही नियुक्त कर दिये गए थे कि वे लाइन की पगडंडी को छोड़कर घास में खड़े और गाड़ी से काफी दूर रहकर गोली चलाते रहें। दल के उन व्यक्तियों को जिनका काम गोली चलाना था, पहिले से ही यह आज्ञा दे दी गई थी कि जब तक कोई व्यक्ति बन्दूक लेकर सामना करने न आवे,, या मुकाबिले में गोली न चले, तब तक किसी आदमी पर फायर न होने पावे। नर हत्या करके इस घटना को भीषण रूप देना इस दल का उद्देश्य न था। हां! वे दोनों व्यक्ति पांच पांच मिनट बाद पांच पांच फायर करते थे; यही दल के नेता का आदेश था। सन्दूक तोड़ तीन गठरियों में थैलियां बांधी गई रास्ते में थैलियों से रुपया निकाल कर पुनः गठरी बांधी गई और उसी समय ये लोग लखनऊ शहर में जा पहुंचे। इस प्रकार दस आदमियों ने जिन में अधिकांश विद्यार्थी थे, एक गाड़ी को रोक कर लूट लिया। उस गाड़ी मे चौदह पुरुष ऐसे थे, जिनके पास

चन्दूकें या रायफलें थीं। दो सशस्त्र अंगरेज़ फौज़ी जवान भी थे—पर सब शान्त रहे। ड्राइवर महाशय तथा एक इन्जीनियर महाशय का बुरा हाल था। ये दोनों ही अंगरेज़ थे। ड्रायवर महाशय इन्जिन में लेट रहे थे और इन्जीनियर महोदय पाखाने में जा छिपे थे। दल के नेता ने चिल्लाकर कह दिया था कि हम यात्रियों से न बोलेंगे, सरकार का माल लूटेंगे। इस कारण मुसाफिर भी शांत बैठे रहे। सब समझे बैठे थे कि कम से कम चालीस आदमियों ने ट्रेन को घेर लिया है। इस समय अन्धेरा होने से लोग उनकी ठीक संख्या न जान पाये। केवल दस युवकों ने इतना बड़ा आतङ्क फैला दिया। साधारणतया इस बात पर अनेक मनुष्य विश्वास करने में भी सङ्कोच करेंगे कि दस युवकों ने गाड़ी खड़ी करके लूट ली। जो कुछ भी हो, बात वास्तव में यही थी। इन दस में से अधिक तो आयु में २० और २२ वर्ष के होंगे। वे शरीर से अधिक हृष्ट पुष्ट भी न थे।

जब गिरफ्तारियां शुरू हुईं, तो बहुत दिनों तक उनका तांता चलता रहा। संयुक्त प्रान्त के अतिरिक्त अन्य प्रान्तों से भी शहीदों की छटनी हुई, सब गिरफ्तार करके लाये गये। मामला चला। गिरफ्तार हुए व्यक्तियों की नामावली हम यहां दे रहे हैं।

१—श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल' शाहजहांपुर, २—श्री बनारसीलाल कोकाश शाहजहांपुर, ३—श्री हरगोविन्द शाहजहांपुर ४—श्री प्रेमकिशन खन्ना शाहजहांपुर, ५—श्री इन्दुभूषण मित्र शाहजहांपुर, ६—श्री वीरभद्र तिवारी कानपुर, ७—श्री राम दुलारे त्रिवेदी कानपुर, ८ श्री गोपीमोहन कानपुर, ९ श्री राजकुमार सिन्हा कानपुर, १० श्री शीतलासहाय इलाहाबाद, ११—श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य कानपुर, १२—श्री दामोदर स्वरूप

जो सेठ बनारस, १३—श्री मन्मथनाथ गुप्त बनारस, १४—श्री रामनाथ पांडेय बनारस, १५—श्री डी० डी० भट्टाचार्य बनारस, १६ श्री चन्द्रधर जौहरी आगरा, १७ श्री चन्द्रभाल जौहरी, आगरा १८ श्री रोशनसिंह शाहजहांपुर, १९—श्री बाबूराम वर्मा एटा, २० श्री ज्योतिशङ्कर दीक्षित इलाहाबाद, २१-श्रीहरनाम सुन्दरलाल लखनऊ २२—श्री मोहनलाल गौतम लाहौर, २३—श्री शरच्चन्द्र गुह, बङ्गाल; २४-श्री विष्णुशरण दुबलिस मेरठ, २५—श्री शचीन्द्रनाथ विश्वास लखनऊ, २६—श्री रामदत्त शुक्ल, २७—श्री मदनलाल, २८ श्री भैरोंसिंह, २९-श्री कालिदास बोस बरहमपुर (बङ्गाल), ३० श्री इन्द्रविक्रम सिंह बनारस, ३१-श्री रामकृष्ण खत्री पूना, ३२—श्री प्रणवेश चटर्जी जबलपुर, ३३—श्री भूपेन्द्रनाथ सन्याल इलाहाबाद, ३४—श्री बनवारी-लाल रायबरेली, ३५—श्री मुकुन्दी लाल बनारस, ३६—श्री जोगेशचन्द्र चटर्जी कलकत्ता, ३७—श्री गोविन्द चरण कर लखनऊ, ३८—श्री रामरत्न शुक्ल, ३९—श्री राजेन्द्रनाथ लहरी बनारस, ४०—श्री शचीन्द्रनाथ सन्याल इलाहाबाद, ४१—श्री शचीन्द्र नाथ बख्शी बनारस, ४२—श्री अशफ़ाक उल्ला खां शाहजहांपूर, ४३—श्री चन्द्रशेखर 'आजाद' बनारस, ४४—श्री शिवचरण लाल आगरा, (बादमें फिर आप पर मुकदमा नहीं चलाया गया)।

गिरफ्तारशुदा लोगोंमें से वास्तविक मामला शुरू होनेके पहिले निम्न लिखित सज्जन छोड़ दिये गये। शायद इन लोगों के विरुद्ध सरकार बहादुर को कोई प्रमाण न मिल सका। पुलिसका ध्येय था कि मुक़द्मे में जनता की सहानुभूति न रहे। अतः उस ने प्रतिष्ठित व्यक्तियों को छोड़ देना ही निश्चित किया।

१—श्री शीतलासहाय, २—श्री चन्द्रधर जौहरी, ३ श्री मदन लाल, ४—श्री रामरत्न शुक्ल, ५—श्री मोहनलाल गौतम ६ श्री चन्द्रभाल जौहरी, ७—श्री हरनाम सुन्दरलाल, ८—श्री डी० डी० भट्टाचार्य, ९—श्री रामदत्त शुक्ल, १०—श्री बाबूराम वर्मा ११—श्री गोपीमोहन, १२—श्री शरच्चन्द्र गुह, १३—श्री भैरोसिंह, १४—श्री कालिदास बोस, १५—श्री इन्द्र विक्रमसिंह,

बाकी अभियुक्तोंपर मामला चला। सब व्यक्ति लखनऊ जेल लाये गये। जेल में पहुंचते ही खुफ़िया पुलिस वालों ने यह प्रबन्ध किया कि सब अभियुक्त एक दूसरे से अलग रखे जायें। अलग अलग रखने से पुलिस को अनेक लाभ थे। सबको अलग रखने से पुलिस प्रत्येक आदमीसे समय पर मिल कर बातें करती थी। कुछ भय दिखाती थी, कुछ इधर उधर की बातों द्वारा भेद जानने का प्रयत्न करती थी। सारांश यह कि इस समय पुलिस सरकारी गवाह बनाने का सरतोड़ परिश्रम कर रही थी। स्वयं खुफ़िया पुलिस के कप्तान साहब, पण्डित राम प्रसाद 'बिसमिल' से कई बार मिले, सहानुभूति दिखाई और प्रलोभन दिये, किन्तु अकृतकार्य रहे। एक बार ज़िला कलक्टर महोदय ने भी पण्डित जी से मिलकर अनेक धमकियां दीं और स्पष्टतया कहा कि तुम्हें फांसी हो जायगी। किन्तु वे भी बैरंग लौटे, कुछ न पा सके। इस प्रकार की मुलाक़ातें प्रायः सभी अभियुक्तों से होती थीं। किसी को १५ हजार रुपये देनेके वादे किये जाते थे, तो कोई इंगलैण्ड भेजा जाने वाला था। यह बाज़ार इतना चढ़ा कि अन्तमें पण्डित रामप्रसाद जी तथा अन्य अभियुक्तोंने खुफ़िया पुलिस के कप्तान साहबसे न मिलने के हेतु अपनी अपनी कोठरियां से बुलाये जाने पर न निकलनेका निश्चय कर लिया। पुलिसवाले आते और परेशान हो

कर चले जाते। किन्तु अन्त में उनका कुचक्र चल ही गया। अस्तु, शिनाख्तें शुरू हुईं। शिनाख्तोंमें बड़ी धांधागर्दीसे काम लिया गया। श्री अईनुद्दीन साहब मुकदमे के मजिस्ट्रेट थे। उन्होंने जी भरके पुलिस महारानी की मदद की। अभियुक्त गिरफ्तार करके खुली गाड़ियोंमें पुलिस स्टेशनोंपर लाये गये, उनको किसी प्रकार भी छिपा कर नहीं रखा गया, सादी वर्दी मे पुलिस वाले उन के पास चक्कर लगाया करते थे। शिनाख्तके समय भी अभियुक्त ऐसे आदमियों के साथ खड़े किये गये थे, जो उनकी स्थिति के न थे और जिन से उनका बिलकुल साम्य न था। पुलिसके पास प्रायः सभी अभियुक्तों की तस्वीरें मौजूद थीं। इतना सब होते हुए भी शिनाख्त की कार्यवाही सफल न हुई और पुलिस को मुंह की खानी पड़ी। शिनाख्तें अधिकांश में गलत थीं। फिर भी इन लोगोंपर मामला चला ही दिया गया। कोई व्यक्ति जमानत पर तक न छोड़ा गया।

हां, पुलिस अपने हथकण्डोंमे कृतकार्य हुई और बनारसी लाल तथा इन्दुभूषण मुखबिर (सरकारी गवाह) बन गये। उनको अन्य अभियुक्तोंसे अलग रखनेका प्रबन्ध किया गया। बनारसी लाल तो हटा कर हजरतगंज की अदालतमें पुलिस की निगरानी में रखे गये और इन्दुभूषण अपने पिताकी देख रेख में छोड़ दिये गये। मामला बाकायदा ४ जनवरी १९२६ ई० से शुरू हुआ। इस समय मुखबिरोंके बयान हो रहे थे। इस के बाद सरकारी गवाहों के बयान होते रहे। इन गवाहियों में पुलिस द्वारा लगाये गये इल्जामोंके तसदीक करानेकी भरसक कोशिश की गई। उपरोक्त गिरफ्तारशुदा व्यक्तियोमें जो छूट चुके थे, उनके अतिरिक्त २८ अभियुक्तों पर मामला चला था। इनमें से भी दो अभियुक्त श्री-ज्योतिशङ्कर

दीक्षित और श्री वीरभद्र तिवारी—स्पेशल मजिस्ट्रेट द्वारा छोड़ दिये गये थे। श्री ज्योतिशङ्कर दीक्षित बड़े खुशदिल आदमी हैं। जेल कर्मचारी तो इनकी खुशहाली देख कर कुढ़ा करते थे। आप जब छोड़े जाने लगे तो आपने अनुरोधपूर्वक मजिस्ट्रेटसे कहा, "तो क्या छोड़ ही दीजियेगा, अरे,एक दिन तो और रह लेने दो।" किन्तु आप उसी समय कठघरेसे बाहर कर दिये गये। उस समय आप बड़े अन्यमनस्क थे। दो मुखबिर हो गये। शेष २४ अभियुक्तोंमें से श्री अशफ़ाक, श्री शचीन्द्रनाथ बख्शी, और श्री चन्द्र शेखर 'आज़ाद' जो अभी तक गिरफ्तार न किये जा सके थे, फरार करार किये गये। अब २१ व्यक्ति सेशन सुपुर्द थे। एक एक व्यक्ति पर कई कई मुक़दमें लगाये गये। अभियुक्तोंके साथ बड़ी सख्ती की गई। जिन डकैतियोंके इलज़ाम उनपर लगाये गये उनकी नकलें भी वे न ले सकते थे। अभियुक्तोंके मनके मुताबिक वकीलोंका प्रबन्ध न था। महीनों तक बिना मामला चलाये उन्हें जेलोंमें सड़ाया गया, पुलिसको मियादपर मियाद मिलती थी, और अभियुक्तोंके साथ जेलमें बड़ा नृशंस व्यवहार होने लगा। इसकी शिकायत बाहर तक पहुंची। लोगोंने अभियुक्तों के प्रति यत्र-तत्र सहानुभूति दिखाई, तो उनके भी मुचालिके लिये जाने लगे। अभियुक्त जिस समय अदालतमें लाये जाते थे, तो उनके हथकड़ियां पड़ी रहती थीं। अब, बेड़ियां पहिनाने की भी तैयारी हो रही थी। इसके विरोध में अभियुक्तोंने अनशन शुरू कर दिया। ४८ घंटे बाद समझाने बुझाने पर बड़ी मुश्किल में लोगोंने अपना अनशन तोड़ा। इस समय सेठ दामोदर स्वरूप जी की तबियत खराब होती जा रही थी। उनका कृश-गात जेल का पाशविक व्यवहार अधिक न सहन कर सका। एक दिन उनकी तबियत बहुत खराब हो गई। बीमार तो वे पहिले से ही कहे जाते थे; किन्तु जेल की दुर्व्यवस्था और असुविधाओं

के कारण उनकी बीमारी भयंकर रूप धारण करती जाती थी। एक दिन सहसा उनकी नाड़ी छूट गई और लोगों को उनकी मृत्यु का भय होने लगा। फिर भी उनके साथ कोई भी रियायत न की गई। ऐसी अवस्था में भी वे कोर्ट में लाये जाते थे। एक बार सेठजी ने वैद्यक उपचार के लिये अपनी इच्छा प्रकट की किंतु कर्मचारियों ने बिलकुल सुनवाई नहीं की, एक ओर खाने पीने की सभी अभियुक्तों को शिकायत थी, दूसरी ओर सेठ जी की इस रुग्णावस्था में अदालत में हाज़िर होने का अधिकारियों का दुराग्रह जारी था अभियुक्तों ने इसका विरोध किया। फलस्वरूप एक बोर्ड इस लिये बैठाया गया कि वह सेठजी की बीमारी के विषय में सरकार को अपनी राय दे। बोर्ड ने सरकार के पक्ष में फैसला दिया। और कहा कि सेठजी कोर्ट में हाज़िर होने के लिये उपयुक्त हैं। मजबूर होकर सेठजी कोर्ट में लाये गये। किंतु अधिक बीमार होने के कारण उनकी अवस्था अदालत में आकर और भी ख़राब होगई। उन्हें गश आगया। सेठजी की चिकित्सा प्रणाली तक के बदलने की इज़ाजत नहीं मिली थी, अतः अभियुक्तों ने अनशन शुरू कर दिया। सरकार ने हार कर उन्हें बरेली भेज दिया। किन्तु वहाँ भी उन्हें सेहत न हुई। फिर देहरादून भेजे गये। वहां भी काफी समय तक रहने के बाद कोई परिवर्तन न देख पड़ा। अन्त में १०००) रु० की जमानत और १०००) रु० के मुचालिके पर वे छोड़ दिये गये। सेठजी तब से अनेक स्थानों पर अनेक प्रकार की चिकित्सायें करा चुके हैं, किन्तु उन्हें आज तक पूर्ण आरोग्य लाभ नहीं हुआ है। [अब समाचार है कि उनपर फिर मुक़द्दमा चलाया जाने वाला है।-]

खाने पीने तथा जेल के कर्मचारियों के दुर्व्यवहार की शिकायतें अभी तक वैसी ही थीं। अभियुक्तों ने इस सम्बन्ध में

यू० पी० सरकार के होम मेम्बर के पास इस आशय का एक आवेदन पत्र भेजा कि उन्हें कुछ सुविधायें दी जायँ, और जेल-कर्मचारियों के दुर्व्यवहारमे कुछ नर्मी कीजाय। किन्तु कोई उत्तर न मिला। जेलों के इन्सपेक्टर—जेनरल से भी उन्होंने शिकायत की, वरसात का पानी उनकी कोठरियों में भरा करता था, किन्तु इसकी भी कोई सुनवाई न हुई। अधिकारी तो उन्हें हर प्रकार का कष्ट देने को तुले थे और अभियुक्त धैर्य-पूर्वक सब सहन कर रहे थे। आखिर में उन्होंने अनशन प्रारम्भ कर दिया। केवल वनवारीलाल इस व्रत में शामिल नहीं हुआ। अभियुक्तों के व्रत की हालत को छिपाने का सरकार की ओर से यहाँ तक प्रयत्न किया गया कि उनका कोई सम्बन्धी उनसे मिलने नहीं पाता था। सरकार की ओर से खिलाने पिलाने के बारे मे ज़बर्दस्ती भी की गई। किन्तु अभियुक्त अपनी बात पर अटल रहे। अन्त में सरकार झुकी। दोनों ओर से समझौता हुआ, और अनशन टूटा यह व्रत लगभग २० दिन तक रहा। इन दिनों अदालत का काम भी बन्द था।

जेलमें तो अभियुक्तों पर पूर्व निश्चित यन्त्रणायें थीं हीं,बाहर उनके सम्बन्धियों और मित्रों के साथ जो भलमन्सी कीगई वह बड़ी कारुणिक है। हर जगह पुलिस की मनमानी देखने को मिलती थी। गिरफ्तार किये जाने के बाद भी श्री शीतलासहाय श्री भूपेन्द्रनाथ सन्याल आदि के यहां से पुलिस सामान उठाले जाने में नहीं हिचकी। श्री शचीन्द्रनाथ बख़्शी के फ़रार हो जाने के कारण उनके घर की सभी मन्क़ूला और ग़ैर मन्क़ूला ज़ायदाद ज़ब्त करली गई। उनके पिता श्री कालीचरण बख्शी के घर पर रात में छापा मारा गया और कपड़ा, लत्ता, घी-चावल और दाल तक सब पुलिस उठा ले गई। उनके परिवार के सभी व्यक्ति जाड़ेमें ठिठुरते रहे किन्तु पुलिस महारानी ने कुछ परवाह नहीं की।

भारत की पुलिस इन बातों में बड़ी अभ्यस्त है। उस का यह दैनिक व्यापार है।ऐसी घटनायें केवल एक या दो जगह ही नहीं हुई, बरन सब जगहों की पुलिस एक ही सांचे की ढली है। सहारनपुर और शाहजहांपुर में भी यही हालत थी। काशी विद्यापीठमें एक विद्यार्थी केवल इस लिये गिरफ्तार किया गया कि सेठ दामोदर स्वरूप की हाज़िरी देखते समय वह भी उक्त घटनाके दिन गैर हाज़िर था। यह सब इसलिये हो रहा था कि जिस प्रकार हो सके, हर तरह की युक्तियुक्त अथवा निस्सार बातें अभियुक्तों के बारे में मालूम की जांय और गढ़ ली जांय। खैर, ये दिन भी बीत गये। सेशन कोर्टमें स्पेशल जज श्री हैमिल्टन साहब की इजलासमें मामला शुरू हुआ। उस दिन २१ मई थी। लगातार १ वर्ष तक मुक़दमा चलता रहा। अभियुक्त बेचारों के लिये १ साल तो टलुहापन्थी में ही जेल हो गई। सरकार की ओर से अभियुक्तोंके लिये पं० हरकरणनाथ मिश्र वकील नियुक्त हुए और सरकारके पक्षमें पं० जगतनारायण मुल्ला तैनात किये गये। उन्होंने बाक़ायदा १ साल तक ५००) रु० रोजाना गवर्नमेण्ट की जेबसे निकाले। पाठक देख लें कि पं० जगतनारायण मुल्ला के प्रतिरोध में अकेले मिश्र जी को अभियुक्तोंकी ओर से नियुक्त करना किस श्रेणी का न्याय है। कुछ भी हो, पं० जगतनारायण मुल्ला ने तो सरकार बहादुर से एक लाख से अधिक पुजवाया। खैर, भाई ग़रीब के भी राम हैं! यहां पं० हरकरननाथ मिश्रके अतिरिक्त अभियुक्तों की ओर से कलकत्तेके मि० चौधरी, लखनऊके श्री मोहनलाल सक्सेना, श्री० चन्द्रभाल गुप्त, श्री कृपाशङ्कर हलेजा आदि वकील थे। इन्होंने बड़ी उदारता, लगन, त्याग और तत्परता के साथ वकालत की। सेशन-कोर्ट में अभियुक्त अपनी सफाई में बहुत से गवाह पेश करना चाहते थे। किन्तु बादमें यह तय हुआ कि

बहुत से गवाह पेश करनेसे कोई लाभ नहीं होगा। इस लिये थोड़े ही गवाह पेश किये गये। अभियुक्तोंने अनेक मिन्नतें और प्रार्थनायें कीं कि, उनका मुकद्दमा हेमिल्टन साहबकी अदालतसे मुन्तकिल किया जाय, किन्तु कौन सुनता है? इस तरह की निरंकुशता देख अभियुक्तों को और भी निराशा हुई। श्री० रामप्रसाद 'बिसमिल' ने २६ जून १९२६ को एक दरख्वास्त इसी आशय की दी, जो गुप्त रक्खी गई। मालूम नहीं उसका क्या हुआ। बाकायदा नकल मांगने पर उसकी नकल देने से भी साफ इन्कार कर दिया गया। मामला इन्हीं हुजूर की अदालतमें चलता रहा।

मामला चल रहा था। बड़ी निरंकुशता जारी थी। किन्तु देशभक्ति और मर मिटनेकी तमन्ना ने अभियुक्तोंका जेल-जीवन भी आमोदमय बना रक्खा था। अभियुक्तोंका कचहरी आने जानेका दृश्य दर्शनीय होता था। वह वीर-बांकुरे, राजहंस जैसे राजकुमार और तपस्वी जिस समय मोटर से उतरते थे, मालूम होता था मूर्तिमान सुरेश देवताओं सहित इहलोक लीला देखनेके हेतु आये हैं। पं० रामप्रसाद 'बिसमिल' के पीछे जब सब आत्मायें 'वन्देमातरम्' गाती हुई चलती थीं - उस दृश्य में एक अलौकिक छटा थी। जिस के वर्णन करने के लिये तुलसीदासजी के शब्दों में यही कहना पड़ता है कि "गिरा अनयन नयन बिनु बानी।" धन्य हैं वे आंखें जिन्होंने जी भर के उन की मस्तानी अदा को निरखा। उन के मोटर से उतरते ही 'वन्देमातरम्' 'भारत माताकी जय' 'भारत प्रजातन्त्रकी जय' आदि के घोषसे कचहरीका वायुमण्डल पवित्र हो जाता था। उनके देखनेके लिये और मधुर गीत सुननेके लिये हजारोंकी भीड़ इकट्ठी होती थी। अधिकारियोंके हृदय इस नादको सुन कर दहल उठते थे। बेचारे क्या करते! एक दिन कहीं ताव मे आकर एक कान्स्टेबल महाराजने एक अभियुक्तके हाथ लगाया

ही था कि स्वाभिमानी मस्ताना की आंखों में खून उतर आया उन से न रहा गया और एक ने कान्सटेबल के थप्पड़ मारा, फिर क्या था, दूसरी आफ़त खड़ी हुई। एक नया मुक़दमा पुलिस ने जिलाधीश (*City Magistrate*) के यहां दायर कर दिया। किन्तु फिर आपस में समझौता हो गया।

अदालत का दृश्य तो एक खास खूबसूरती रखता था। एक ओर पंडित रामप्रसाद, श्री० योगेश बाबू, श्री० विष्णुशरण दुबलिस, श्री० सचीन और श्री० सुरेश बाबू अपनी स्वाभाविक स्वाभिमानता मिश्रित गम्भीरता से मुक़द्मेको सुनते थे, तो बग़ल में ही मन्मथ, राजकुमार, रामदुलारे, रामकिशन, प्रेमकिशन इत्यादि की चुहलबाजियों के मारे कोर्ट की नाक में दम था! उनके इस दृश्य को देखने के लिये अदालत के आस पास खुफ़िया पुलिस के दूतों की भरमार होते हुए भी बहुत से लोग इकट्ठे रहते थे। कचहरी में कोई प्रेस रिपोर्टर ठीक ठीक नहीं देख पड़ता था। यदि कभी कोई अच्छा रिपोर्टर आ भी गया, तो पुलिस महारानी के मारे विचारे की आफ़त थी। हां, *India Daily Telegraph* ने कुछ मनोयोग के साथ इस ओर काम किया। शाम को जब इन लोगों की मोटरलारी निकलती, तो सड़क के दोनों ओर जनता काफी तादाद में उनका, बेड़ी की झङ्कार में मस्ताना गाना सुनने को खड़ी रहती थी। उनके गानों का वहां इतना आदर हुआ कि एक पैसे से लेकर दो दो आने में उनके एक एक गाने की प्रति बिकती देख पड़ती थी।

कुछ शब्दों में उनके जेल की दिनचर्या भी सुन लीजिये। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि लखनऊ जेल के समस्त क़ैदी इन शहीदाने-वतन की बड़ी श्रद्धा करते थे। जितने दिन तक ये लोग उस जेल में रहे, सब क़ैदियों को भी अपने अपने दुख-दर्द भूल से गये थे। यहां पर ये लोग मस्ती से रहते थे, मगर

कोई कोई भावुक कैदी इनकी पवित्र आत्मा और भविष्य पर आठ आठ आंसू रोता भी था। इन शहीदों के चरित्र-बल से वहां पर ऐसा वातावरण पैदा कर दिया कि प्रत्येक कैदी की हार्दिक इच्छा अनुभव होने लगी कि वह इन्हें हर प्रकार यथाशक्ति आराम दें। इनकी हर ज़रूरियातों को सब क़ैदी मुहय्या करने को कटिबद्ध रहते थे। श्री सुरेश और श्री राजकुमार के गाने से तो समस्त क़ैदी क्या, जेल के कर्मचारीगण तक मुग्ध थे। इन लोगों के साथ में ताश, हारमोनियम, इसराज इत्यादि भी थे। शाम को इनका कीर्त्तन जमता था, कभी कबड्डी खेलते थे, तो कभी कोई सदस्य अपनी नई शैतनी सबके सन्मुख पेश करता था। बड़े आनन्द के दिन थे। केवल हँसी खेल ही नहीं। सुरेश बाबू की मण्डली में बड़े गम्भीर विषयों पर मनन और वादविवाद, भी हुआ करता था। (*Spiritualism*) आध्यात्मवाद (*Realism*) वस्तुवाद और (*Idealism*) आदर्शवाद-सभी का समय समय पर विवेचना हो जाती थी। शचीन धर्मवाद और आध्यात्म के समन्वय का प्रतिपादन करना चाहते थे, तो पंडित जी देश के लिये सब से यह कहला कर मानते थे कि "अब दीन है तो यह है ईमान है तो यह है।" कभी कभी इन विवादों में प्रान्तिकता भी आजाती थी, किन्तु पंडित जी इन सब बातों पर तुरन्त पानी फेर देते थे। इन लोगों में कुछ शाकाहारी थे, तो कुछ मच्छी भात वाले भी। खान पान में कभी कभी कुछ बंगाली पर आही जाता था, किन्तु ज्यादती कभी नहीं हुई, उसमें भी लोग आनन्द ही अनुभव करते थे। रविवार के दिन सब अभियुक्त नियम पूर्वक रहते थे। यह सब के पूजा का दिन था। आज सब लोग विशेष प्रसन्न देख पड़ते थे। श्री राजकुमार और रामदुलारे गाना बड़ा अपूर्व जानते हैं, उनका गाना शुरू होता तो समा बंध जाता था। खाने के वक्त आज सबसे अच्छा खाना बनता

सुरेश बाबू इस काम के लिये आगे आते। एक बार रविवार, के दिन उन्होंने बाईस भांति की तरकारियां बनाई और सब ने मिल कर आनन्द पूर्वक भोजन किया। करीब करीब अब सभी व्यक्तियों ने जेल जीवन में अपना कार्यक्षेत्र अपने हाथ बना लिया था। अब यदि इन पर कभी कोई ज्यादती होती तो सुरेश तथा सचीन बाबू अपनी स्वभावोचित धैर्य–शीलता से सब को समझाया करते। पंडित जी तथा श्री० दुबलिस तो अपने स्वाभिमान का सदैव ख्याल रखते नवयुवक लोग तो अपनी चुहलबाजियों के आवेग में मार पीट भी कर बैठते थे। किन्तु इतना होते हुए भी सब में अनुशासन था, सब अपने से बड़ों की आज्ञा शिरोधार्य करते थे। श्री० प्रणवेश चटर्जी का जेल–जीवन बिलकुल निराला था। हर वक्त उनकी आंखें अलसाई हुई रहती थीं चित्त प्रति पल सन्ताप से भरा रहता था. मालूम होता था, आप पर बहुत बड़ा दुर्व्यवहार और ज्यादती की गई है। आप बड़े भावुक हैं और सदैव अप्रसन्न रहते थे। ठाकुर रोशनसिंह सदैव निर्लिप्त और निर्विकार रहे। उनके रहन सहन से यह सब को भासित होता था कि आप हमेशा कुछ सोचा करते हैं। अशफाक-उल्ला खां का जीवन हर दिशा में आदर्श था। आप बड़े रसिक और उर्दू के बड़े अच्छे कवि थे। श्री० अशफाक उल्ला और श्री० शचीन बख्शी पहिले बहुत दिन तक फरार रह चुके थे अतः जब यह दोनों सज्जन दिल्ली और भागलपुर में क्रमशः पकड़े गये तो इन्हें पुलिस ने बड़ा कष्ट दिया और इनके साथ कई प्रकार की ज्यादतियां की गईं। श्री अशफाक उल्ला बड़ी ही मस्त तबियत के आदमी थे सभी इन्हें चाहते थे। कभी कभी ये शेरों में अईनुद्दीन (*Special Magisttate*) साहब को फटकार दिया करते थे। कहते हैं कि अईनुद्दीन साहब का बचपन में अशफाक उल्ला खां के परिवार से सम्बन्ध था। इस लिये कभी

कभी उस बात का जिक्र करते हुए श्री अशफ़ाक उन्हें बनाते बहुत थे। बनवारीलाल ने इन दिनों अपना बयान वापिस ले लिया था। अतः वह बड़ा अनुतप्त और दुखी रहता था। श्री भूपेन सन्याल कुछ क्षीण अवश्य हो गये थे। कचहरी में एक बार श्री पार्वती देवी, भाई परमानन्द और मौ० शौकतअली भी मुकदमा देखने गए। सब से हंसोड़ श्री राजेन्द्र लहरी थे यहां तक कि वे बड़े से बड़े कर्मचारी के सम्मुख भी मीठी चुटकियां लेने से बाज नहीं आते थे। एक बार जब श्री सेठ दामोदरस्वरूप जी स्ट्रेचर पर अदालतमें लाये गये तो अभियुक्तों को बड़ा भारी मानसिक आघात पहुंचा। कटघरे के अन्दर से ही एक ओर पंडित रामप्रसाद जी शेर की तरह हिन्दी में दहाड़ दहाड़ कर हेमिल्टन साहब का सत्कार कर रहे थे। दूसरी ओर से दुवलिस जी अंग्रेजी में ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के न्यायविधान की धज्जियां उड़ा रहे थे। और बीच बीच में बड़े उत्तेजनापूर्ण शब्दों में उस दिन की अदालत की कार्यवाही बन्द कर देने को उद्यत थे। हार कर उस दिन की अदालत उठी। फिर दुबारा सेठजी उस अवस्था में अदालत में नहीं लाए गए। अभियुक्तों की विजय हुई। जेल के अन्दर अभियुक्तों ने प्रायः सभी त्योहार बड़े उत्साह से मनाए। सरस्वती पूजा, बसन्त पंचमी और होली अभियुक्तों की खास तौर से बहुत अच्छी हुई। बसन्त के दिन जब सबों ने मिल कर यह गाना गाया तो सबों के हृदय में देशभक्ति की हिलोरें उठने लगीं:—

मेरा रंग दे बसन्ती चोला
इसी रङ्ग में रङ्ग के शिवा ने मां का बन्धन खोला।
यही रङ्ग हल्दीघाटी में खुल कर के था खेला।
नव बसन्त में भारत के हित वीरों का यह मेला।
मेरा रंग दे बसन्ती चोला

इनके त्यौहारों में कितनी अपूर्वता थी। बसन्त और होली का मूल्य और महत्व येही अनुभव कर सके होंगे। आनन्द का दिवस था। नौकरशाही के हाथों हमारा भविष्य अन्धकार-में तो निश्चित ही है। बहुतों का इस होली और बसन्त से अन्तिम मिलन था, जिसकी कल्पना वे स्वयं भी करने लगे थे। अतः यह राग-रंग स्वाभाविक था। इस राग-रंग ने सबमे एक अद्भुत कवित्व-शक्ति पैदा कर दी थी। उनकी रची हुई सभी कविताओं का ज़िक्र करना यहाँ पर असम्भव प्रतीत होता है: कारण वे सभी रचनायें जेल के बाहर तक न पहुँच सकीं। हाँ, कुछ गाने जो अभियुक्त कचहरी जाते समय गाया करते थे, इस प्रकार हैं: —

(१)

सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है जोर कितना बाज़ुये कातिल में है।
रहबरे राहे मुहब्बत रह न जाना राह में,
लज़्ज़ते सहरान वर्दी दूरिये मञ्जिल में है।
वक़्त आने दे बता देंगे तुझे ऐ आसमाँ,
हम अभी से क्या बतायें क्या हमारे दिल में है।
आज फिर मकतल में क़ातिल कह रहा है बारबार,
क्या तमन्नाय शहादत भी किसी के दिल में है।
ऐ शहीदे मुल्को-मिल्लत! मैं तेरे ऊपर निसार,
अब तेरी हिम्मत की चरचा ग़ैर की महफ़िल में है।
अब न अगले वलवले हैं और न अरमानोंकी भीड़,
एक मिट जानेकी हसरत, अब दिले 'बिस्मिल'में है।

(२)

भारत न रह सकेगा, हरगिज़ गुलाम ख़ाना।
आज़ाद होगा होगा, आता है वह ज़माना॥

खूं खौलने लगा है, हिन्दोस्तांजियों का।
कर देंगे ज़ालिमों का, हम बन्द ज़ुल्म ढाना॥
क़ौमी तिरंगे झंडे, पर जाँ निसार अपनी।
हिन्दू, मसीह, मुस्लिम, गाते हैं यह तराना॥
अब भेड़ और बकरी, बन कर न हम रहेंगे।
इस पस्त हिम्मती का, होगा कहीं ठिकाना॥
परवाह अब किसे है, जेल औ दमन की प्यारो।
एक खेल होरहा है, फाँसी पे झूल जाना॥
भारत वतन हमारा, भारत के हम है बच्चे।
माता के वास्ते हैं, मंजूर सर कटाना॥

अन्य गीतों का हम यहाँ पर स्थानाभाव के कारण वर्णन करने में असमर्थ हैं; कुछ ज़िक्र किये देते हैं।

(१) अपने ही हाथों से सर कटाना है हमें।
मादरे हिन्द को सर भेंट चढ़ाना है हमें॥
(२) एक दिन होगा कि हम फाँसी चढ़ाये जायेंगे।
नौ जवानों देखलो हम फिर मिलने आयेंगे॥
(३) हमने इस राज्य में आराम न कोई देखा।
देखा जो ग़रीबों को तो रोते देखा॥

आख़िर में मुक़द्दमे की सुनवाई खत्म हुई। ६ अप्रैल सन् १६२७ को सेशन जज मामले का फ़ैसला सुनाने को थे। उस दिन पुलिस का पहरा सब दिनों से कहीं अधिक कड़ा था। बहुत थोड़े व्यक्ति भीतर पहुंच पाये थे। क़रीब ११॥ बजे अभियुक्त अपनी मस्तानी अदा से 'सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है', गाते हुए मोटर लारियों से उतरे। अदालत में घुसते ही 'बन्देमातरम्' के नाद से उन्होंने भवन को गुंजा दिया। फ़ैसला सुनने के लिये सब शांति भाव से खड़े हो गये। मस्तकों पर

रोली का तिलक लगा था। अदालत के चारों ओर पुलिस और सवार गश्त लगा रहे थे। जनता के बाहर खड़े होने से ही जज महोदय का दिल धड़कने लगता था। उस दिन पं० जगतनारायण जी कचहरी नहीं आये। अन्य सरकारी वकील भी मुंह छिपाकर चल दिये। अभियुक्तों के मुख पर किसी प्रकार का विकार न था, प्रत्युत उनमें मुस्कराहट थी। फ़ैसला बहुत लम्बा था। फ़ैसले में ब्रिटिश सरकार का तख्त उलट देने के व्यापक षड्यन्त्र का जिक्र करने के बाद प्रत्येक अभियुक्त पर लगाये गये भिन्न भिन्न आरोपों पर विचार किया गया था और तदनुसार सबको सज़ायें सुनाई जाने लगीं। अभियुक्तों के सम्बन्ध में जज महोदय ने स्पष्टतया कहा कि वे अपने व्यक्तिगत लाभ के लिये इस कार्य में प्रवृत्त नहीं हुए। पर किसी अभियुक्त ने न तो पश्चात्ताप ही किया और न इस बात का वचन दिया कि भविष्य में इस प्रकार के आन्दोलनों में भाग न लेंगे। सेशन जज की यह इच्छा थी कि यदि अभियुक्त ऐसी कुछ बातें कहदें, तो उनके साथ रियायत की जा सकती है। किन्तु अभियुक्तों के लिये ऐसा करना अपने ध्येय से डिग जाना था। फिर क्या था, सज़ायें सुनाई जाने लगीं। अभियुक्तों पर १२१ अ, १२० ब और ३९६ धारायें लगाई गई थीं। इनके अनुसार निम्न लिखित सज़ायें उन्हें मिलीं।

श्री रामप्रसाद "बिस्मिल"—पहली दो धाराओं के अनुसार आजन्म कालापानी, तीसरी के अनुसार फांसी।

श्री० राजेन्द्रनाथ लाहिरी - पहिली दो धाराओं के अनुसार आजन्म कालापानी, तीसरी के अनुसार फांसी।

श्री० रोशनसिंह—पहली दो धाराओं के अनुसार ५-५ वर्ष की

सख़्त क़ैद और तीसरी के अनुसार फांसी।

श्री० बनवारीलाल—(इकबाली मुलज़िम) प्रत्येक धारा के अनुसार ५, ५ वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री० भूपेन्द्रनाथ सन्याल —(इकबाली मुलज़िम) प्रत्येक धारा के अनुसार ५, ५ वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री० गोविन्द चरणकार —१० वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री० मुकुन्दीलाल —१० वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री० योगेशचन्द्र चेटर्जी —१० वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री० मन्मथनाथ गुप्त १४ वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री० प्रेमकिशन खन्ना —५ वर्ष की शख़्त क़ैद।

श्री० प्रणवेश चेटर्जी —५ वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री० राजकुमार सिन्हा १० वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री० रामदुलारे—५ वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री० रामकिशन खत्री – १० वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री० रामनाथ पांडेय –५ वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री० शचीन्द्रनाथ सन्याल—आजन्म कालापानी।

श्री० सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य—सात वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री० विष्णु शरण दुबलिस—सात वर्ष की सख़्त क़ैद।

श्री हरगोविन्द और श्री शचीन्द्रनाथ विश्वास इसलिये छोड़ दिये गये कि उनके खिलाफ़ किसी बात का प्रमाण नहीं मिला। इस प्रकार ये बेचारे डेढ़ साल तक व्यर्थ ही जेलों में सड़ाये गये। मुखबिर बनारसीलाल और इन्दु भूषण मुखबिरी के इनाम में छोड़ दिये गये। सेठ दामोदर स्वरूप बीमार थे इसलिये उनका मामला स्थगित रहा। *

---

* गत अगस्त महीने (१९२८ ई० में सरकार ने सेठ जी पर से अभियोग उठा लिये और सेठ जी बिल्कुल छोड़ दिये गये।

फ़ैसले में अन्य बातों के साथ साथ एक बात यह भी कही गई कि फांसी की सज़ा चीफ़ कोर्ट की स्वीकृति से दी जायगी और मामले की अपील की मियाद ७ दिन होगी। इसी मियाद के अन्दर यदि अपील करना है तो करदी जाय। जिस समय फ़ैसला सुनाया जा रहा था, कोर्ट का वह दृश्य बड़ा ही अभिनव था। फांसी, कालापानी आदि लम्बी लम्बी सज़ायें सुनाई जा रही थीं। रोशनसिंह के लिये फांसी की आज्ञा बिलकुल अनहोनी बात थी। उन्होंने हंसकर कहा 'यह तो होना ही था।' जब श्री राजेन्द्र को फांसी की आज्ञा मिली, तब उन्हें जज महोदय के इस निष्कर्ष पर हंसी आ गई। बनाते हुए वे हेमिल्टन साहब को धन्यवाद देने वाले थे। फिर श्रीहजेला जी से आपने कहा कि हम आपके बड़े कृतज्ञ हैं और हमने जिस दिन यह व्रत लिया, तब समझ लिया था कि यही एक दिन होने को भी है, फिर हमें किसी प्रकार का परिताप कैसा? यह मेरा पुनर्जीवन है। फैसले सुन चुकने के बाद पहिले सब छोटे सदस्य आगे बढ़े और सब ने पं० रामप्रसाद जी के पैर की धूल अपने अपने मस्तकों पर ली। फिर उन्होंने फांसी की सज़ा पाये हुए रोशनसिंह तथा राजेन्द्र लाहिरी के भी पैर छुये। अभियुक्तों को जो अभी तक लगभग डेढ़ सालसे एक साथ थे, अलग अलग होनेकी आशङ्का हुई। कुछ से चिर-वियोग होना था, अतः सब में एक विचित्र भाव हिलोरें मार रहा था। सब अभियुक्त एक दूसरेसे गले मिले और जब अदालत से चलने लगे, तब अन्तिम बार सब ने मिल कर 'बन्देमातरम्' का नाद किया। कमरे के बाहर निकलते समय सब के आगे श्री० रामप्रसाद थे। एक बार सुनाई पड़ा 'हैफ़ जिस पै कि हम तैयार थे मर जाने को।' दूसरी बार गम्भीर घोष हुआ और वायुमण्डल गूंज उठा।

उन्होंने स्वार्थके लिये डाके नहीं डाले, तब यह सलूक कि उनको बन्दरकी शकल बना कर जेलों में रखा गया, सब बातों में मामूली डकैतों कैसा बर्ताव किया जाने लगा और विरोध करने पर अभियुक्त कालकोठरियों में बन्द किये जाने लगे काकोरी के अभियुक्त शिक्षित, सभ्य और भले घरों के नवयुवक हैं। उनकी स्थितिके अनुसार उनके साथ जेलमें व्यवहार किया जाना नितान्त आवश्यक था। स्वयं होम मेम्बर साहब तक हैसियत के अनुसार सुविधा देनेकी बात पहिले स्वीकार कर चुके थे,किन्तु जब समय आया तो गोता लगा गये अथवा थूककर चाट गये बङ्गाल आदि प्रान्तोंमें ऐसे बंदियोंके साथ विशेष बर्ताव करनेका प्रबन्ध है, मगर युक्त प्रांतकी एक बात ही निराली है। यहां इन दलीलों और अपीलोंकी कोई सुनवाई न हुई। इसी इधर उधरकी कोशिशमें लगभग डेढ़ महीना बीत गया। सरकार टससे मस न हुई। अभियुक्तोंकी हालत बहुत ही गिर गयी। अनेक अभियुक्त मृत्यु शय्यापर पड़ गये। अब शिथिलता करनेका समय न था। अभियुक्तोंके रिश्तेदारोंमें बड़ी चिन्ता थी। अभियुक्त राजकुमार सिंह की माता ने तो जब से अनशन का हाल सुना तब से खाना ही छोड़ दिया। इस से वे बहुत कमजोर हो गयीं। एक दिन तो वे बेहोश हो गयीं और कई घण्टे तक उसी अवस्थामें रहीं। यह दशा देख कर श्री गणेशशङ्कर विद्यार्थी जेलों में अभियुक्तोंसे मिल कर उनको अनशन तोड़नेके लिए समझाने लगे। पहिले तो कुछ जेलोंके अधिकारियोंने यह समझा कि कहीं ये अभियुक्तोंको और न भड़कायें; इसलिए इजाज़त नहीं दी। परन्तु एकाध जगह का उदाहरण उन के सामने आया, तब इन्हें जेलों में अभियुक्तोंसे मिलनेकी इजाज़त मिल गयी। फिर भी एकाध स्थान में ये नहीं जा सके। किन्तु इनके इतने ही परिश्रमने काफ़ी काम किया। इन्होंने बरेली, फतेहगढ़, नैनी

आदि कई जेलोंके अभियुक्तोंसे बातचीत की और उन्हें राज़
कर लिया। इस प्रकार अनशन का अन्त करा कर श्री गणेश
शङ्कर जी अभियुक्तों को स्थायी रूप से विशेष व्यवहार व
सुविधा दिलानेका फिर प्रयत्न करते रहे। इसी बीचमें अखिल
भारतीय कांग्रेस कमेटीने यह प्रस्ताव पास किया कि काकोरी के
कैदियों के साथ विशेष व्यवहार किया जाय। बादको मद्रास
कांग्रेस अधिवेशनमें भी इस आशयका एक प्रस्ताव पास हुआ।
इस प्रस्ताव से इस मामले ने, जो अभी तक केवल प्रान्तीय रूप
धारण किये था, सार्वदेशिक रूप धारण कर लिया। २२ जून
यह मामला युक्त प्रान्तीय कौंसिल में ज़ोरों के साथ उठाया गया
सवालों का तांता बांध दिया गया। किन्तु सरकार की ओर
किसी बात का उचित और सन्तोषजनक उत्तर नहीं दिया गया
होम मेम्बर ने इन सवाल जवाबों में साफ तौर से यह एलान क
दिया कि उनके साथ दुबारा (Habitual) कैदियों का सा
बर्ताव किया जायगा, वे उसी श्रेणी मे रखे गये हैं। इस बात
कौंसिल के स्वराजी सदस्यों को बड़ा असन्तोष हुआ। प
स्वराजी सदस्य ने यह प्रस्ताव पेश करना चाहा कि काकोरी
कैदियों के साथ विशेष वर्ताव किया जाय। परन्तु गवर्नर मह
दय ने इस प्रस्ताव के पेश करने की इजाज़त ही नहीं दी। उ
दिन के सवाल जवाब में यह भी मालूम हुआ कि काकोरी
मामले में सरकार दो लाख रुपये खर्च कर चुकी है। प्रान्त
कार्यकर्त्ताओं के पास यही एक अन्तिम अस्त्र था, जिससे
काकोरी के अभियुक्तों के साथ विशेष व्यवहार करने के लि
सरकार पर दबाव डाल सकते थे। किन्तु गवर्नर साहब
स्वेच्छाचारिता के कारण वह अस्त्र भी निष्फल हुआ। अनश
तो किसी प्रकार टूट गया, मगर विशेष अधिकार उन्हें अभी त

जो कुछ हो जाय थोड़ा है।

सेशन कोर्ट का फैसला हो चुकने के बाद अभियुक्तों ने अपील करना निश्चय किया। इस निश्चय के अनुसार श्री बनवारीलाल, श्री भूपेन्द्रनाथ सन्याल और श्री० शचीन्द्र-नाथ सन्याल के अलावा अन्य अभियुक्तों ने सेशन जज के फैसले के खिलाफ़ अपील दायर की। उधर सरकार की ओर से सजा बढ़ाने के लिये लिखा पढ़ी की गई। दोनों मामले साथ साथ चीफ़ कोर्ट में चीफ़ जस्टिस सर लुई स्टुवर्ट और जस्टिस मोहम्मद रजा के सामने पेश हुये। १८ जुलाई को अपील प्रारम्भ हुई। सरकार ने अपनी पैरवी के लिये तो यहां भी पं० जगतनारायण को बुलाया किन्तु फांसी की सजा पाये हुये अभियुक्त श्रीरामप्रसाद, श्रीराजेन्द्र और श्री रोशन सिंह के मामले की पैरवी के लिये क्रमशः श्री लक्ष्मीशङ्कर मिश्र, श्री एन०सी० दत्त और श्री जयकरणनाथ मिश्र को नियुक्त किया। अभियुक्त चाहते थे कि उनके लिये किसी अच्छे वकील का प्रबन्ध किया जाय। उन्होंने अपना यह विचार प्रकट भी किया किन्तु सुनता कौन है! उन्हें सख्त सजा दिलाने के लिये तो सरकार ने दो लाख रुपये खर्च कर दिये और इस अपील में और भी खर्च करने को तैयार हुई; किन्तु उन फांसी पर लटकने वालों के लिये उसने थोड़ी सी रकम भी खरचना मन्जूर नहीं किया। दिखावे के लिये एक बड़े वकील से, जिसे अभियुक्त चाहते थे, कुछ बात चीत भी की गई किन्तु महनताना इतना कम दिया जा रहा था कि उन सज्जन को साफ २ शब्दों में सरकारी आदमी से यह कहना पड़ा कि तुम काकोरी के कैदियों के साथ किसी किस्म का सलूक करना नहीं चाहते, किन्तु चाहते यह भी हो कि बदनामी 'भी न हो।' अभियुक्त रामप्रसाद ने पं० लक्ष्मी शङ्कर मिश्र की मारफत अपने मामले की पैरवी कराने से इन्कार

कर दिया । उन्होंने कहा कि या तो कोई अच्छा वकील नियुक्त किया जाय या मुझे स्वयं पैरवी करने दिया जाये । किंतु चीफ कोर्ट का हुक्म हुआ कि दो में से एक भी न मानी जायगी और पं० लक्ष्मीशङ्कर हो मामले की पैरवी करेंगे, यह भी सरकारी रिआयत है जो वह अपने खर्च से उनके लिये वकील दे रही है। ग़रज़ यह कि जिस प्रकार सरकार ने चाहा, उसी प्रकार अपील की सुनवाई हुई। दौरान अपील में अभियुक्त श्री प्रणवेश चेटर्जी के भाई ने अपने भाई की ओर से एक दरख्वास्त दी जिसमें बहुत से अपराध स्वीकार कर लिये और अपील वापिस लेते हुये अपनी ग़लतियों पर अफ़सोस किया और मामला चीफ कोर्ट के हाथों में दीन भाव से सौंप दिया। इस अपील की सुनवाई २ अगस्त को खतम हो गई। किन्तु फैसला उसदिन नहीं सुनाया गया। इसी बीच में श्री अशफाक़ उल्ला खां की अपील को भी सुनवाई हुई। श्रीशचीन्द्रनाथ बख्शी ने अपील नहीं की थी । १२ अगस्त को सबका फैसला एक साथ ही सुना दिया गया। इसमें सेशन जज द्वारा दी गई सजाओं में परिवर्त्तन किया गया। श्री० रामप्रसाद, श्री० राजेन्द्र लहरी, श्री० रोशनसिंह और श्री० अशफ़ाक़उल्ला की फांसी की सजायें क़ायम रहीं। श्री०जोगेशचैटर्जी श्री०गोविंद चरणकार, श्री० मुकुन्दीलाल की सजाएं बढ़ाकर दस दस वर्ष की कैद से आजन्म कालापानी की करदी गईं। श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य और श्री विष्णुशरण दुबलिस की सजाएं सात-सात वर्ष से बढ़ाकर दश-दश वर्ष की करदी गईं। श्री रामनाथ पाण्डेय की सजा घटा कर ५ वर्ष से ३ वर्ष करदी गई और श्री प्रणवेश की सज़ा घटा कर ५ वर्ष से ४ वर्ष की गई। शेष अभियुक्तों की सजाएं पूर्ववत् ही बनी रहीं।

इस फैसले से प्रान्त के कार्यकर्त्ताओं में और भी असन्तोष और क्षोभ हुआ। डा० मनजीतसिंह एम० एल० सी० ने कौंसिल

के आगामी अधिवेशन में इस आशय का प्रस्ताव पेश करने की
सूचना दी कि फांसी की सजा पाये हुए लोगों की सजाएँ कम
कर के आजन्म काले पानी की सजाएँ करदी जांय। फांसी
१६ सितम्बर को होने वाली थी । इस बीच में कौंसिल का
अधिवेशन नहीं हो रहा था। यह आशङ्का थी कि कहीं ऐसा
न हो कि कौंसिलमें प्रस्ताव पेश करने के पहिले ही इनको
फांसी पर टांग दिया जाय। इसलिए ठाकुर मनजीतसिंहने
एसेम्बलीके सदस्यों को भी एक पत्र लिखा, जिसमें सजा
घटवानेका उद्योग करनेकी प्रार्थना की और यह भी कहा कि
ऐसा उद्योग किया जाना चाहिए कि युक्त प्रान्तीय कौंसिल की
आगामी बैठक तक उन की फांसी रुक जाय, ताकि मैं अपना
प्रस्ताव कौंसिल में पेश कर सकूं। एक ओर तो यह उद्योग
किया गया और दूसरी ओर प्रान्तीय कौंसिल के मेम्बरांने
गवर्नर साहब के पास एक आवेदन—पत्र भेज कर फांसी पाये
हुए अभियुक्तों पर, उनकी युवावस्थाके नाम पर, दया दिखाने
की प्रार्थना की। गवर्नर साहब का शासनकाल समाप्त हो चुका
था। वे शीघ्र ही जाने वाले थे । इसलिए मेम्बरोंको आशा थी
कि शायद वे चलते-चलते इतना सलूक कर जायं । किन्तु
उनकी सब आशाएँ दुराशा मात्र साबित हुईं और गवर्नर
महोदय ने दया प्रार्थना अस्वीकार करदी । इसी प्रकार की एक
दया-प्रार्थना एसेम्बली और स्टेट कौंसिल के सदस्यों ने वायस
राय से भी की थी किन्तु उन्होंने भी इसी निर्दयता के साथ
उसे अस्वीकार कर दिया । हां, इस लिखा पढ़ी में इतना
जरूर हुआ कि फांसी की पहिली तिथि १६ सितम्बर टल गई
और उस दिन अभियुक्तों को फांसी नहीं हुई । इसके बाद
फांसी देने के लिये ११ अक्टूबर की तारीख नियत की गई।
अभियुक्तों ने सरकार के मनोभाव जान ही लिये थे, इस लिये

यहां से कुछ होता न देख उन्होंने प्रीवी – कौंसिल में अपने मामले की अपील करने का विचार किया। उन्होंने अपना यह विचार सरकार पर प्रकट किया और इसलिए उन्हें अपील का मौका देने के लिये फांसी की दूसरी तारीख भी टल गई। अङ्गरेजी सल्तनत में न्याय कितना महगा पड़ता है, यह किसी से छिपा नहीं। इतने ही मामले में अभियुक्त बहुत बड़ी अर्थिक हानि उठा चुके थे। घर के लोग सगे-सम्बन्धी सब परेशान हो गए थे। फिर भी इस आशा से कि शायद वहां न्याय हो, इन्होंने लम्बा खर्च बरदाश्त करके भी अपील करने का ही निश्चय किया। येन केन प्रकारेण धन का प्रबन्ध कर के श्री पोलक महाशयको, जो इङ्गलैण्ड में थे। मामले के कागज़ात सौंपे गए। वहां पर एक़ बैरिस्टर की मारफत यह अपील प्रीवी कौंसिल में दायर की गई, किन्तु प्रीवी कौंसिल के न्यायाधीशों ने इसे इस योग्य भी न समझा कि इस की सुनवाई की जाये। उन्हों ने उस पर विचार करना अस्वीकार कर दिया।

२६ अक्टूबर को प्रान्तीय कौंसिल में भी काकोरी के कैदियों का प्रश्न आया। पं० गोविन्द वल्लभपन्त ने सरकार को खूब आड़े हाथों लिया। बहुत देर तक प्रश्नोत्तर होते रहे। किन्तु बेहया सरकार टस से मस नहीं हुई।

अब सारा खेल खतम हो चुका था। अपीलें की जा चुकी थी, कौंसिल में प्रश्न छेड़े जा चुके थे। गवर्नर से दया-प्रार्थना की जा चुकी थी, वायसराय से भी सजा घटाने की प्रार्थना की जा चुकी थी; सम्राट के पास भी प्रार्थना पत्र भेजे जा चुके थे; जो उपाय शक्ति के अन्दर थे' वे सब किये जा चुके थे। किन्तु सभी जगह केवल शून्य ही हाथ आया। १६ दिसम्बर को अभियुक्तों को फांसी पर लटका देना निश्चय हो गया। प्रान्त भर

में वड़ी बेचैनी पेदा हो गई १७ दिसम्बर को प्रान्तीय कौंसिल में पं० गोविन्दवल्लभ पन्त ने फिर इस मामले को उठाया। उन्होंने प्रेसीडेण्ट से प्रार्थना की कि सब काम बन्द करके इस मामले पर विचार किया जाये। पहिले प्रसिडेण्ट महाशय इस प्रार्थनाको अस्वीकार किये देते थे, किन्तु तीन वजेके करीब जब मेम्बरों ने उन से फिर प्रार्थना की, तब वे राजी हुए; किन्तु उस दिन तीन वजे के कुछ वाद ही सरकारी काम समाप्त हो जाने पर डिप्टी प्रेसिडेण्ट ने, जो उस समय प्रेसिडेण्ट का काम कर रहे थे, कौंसिल की बैठक सोमवार तक के लिए स्थगित कर दी। सोमवार को सवेरे ही फांसी का समय था। इस लिए मेम्बरोंमें वड़ी खलबली मच गई। उन्होंने होम मेम्बर नवाब साहब छतारी तक के दरे-दौलत की खाक छानी, किन्तु कोई सुनवाई न हुई और प्रान्तीय कौंसिल में, एक शब्द कहने का मौका दिये विना ही प्रान्तके चार होनहार नवयुवक फांसी के तख्ते पर टांग दिये गये!

अन्त में सोमवार १६ दिसम्बर १६२७ के हत्यारे दिन ने अपना मुंह दिखाया। श्री० राजेन्द्र लहरी अपने साथियों से दो दिन पहिले ही—१७ दिसम्बर को ही—अपने अमूल्य प्राण—दान से गोंडाके रक्त—पिपासु फाँसीके तख्ते की तृषा बुझा चुके थे। १६ दिसम्बर को शेष तीनों वीरों ने भी मातृ—मन्दिरकी वलिवेदी पर अपने अपने बहुमूल्य शीश चढ़ा दिये। सब में एक अवर्णनीय गम्भीरता थी। जननी—जन्मभूमि के वक्ष का स्तन पान करने की उन में अलौकिक उत्सुकता थी, अपनी इस उत्सुकता में उन्होंने एक दिन पहिले ही से वाहर का दूध पीना छोड़ दिया था। उन में मृत्यु का भय नहीं था। साधारण लोगों की भांति वे बे—होशी की अवस्था में, घसीट कर फांसी के तख्ते पर नहीं लाये गये थे। वे अपने आप ही तैयारी कर रहे थे। प्रातःकाल

होते ही वे अपनी अनन्त यात्राके उद्योगमें लग गये थे और मुहूर्त की प्रतीक्षा कर रहे थे। मुहूर्त को सूचना मिलते ही मुस्कराये और गम्भीर स्वर से 'बन्देमातरम्' और भारत माता का जय—घोष किया और फिर हंसते खेलते उस भयानक प्रेताकार फांसी के तख्ते पर चढ़ गये। थोड़ी ही देर में उनका शरीर उस फन्दे में झूलने लगा और 'ओ३म्' 'ओ३म्' केसाथ उनकी पवित्रप्राण-वायु उनकी प्राण प्रिय भारतमाता को वायु मे मिल गयी। थोड़ी देर बाद उनके स्थूलशरीर भी भारतमाताकी छाती पर लेटते हुये पाये गये। चारों ओर शान्ति छागई। इस प्रकार इन वीरात्माओं जीवन—यज्ञ की पूर्णाहुति समाप्त हुई देश भर में शोक और विषाद की लहर फैल गई। सबों ने अपनी अपनी श्रद्धाञ्जलि चढ़ा कर उनका तर्पण किया और माता के वह 'पागल पुजारी' अपनी जीवन-लीला समाप्त कर अनन्त की गोद में विलीन हो गये।

फांसी के दिवस समस्त देश भर में बड़ा शोक मनाया गया। लोगों ने व्रत रक्खे और शोक तथा सहानुभूति सूचक सभायें हुईं। कहीं कहीं विद्यालयों और कालेजों के छात्रों नेभी व्रत रक्खे। दिल्ली के इस्लामी स्कूल के सभी छात्र तथा शिक्षकों ने व्रत रख कर दुख प्रकट किया। देश भर में सरकार के इसकृत्य की आज निन्दा होरही थी, सभी शोकातुर थे। बड़ा अन्ध-कारमय दिन था!

निज जीवन की

एक

(एकादश वर्षीय क्रान्तिकारी जीवन)

क्या ही लज़्ज़त है कि रग रग से यह आती है सदा ।
दम न ले तल्वार जब तक जान 'विस्मिल' में रहे ॥

श्री० रामप्रसाद 'बिस्मिल'

का

आत्म-चरित्र ।

तोमरधर में चम्बल नदी के किनारे पर दो ग्राम आबाद हैं जो ग्वालियर राज्य में बहुत ही प्रसिद्ध हैं क्यों कि इन ग्रामों के निवासी बड़े उद्दण्ड हैं। वे राज्य की सत्ता की कोई चिन्ता नहीं करते। ज़मींदारी का यह हाल है कि जिस साल उनके मन में आता है राज्य को भूमि-कर देते हैं और जिस साल उनकी इच्छा होती है मालगुज़ारी देने से साफ़ इन्कार कर जाते हैं। यदि तहसीलदार या कोई और राज्य का अधिकारी आता है तो ज़मींदार बीहड़में चले जाते हैं और महीनों बीहड़ों में ही पड़े रहते हैं। उन के पशु भी वहीं रहते हैं और भोजनादि भी बीहड़ों में ही होता है घर पर कोई ऐसा मूल्यवान पदार्थ नहीं छोड़ते जिसे नीलाम करके मालगुज़ारी वसूल की जा सके। एक ज़मींदार के सम्बन्ध मे कथा प्रचलित है कि मालगुज़ारी न देने के कारण ही उनको कुछ भूमि माफी में मिल गई। पहले तो कई साल तक भागे रहे एक बार धोके से पकड़ लिये गये तो तहसील के अधिकारियों ने उन्हें बहुत सताया। कई दिन तक बिना खाना पानी बंधा रहने दिया। अन्त में जलाने की धमकी दे पैरों पर सूखी घास डालकर आग लगवा दी। किन्तु उन ज़मींदार महोदय ने भूमि कर देना स्वीकार न किया और यही उत्तर दिया कि ग्वालियर महाराज के कोष में मेरे कर न देने से ही घटी न पड़ जायगी। संसार क्या-

जानेगा कि अमुक व्यक्ति उद्दण्डता के कारण ही अपना समय व्यतीत करता है। राज्य को लिखा गया जिसका परिणाम यह हुआ कि उतनी भूमि उन महाशय को माफी में दे दी गई। इसी प्रकार एक समय इन ग्रामों के निवासियों को एक अद्भुत खेल सूझा। उन्होंने महाराज के रिसाले के साठ ऊंट चुराकर बीहड़ों में छुपा दिये। राज्य को लिखा गया जिस पर राज्य की ओर से आज्ञा हुई कि दोनों ग्राम तोप लगाकर उड़ा दिये जावें। न जाने किस प्रकार समझाने बुझाने से ऊंट वापस किये गये और अधिकारियों को समझाया गया कि इतने बड़े राज्य में थोड़े से वीर लोगों का निवास है, इसका विध्वंस न करना ही उचित होगा। तब तोपें लौटाई गईं और ग्राम उड़ाये जाने से बचे। ये लोग अब राज्य निवासियों को तो अधिक नहीं सताते किन्तु बहुधा अङ्गरेज़ी राज्य में आकर उपद्रव कर जाते हैं और अमीरों के मकानों पर छापा मारकर रात ही रात बीहड़ में दाख़िल होजाते हैं। बीहड़ में पहुंच जाने पर पुलिस या फ़ौज कोई भी उनका बाल बांका नहीं कर सकती। ये दोनों ग्राम अङ्गरेज़ी राज्य की सीमा से लगभग पन्द्रह मील की दूरी पर चम्बल नदी के तट पर हैं। यहीं के एक प्रसिद्ध वंश में मेरे पितामह श्री० नारायणलाल जी का जन्म हुआ था। वे अपने कौटुम्बिक और अपनी भाभी के असहनीय दुर्व्यवहार के कारण मजबूर हो अपनी जन्मभूमि छोड़ इधर उधर भटकते रहे। अन्तमें अपनी धर्मपत्नी और अपने दो पुत्रों के साथ ज्येष्ठ पुत्र श्री० मुरलीधर जी मेरे पिता हैं। उस समय इनकी अवस्था आठ वर्ष और उनके छोटे पुत्र—मेरे चाचा (श्री कल्याणमल) की उम्र छः वर्ष की थी। इस समय यहां दुर्भिक्ष का भयंकर प्रकोप था।

दुर्दिन

अनेक प्रयत्न करने के पश्चात् शाहजहांपुर में एक अत्तार महोदय की दूकान पर श्रीयुत नारायणलाल जी को ३) मासिक वेतन की नौकरी मिली। ३) मासिक में दुर्भिक्ष के समय चार प्राणियों का किस प्रकार निर्वाह हो सकता था? दादी जी ने बहुत प्रयत्न किया कि अपने आप केवल एक समय आधे पेट भोजन करके बच्चों का पेट पाला जावे किन्तु फिर भी निर्वाह न हो सका। बाजरा, कुकनी, सामा, ज्वार इत्यादि खाकर दिन काटना चाहे, किन्तु फिर भी गुज़ारा न हुआ तब आधा बथुआ चना वा कोई दूसरा साग जो सबसे सस्ता हो उसको लेकर सबसे सस्ता अनाज उसमें आधा मिलाकर थोड़ा सा नमक डालकर उसे स्वयम् खातीं लड़कों को चना या जौ की रोटी देतीं और इसी प्रकार दादाजी भी समय व्यतीत करते थे। बड़ी कठिनतासे आधे पेट खाकर दिन तो कट जाता, किन्तु पेट में घोटू दबाकर रात काटना कठिन हो जाता यह तो भोजन की अवस्था थी, वस्त्र तथा रहने के स्थान का किराया कहां से आता? दादी जी ने चाहा कि भले घरों में कोई मज़दूरी ही मिल जावे, किन्तु अनजान व्यक्ति का जिसकी भाषा भी अपने देश की भाषा से न मिलती हो भले घरों में सहसा कौन विश्वास कर सकता था? कोई मज़दूरी पर अपना अनाज भी पीसने को न देता था। डर था कि दुर्भिक्ष का समय है खा लेगी। बहुत प्रयत्न करने के बाद दो एक महिलायें अपने घर पर अनाज पिसवाने को राज़ी हुईं, किन्तु पुरानी काम करने वालियों को कैसे जवाब दें? इसी प्रकार अनेकों अड़चनों के बाद पांच सात सेर अनाज पीसने को मिल जाता जिसकी पिसाई उस समय एक पैसा फी पंसेरी थी। बड़ी कठिनता से आधे पेट एक समय भोजन करके तीन चार घण्टों तक पीसकर एक पैसा

या डेढ़ पैसा मिलता। फिर घर पर आकर बच्चों के लिये भोजन तैयार करना पड़ता। दो तीन वर्ष तक यही अवस्था रही। बहुधा दादा जी देश को लौट चलने का विचार करते किन्तु दादी जी का यही उत्तर होता कि जिनके कारण देश छुटा, धन सामग्री सब नष्ट हुई और ये दिन देखने पड़े अब उन्हीं के पैरों में सिर रखकर दासत्व स्वीकार करने से इसी प्रकार प्राण दे देना कहीं श्रेष्ठ है। ये दिन सदैव न रहेंगे, सब प्रकार के सङ्कट सहे; किन्तु दादी जी देश को लौटकर न गईं।

चार पांच वर्ष में जाकर जब कुछ सज्जन परिचित हो गये और जान लिया कि स्त्री भले घर की है, कुसमय पड़ने से दीन दशा को प्राप्त हुई हैं, तब बहुत सी महिलायें विश्वास करने लगीं, दुर्भिक्ष भी दूध हो गया था। कभी कभी किसी सज्जन के यहां से कुछ दान भी मिल जाया करता, कोई ब्राह्मण भोजन करा देते। इसी प्रकार समय व्यतीत होने लगा। कई महानुभावों ने जिनके कोई सन्तान न थी और धनादि पर्याप्त था, दादी जी को अनेकों प्रकार के प्रलोभन दिये कि वह अपना एक लड़का उन्हें दे दें और जितना धन मांगें उनकी भेंट किया जावे। किन्तु दादी जी आदर्श माता थीं, उन्होंने इस प्रकार के प्रलोभनों की किञ्चित् मात्र भी परवा न की और अपने बच्चों का किसी न किसी प्रकार पालन करती रहीं।

मेहनत मज़दूरी तथा ब्राह्मण वृत्ति द्वारा कुछ धन एकत्रित हुआ। कुछ महानुभावों के कहने से पिता जी को किसी पाठशाला में शिक्षा पाने का प्रबन्ध कर दिया गया। श्री० दादा जी ने भी कुछ प्रयत्न किया, उनका वेतन भी बढ़ गया और वे ७)

मासिक पाने लगे। इस के बाद उन्होंने नौकरी छोड़, पैसे तथा दुवन्नी, चवन्नी इत्यादि बेंचनेकी दुकान की। पांच सात आने रोज़ पैदा होने लगे। जो दुर्दिन आये थे, प्रयत्न तथा साहस से दूर होने लगे। इसका सब श्रेय श्री० दादी जी को ही है। जिस साहस तथा धैर्य से उन्होंने काम लिया वह वास्तव में किसी दैवी शक्ति की सहायता ही कही जावेगी। अन्यथा एक अशिक्षित ग्रामीण महिला की क्या सामर्थ्य है कि वह नितान्त अपरिचित स्थान में जा कर मेहनत मजदूरी करके अपना तथा अपने बच्चों का पेट पालन करते हुए उन को शिक्षित बनावे। और फिर ऐसी परिस्थियों में जब कि उसने कभी अपने जीवन में घर से बाहर पैर न रखा हो और जो ऐसे कट्टर देश की रहने वाली हो कि जहां पर प्रत्येक हिन्दू प्रथा का पूर्णतया पालन किया जाता हो। जहांके निवासी अपनी प्रथाओं की रक्षा के लिये प्राणों की किञ्चित मात्र भी चिन्ता नहीं करते हों। किसी ब्राह्मण, क्षत्री या वैश्य की कुल वधू का क्या साहस जो डेढ़ हाथ का घूंघट निकाले बिना एक घरसे दूसरे घर चली जावे। शूद्र जाति की वधुओं के लिये भी यही नियम हैं कि वे रास्ते में बिना घूंघट निकाले न जावें। शूद्रों का पहनावा ही अलग है, ताकि उन्हें देख कर ही दूर से पहिचान लिया जावे कि यह किसी नीच जाति की स्त्री है। ये प्रथायें इतनी प्रचलित हैं कि उन्होंने अत्याचारका रूप धारण कर लिया है। एक समय किसी चमार वधू जो अंग्रेजी राज्य से विवाह कर के गई थी, कुल प्रथानुसार ज़मींदार के घर में पैर छूने के लिये गई। वह पैर में बिछवे (नूपुर) पहने हुई थी और सब पहनावा चमारों का पहने थी। ज़मींदार महोदय की निगाह उस के पैरों पर पड़ी। पूछने पर मालूम हुआ कि चमार की बहू है। ज़मींदार साहब जूता पहन कर आये और उस के

पैरों पर खड़े हो कर इस ज़ोर से दबाया कि उस की उंगलियाँ कट गईं। उन्होंने कहा कि यदि चमारों की बहुयें बिछुवा पहनेंगी तो ऊंची जाति के घर की स्त्रियां क्या पहनेगी? नितान्त अशिक्षित तथा मूर्ख हैं, किन्तु जाति अभिमान में चूर रहते हैं। ग़रीब से ग़रीब अशिक्षित ब्राह्मण या क्षत्रीय चाहे वह किसी आयु का हो यदि शूद्र जाति की बस्ती में से गुज़रे तो चाहे कितना ही धनी या वृद्ध कोई शूद्र क्यों न हो उस को उठ कर पालागन या जुहार करनी ही पड़ेगी। यदि ऐसा न करे तो उसी समय वह ब्राह्मण या क्षत्रीय उसे जूतोंसे मार सकता है और सब उस शूद्र का ही दोष बता कर उसका तिरस्कार करेंगे। यदि किसी कन्या या बहू पर व्यभिचारिणी होनेका सन्देह किया जावे तो उसे बिना किसी विचार के मार कर चम्बल में प्रवाहित कर दिया जाता है। इसी प्रकार यदि किसी विधवा पर व्यभि- चार या किसी प्रकार आचरण भ्रष्ट होने का दोष लगाया जावे तो चाहे वह गर्भवती ही क्यों न हो उसे तुरन्त ही काट कर चम्बल में पहुंचा दें और किसी को कानों कान भी खबर न होने दें। वहां के मनुष्य भी सदाचारी होते हैं वे सब की बहू बेटी को अपनी बहू बेटी समझते हैं। स्त्रियों की मान मर्यादा की रक्षा के लिये प्राण देनेमें कोई चिन्ता नहीं करते। इस प्रकार के देशमें विवाहित हो कर सब प्रकारकी प्रथाओं को देखते हुए भी इतना साहस करना यह दादी जी का ही काम था।

परमात्माकी दया से दुर्दिन समाप्त हुए। पिताजी कुछ शिक्षा पागये और एक मकान भी श्री० दादाजी ने खरीद लिया दरवाजे दरवाजे भटकने वाले कुटुम्ब को शान्ति पूर्वक बैठने का स्थान मिल गया और फिर श्री० पिताजी के विवाह करने का विचार हुआ। दादी जी, दादाजी तथा पिता जी के साथ अपने

मायेके गयी। वहीं पिता जी का विवाह कर दिया। वहाँ दो चार मास रह कर सब लोग बहू की विदा कराके साथ लिवा लाये।

गार्हस्थ्य जीवन

विवाह हो जाने के पश्चात पिताजी म्युनिसिपैलिटी में १५) मासिक वेतन पर नौकर हो गये। उन्होंने कोई बड़ी शिक्षा प्राप्त न की थी। पिताजीको यह नौकरी पसन्द न आई। उन्होंने एक दो साल के बाद नौकरी छोड़ कर स्वतन्त्र व्यवसाय आरम्भ करने का प्रयत्न किया और कचहरी में सरकारी स्टाम्प बेचने लगे। आप के जीवनका अधिक भाग इसी व्यवसायमें व्यतीत हुआ। साधारण श्रेणी का गृहस्थ बन कर उन्होंने इसी व्यवसाय द्वारा अपनी सन्तानों को शिक्षा दी; अपने कुटुम्ब का पालन किया और अपने मुहल्ले के गण्यमान्य व्यक्तियों में गिने जाने लगे। आप रुपये का लेन देन भी करते थे। आपने तीन बैल गाडियां भी बनाई थीं जो किराये पर चला करती थीं। पिता जी को व्यायाम से प्रेम था आप का शरीर बड़ा सुदृढ़ और सुडौल था। आप नियम पूर्वक अखाड़े में कुश्ती लड़ा करते थे।

पिता जी के गृह मे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, किन्तु वह मर गया। उसके एक साल बाद लेखक (शहीदाने वतन श्री० भाई राम प्रसाद) ने श्री०पिताजीके गृहमें ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष ११ सम्वत् १९५४ विक्रमीको जन्म लिया। बड़े प्रयत्नों से मानता मान कर अनेकों गंडे तावीज तथा कवचों द्वारा श्री० दादी जीने इस शरीर की रक्षा का प्रयत्न किया। स्यात् बालकोंका रोग गृहमें प्रवेश कर गया था। अतएव जन्म लेने के एक या दो मास पश्चात् ही मेरे शरीर की, अवस्था भी पहले बालक कैसी होने लगी।

किसी ने बताया कि सफेद खरगोश को मेरे शरीर परसे घुमा कर जमीन में छोड़ दिया जावे; यदि बीमारी होगी तो खरगोश तुरन्त मर जावेगा। कहते हैं कि हुआ भी ऐसा ही। एक सफेद खरगोश मेरे शरीर पर से उतार कर जैसे ही जमींनपर छोड़ा गया, वैसे ही उसने तीन चार चक्कर काटे और मर गया, मेरे विचार में किसी अंश में यह सम्भव भी है क्यों कि औषधि तीन प्रकार की होती हैं। १—दैविक, २—मानुषिक, ३—पैशाचिक। पैशाचिक औषधियों में अनेक प्रकार के पशु या पक्षियों के मांस अथवा रुधिर का व्यवहार होता है, जिन का उपयोग वैद्यक के ग्रन्थों में पाया जाता है। इन में से एक प्रयोग बड़ा ही कौतुहलोत्पादक तथा आश्चर्यजनक यह है कि जिस बच्चे को जमोखे (सूखा ?) की बीमारी हो गई हो यदि उसके सामने चिमगादड़ को चीर कर के लाया जावे तो एक दो मासका बालक चिमगादड़ को पकड़ कर के उसका खून चूस लेगा और बीमारी जाती रहेगी। यह बड़ी उपयोगी औषधि है और एक महात्मा की बतलाई हुई है।

जब मैं सात वर्ष का हुआ तो पिताजी ने स्वयं ही मुझे हिन्दी अक्षरों का बोध कराया और एक मौलवी साहब के मकतब मे उर्दू पढ़ने के लिये भेज दिया। मुझे भली भांति स्मरण है कि पिता जी अखाड़ेमें कुश्ती लड़ने जाते थे और अपने से बलिष्ठ तथा शरीर में डेढ़गुने पट्ठे को पटक देते थे। उसीके कुछ दिनों बाद पिताजी का एक बङ्गाली (श्री० चटर्जी) महाशय से प्रेम हो गया। चटर्जी महाशय की अंग्रेजी दवा की दुकान थी। आप बड़े भारी नशाबाज थे। एक समय में आध छटांक-एक छटांक चरस की चिलम उड़ाया करते थे। उन्हीं की संगति में पिताजीने भी चरस पीना सीख लिया,

जिसके कारण उन का शरीर नितान्त नष्ट हो गया। दश वर्ष में ही सम्पूर्ण शरीर सूख कर हड्डियां निकल आईं। चटर्जी महाशय सुरापान भी करने लगे। अतएव उनका कलेजा बढ़ गया और उसी से उन का शरीरांत हो गया। मेरे बहुत कुछ समझाने पर पिता जी ने अपनी चरस पीने की आदत को छोड़ा किन्तु बहुत दिनों के बाद।

मेरे बाद पांच बहनों और तीन भाइयों का जन्म हुआ। दादी जी ने बहुत कहा कि कुल की प्रथा के अनुसार कन्याओं को मार डाला जावे किन्तु माता जी ने इस का विरोध किया और कन्याओं के प्राणों की रक्षा की। मेरे कुल में यह पहला ही समय था कि कन्याओं का पोषण हुआ। पर इन में दो बहिनों और भाइयों का देहान्त हो गया। शेष एक भाई जो इस समय (१९२७ ई०) दश वर्ष का है और तीन बहिनें बचीं। माता जी के प्रयत्न से तीनों बहिनों को अच्छी शिक्षा दी गई और उन के विवाह बड़ी धूमधाम से किये गये। इसके पूर्व हमारे कुल की कन्यायें किसी को नहीं व्याही गईं क्योंकि वे जीवित ही नहीं रखी जाती थीं।

दादा जी बड़े सरल प्रकृति के मनुष्य थे। जब तक आप जीवित रहे पैसे बेचने का ही व्यवसाय करते रहे। आप को गाय पालने का बड़ा शौक था। स्वयम् ग्वालियर जा कर बड़ी बड़ी गायें खरीद कर लाया करते थे। वहां की गायें काफी दूध देती है। अच्छी गाय दस पन्द्रह सेर दूध देती हैं। ये गायें बड़ी सीधी भी होती हैं। दूध दोहन करते समय उन की टांगें बांधने की आवश्यकता नहीं होती और जब जिस का जी चाहे बिना बच्चे के दूध दोहन कर सकता है। बचपन में मैं

बहुधा जाकर गाय के थन में मुंह लगा कर दूध पिया करता था। वास्तव में वहां की गायें दर्शनीय होती हैं।

दादा जी मुझे खूब दूध पिलाया करते थे। आप को अठारह (गोटी बघिया बग्घा) खेलने का बड़ा शौक था। सायङ्काल के समय नित्य शिव--मन्दिर में जाकर दो घराटा तक परमात्मा का भजन किया करते थे। आप का लगभग पचपन वर्ष की आयु में स्वर्गारोहण हुआ।

वाल्यकाल से ही पिता जी मेरी शिक्षा का अधिक ध्यान रखते थे और जरा सी भूल करने पर बहुत पीटते थे। मुझे अब भी भलीभांति स्मरण है कि जब मैं नागरी के अक्षर लिखना सीख रहा था तो मुझे 'उ' लिखना न आया मैंने बहुत प्रयत्न किया। पर जब पिता जी कचहरी से आकर मुझसे 'उ' लिखवाया मैं न लिख सका। उन्हें मालूम हो गया कि मैं खेलने चला गया था। इस पर उन्होंने मुझे बन्दूक के लोहे के गज़ से इतना पीटा कि गज टेढा पड गया। मैं भाग कर दादा जी के पास चला गया तब बचा। मैं छोटेपन से ही बहुत उद्दण्ड था। पिता जी के पर्याप्त शासन रखने पर भी बहुत उद्दण्डता करता था। एक समय किसी के बाग़ में जाकर आंड़ू के वृक्षों में से सब आंड़ू तोड डाले माली पीछे दौड़ा किन्तु मैं उसके हाथ न आया। माली ने सब आंड़ू पिता जी के सामने ला रखे। उस दिन पिता जीने मुझे इतना पीटा कि मैं दो दिन तक उठ न सका। इसी प्रकार खूब पिटता था, किन्तु उद्दण्डता अवश्य करता था। शायद उस बचपन की मार से ही यह शरीर बहुत कठोर तथा सहनशील बन गया।

मेरी कुमारावस्था ।

जब मैं उर्दू चौथा दर्जा का पास कर के पांचवें में आया उस समय मेरी अवस्था लगभग चौदह वर्ष की होगी । इसी बीच मुझे पिता जी की सन्दूक से रुपये पैसे चुराने की आदत पड़ गई थी । इन पैसों से उपन्यास खरीद कर खूब पढ़ता। पुस्तक विक्रेता महाशय पिता जी की जान पहचान के थे । उन्होंने पिता जी से मेरी शिकायत की । अब मेरी कुछ जांच होने लगी । मैंने उस महाशय के यहां से किताबें खरीदना ही छोड़ दिया । मुझमें दो एक खराब आदतें भी पड़ गईं । मैं सिग्रेट पीने लगा । कभी २ भंग भी जमा लेता था । कुमारावस्था में स्वतन्त्रता पूर्वक पैसे का हाथ में आ जाना और उर्दू के प्रेमरस पूर्ण उपन्यासों तथा ग़ज़लों की पुस्तकों ने आचरण पर भी अपना कुप्रभाव दिखाना आरम्भ कर दिया । घुन लगना आरम्भ ही हुआ था कि परमात्मा ने बड़ी सहायता की । मैं एक रोज भंग पीकर पिता जी की सन्दूकची में से रुपये निकालने गया । नशे की हालत में होश ठीक न रहने के कारण सन्दूकची खटक गई । माता जी को सन्देह हुआ । उन्होंने मुझे पकड़ लिया । चाबी पकड़ी गई । मेरे सन्दूक की तलाशी ली गई, बहुत से रुपये निकले और सारा भेद खुल गया । मेरी किताबों में अनेक उपन्यासादि पाये गये जो उसी समय फाड़ डाले गये ।

परमात्मा की कृपा से मेरी चोरी पकड़ ली गई नहीं तो दो चार वर्ष में न दीन का रहता न दुनिया का । इसके बाद भी मैं ने बहुत घातें लगाईं किन्तु पिता जी ने संदूकची का ताला बदल दिया मेरी कोई चाल न चल सकी । अब जब कभी मौका मिल जाता तो माता जी के रुपयों पर हाथ फेर

ेता था। इसी प्रकार की कुटेवों के कारण दो वार वार उर्दू मिडिलकी परीक्षा में उत्तीर्ण न हो सका तव मैंने अंगरेजी पढ़ने की इच्छा प्रकट की पिताजी मुझे अंग्रेजी पढ़ाना नहीं चाहते थे और किसी व्यवसायमें लगाना चाहते थे, किन्तु माता जीकी कृपा से मैं अंग्रेजी पढ़ने भेजा गया। दूसरे वर्ष जव मैं उर्दू मिडिल की परीक्षा में फेल हुआ उसी समय पड़ोस के देव मन्दिर में जिसकी दीवार मेरे मकान से मिली थी एक पुजारी जी आ गये आप बड़े ही सत चरित्र व्यक्ति थे। मैं आपके पास उठने बैठने लगा।

मैं मन्दिर में जाने आने लगा। कुछ पूजा पाठ भी सीखने लगा। पुजारी जी के उपदेशों का बड़ा उत्तम प्रभाव हुआ। मैं अपना अधिकतर समय स्तुति पूजन तथा पढने में व्यतीत करने लगा। पुजारी जी मुझे ब्रह्मचर्य पालन का खूब उपदेश देते थे। वह मेरे पथ प्रदर्शक बने। मैंने एक दूसरे सज्जन की देखा देखी व्यायाम करना भी आरम्भ कर दिया। अब तो मुझे भक्ति मार्ग में कुछ आनन्द प्राप्त होने लगा और चार पाँच महीने में ही व्यायाम भी खूब करने लगा। मेरी सब बुरी आदतें तथा कुभावनायें जाती रहीं। स्कूलों की छुट्टियाँ समाप्त होने पर मैंने मिशन स्कूल के अंग्रेजी के पाँचवें दर्जे में नाम लिखा लिया। इस समय तक मेरी और सब कुटेवें तो छूट गई थीं, किन्तु सिग्रेट पीना न छूटता था। मैं सिग्रेट बहुत पीता था। एक दिन में पचास साठ सिग्रेट पी डालता था। मुझे बड़ा दुःख होता था कि मैं इस जीवन में सिग्रेट पीने की कुटेव को न छोड़ सकूंगा स्कूल मे भर्ती होने के थोड़े दिनों वाद हो एक सहपाठी श्रीयुत् सुशीलचन्द्र सेन से कुछ विशेष स्नेह हो गया। उन्हीं की दया के कारण मेरा सिग्रेट पीना भी छूट गया।

देव मन्दिर में स्तुति पूजा करने की प्रवृति को देख कर श्रीयुत मुन्शी इन्द्रजीत जी ने मुझे सन्ध्या करने का उपदेश दिया। आप उसी मन्दिर में रहने वाले किसी महाशय के पास आया करते थे। व्यायामादि करने के कारण मेरा शरीर बड़ा सुगठित हो गया था और रंग निखर आया था। मैंने जानना चाहा कि सन्ध्या क्या वस्तु है? मुन्शी जी ने आर्य समाज सम्बन्धी कुछ उपदेश दिये। इसके बाद मैं ने सत्यार्थ प्रकाश पढ़ा। इससे तख्ता ही पलट गया। सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन ने मेरे जीवन के इतिहास में एक नवीन पृष्ठ खोल दिया। मैं ने उसमें उल्लिखित ब्रह्मचर्य के कठिन नियमों का पालन करना आरम्भ कर दिया। मैं एक कम्बल को तख्त पर विछाकर सोता और प्रातः काल चार वजे से ही शय्या त्याग कर देता। स्नान सन्ध्यादि से निवृत्त हो व्यायाम करता, किन्तु मन की वृत्तियां ठीक न होतीं। मैं ने रात्रि के समय भोजन करना त्याग दिया। केवल थोड़ा सा दूध ही रात को पीने लगा। सहसा ही बुरी आदतों को छोड़ा था। इस कारण कभी कभी स्वप्न दोष हो जाता। तब किसी सज्जन के कहने से मैं ने नमक खाना भी छोड़ दिया। केवल उवाल कर साग या दाल से एक समय भोजन करता। मिर्च खटाई तो छूता भी न था। इस प्रकार पांच वर्ष तक बराबर नमक न खाया। नमक के न खाने से शरीर के सब दोष दूर होगये और मेरा स्वास्थ्य दर्शनीय हो गया। सब लोग मेरे स्वास्थ्य को आश्चर्य की दृष्टि से देखा करते।

मैं थोड़े दिनों में ही बड़ा कट्टर आर्य समाजी हो गया। आर्य समाज के अधिवेशन में जाता आता। सन्यासी महात्माओं के उपदेशों को बड़ी श्रद्धा से सुनता। जब कोई सन्यासी आर्य

समाज में आता तो उसकी हर प्रकार सेवा करता क्योंकि मेरी प्राणायाम सीखने की बड़ी उत्कट इच्छा थी। जिस सन्यासी का नाम सुनता शहर से तीन चार मील भी उसकी सेवा के लिये जाता फिर वह सन्यासी चाहे जिस मत का अनुयायी होता। जब मैं अंग्रेज़ी के सातवें दर्जे में था तब सनातन धर्मी पण्डित जगतप्रसाद जी शाहजहांपुर पधारे। उन्होंने आर्य समाज का खण्डन करना प्रारम्भ किया। आर्य समाजियों ने भी उनका विरोध किया और पं० अखिलानन्द जी को बुला कर शास्त्रार्थ कराया। शास्त्रार्थ संस्कृत में हुआ। जनता पर अच्छा प्रभाव हुआ। मेरे कामों को देख कर मुहल्ले वालों ने पिता जी से मेरी शिकायत की। पिता जी ने मुझसे कहा कि आर्य-समाजी हारगये, अब तुम आर्य समाज से अपना नाम कटा दो, मैं ने पिता जी से कहा कि आर्य समाज के सिद्धान्त सार्व भौम हैं, उन्हें कौन हरा सकता है। अनेक वाद-विवाद के पश्चात् पिता जी ज़िद पकड़ गये कि यदि आर्य समाज से त्यागपत्र न दोगे तो मैं तुझे रात में सोते समय मार दूंगा। या तो आर्य समाज से त्यागपत्र दे दे या घर छोड़ दे। मैं ने भी विचारा कि पिता जी का क्रोध यदि अधिक बढ़ गया और उन्होंने मुझ पर कोई वस्तु ऐसी दे पटकी कि जिससे बुरा परिणाम हुआ तो अच्छा न होगा। अतएव घर त्याग देना ही उचित है। मैं केवल एक कमीज़ पहने खड़ा था और पैजामा उतार कर धोती पहन रहा था। पैजामे के नीचे लंगोट बंधा था। पिताजी ने हाथ से धोती छीनली और कहा घर से निकल। मुझे भी क्रोध आगया। मैं पिता जी के पैर छू कर गृह त्याग कर चला गया। कहाँ जाऊं कुछ समझ में न आया। शहर में किसी से जान-पहचान भी नथी, जहाँ छिप रहता। मैं जंगल की ओर चला गया। एक रात तथा एक दिन बाग़ में

श्रीयुत भाई रामप्रसादजी के माता पिता तथा छोटा भाई।
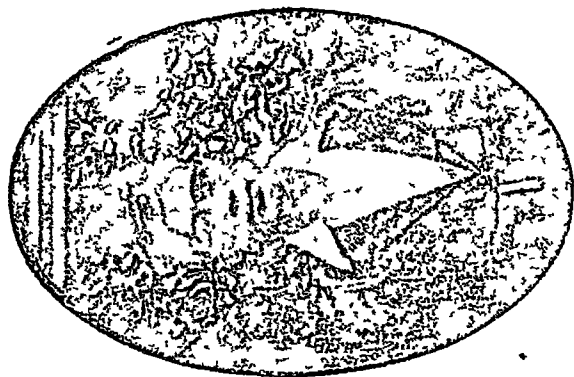
श्रीयुत भाई राजकुमार 'सिन्हा'

पेड़ पर बैठा रहा। क्षुधा लगने पर खेतों में से हरे चने तोड़ कर खाये नदी में स्नान किया और जलपान किया। दूसरे दिन सन्ध्या समय पं० अखिलानन्दजी का व्याख्यान आर्य-समाज मन्दिर में था। मैं आर्य-समाज मन्दिर में गया। एक पेड़ के नीचे एकान्त में खड़ा व्याख्यान सुन रहा था कि पिता जी दो मनुष्यों को लिये हुए आ पहुंचे, और मैं पकड़ लिया गया। वह उसी समय पकड़ कर स्कूल के हेड मास्टर के पास ले गये। हेड मास्टर साहब ईसाई थे। मैंने उन्हें सब वृत्तान्त कहि सुनाया। उन्होंने पिताको ही समझाया कि समझदार लड़के को मारना पीटना ठीक नहीं। मुझे भी बहुत कुछ उपदेश दिया। उस दिन से पिताजी ने कभी भी मुझ पर हाथ नहीं उठाया क्योंकि मेरे घर से निकल जाने पर घर में बड़ा क्षोभ रहा। एक रात एक दिन किसी ने भोजन नहीं किया, सब बड़े दुःखी हुए कि अकेला पुत्र न जाने नदी में डूब गया या रेल से कट गया? पिताजी के हृदय को भी बड़ा भारी धक्का पहुंचा। उस दिन से वे मेरी प्रत्येक बात सहन कर लेते थे, अधिक विरोध न करते थे। मैं पढ़ने में भी बड़ा प्रयत्न करता था और अपने क्लास में प्रथम उत्तीर्ण होता था। यह अवस्था आठवें दर्जे तक रही। जब मैं आठवें दर्जे में था, उसी समय स्वामी श्री० सोमदेव जी सरस्वती आर्य-समाज शाहजहांपुर में पधारे। उनके व्याख्यानों का जनता पर बड़ा अच्छा प्रभाव हुआ। कुछ सज्जनों के अनुरोधसे स्वामी जी कुछ दिनों के लिये शाहजहांपुर आर्य-समाज मन्दिर में ठहर गये। आपकी तबियत भी कुछ खराब थी इस कारण शाहजहांपुर का जल वायु लाभदायक देख कर आप वहां ठहरे थे। मैं आपके पास जाया आया करता था। प्राणपण से मैंने स्वामी जी महाराज की सेवा की और इसी सेवा के परिणाम स्वरूप मेरे जीवनमें

नवीन परिवर्तन हो गया। मैं रात को दो तीन बजे तक और दिन भर आपकी सेवा शुश्रूषा में उपस्थित रहता, अनेकों प्रकार की औषधियों का प्रयोग किया। कतिपय सज्जनों ने बड़ी सहानुभूति दिखलाई किन्तु रोग का शमन न हो सका। आप मुझे अनेकों प्रकार के उपदेश दिया करते थे। उन उपदेशों को मैं श्रवण कर कार्य रूप में परिणत करने का पूरा प्रयत्न करता। वास्तव में आप ही मेरे गुरुदेव तथा पथ-प्रदर्शक थे। आप की शिक्षाओं से ही मेरे जीवन में आत्मिक बल का संचार किया जिनके सम्बन्ध में मैं पृथक वर्णन करूंगा।

कुछ नवयुवकों ने मिल कर आर्य समाज मन्दिर में आर्य कुमार सभा खोली थी। जिसके साप्ताहिक अधिवेशन प्रत्येक शुक्रवार को हुआ करते थे। वहीं पर धार्मिक पुस्तकों का पठन, विषय विशेष पर निबन्ध लेखन और पठन तथा वाद-विवाद होता था। कुमार सभा से ही मैंने जनता के सम्मुख बोलने का अभ्यास किया। बहुधा कुमार सभा के नव युवक मिलकर शहर के मेलों में प्रचारार्थ जाया करते थे। बाज़ारों में व्याख्यान देकर आर्य समाज के सिद्धान्तों का प्रचार करते थे। ऐसा करते करते मुसलमानों से मुबाहसा होने लगा। अतएव पुलिस ने झगड़े का भय देख कर बाज़ारों में व्याख्यान देना बन्द करा दिया। आर्य समाज के सदस्यों ने कुमार सभा के प्रयत्न को देख कर उस पर अपना शासन जमाना चाहा किन्तु कुमार किसी का अनुचित शासन कब मानने वाले थे। आर्य समाज के मन्दिर में ताला डाल दिया गया कि कुमार सभा वाले आर्य समाज मन्दिर में अधिवेशन न करें। यह भी कहा गया कि यदि वे यहाँ अधिवेशन करेंगे तो पुलिस को लाकर उन्हें मन्दिर से निकलवा दिया जावेगा। कई महीनों तक हम लोग

मैदान में अपनी सभा के अधिवेशन करते रहे, किन्तु बालक ही तो थे; कब तक इस प्रकार कार्य चला सकते थे ? कुमार-सभा टूट गई। तब आर्य समाजियों को शान्ति हुई कुमार सभा ने अपने शहर में तो नाम पाया ही था, जब लखनऊ में कांग्रेस हुई तो भारतवर्षीय कुमार सम्मेलन का वार्षिक अधिवेशन लखनऊ में हुआ। उस अवसर पर सबसे अधिक पारितोषिक लाहौर और शाहजहांपुर की कुमार सभाओं ने पाये थे, जिनकी प्रशंसा समाचारपत्रों में प्रकाशित हुई थी। उन्हीं दिनों एक मिशन स्कूल के विद्यार्थी से मेरा परिचय हुआ। वह कभी कभी कुमार सभा में आ जाया करते थे। मेरे भाषण का उन पर अधिक प्रभाव हुआ। वैसे तो वह मेरे मकान के निकट ही रहते थे, किन्तु आपस में कोई मेल न था। बैठने उठने से आपस में प्रेम बढ़ गया आप एक ग्राम के निवासी थे। जिस ग्राम में आपका घर था वह बड़ा प्रसिद्ध ग्राम है। वहां का प्रत्येक निवासी अपने घर में बिना लाइसेन्स अस्त्र शस्त्र रखता है। बहुत से लोगों के यहां बन्दूक तथा तमंचे भी रहते हैं, जो ग्राम में ही बन जाते हैं। ये सब टोपीदार होते हैं। उक्त महाशय के पास भी एक नाली का छोटा सा पिस्तौल था, जिसे वह अपने पास शहर में रखते थे ! जब मुझसे अधिक प्रेम बढ़ा तो उन्होंने वह पिस्तौल मुझे रखने के लिये दिया इस प्रकार के हथियार रखने की मेरी बड़ी उत्कट इच्छा थी। क्योंकि मेरे पिता के कुछ शत्रु थे जिन्होंने पिता जी पर आक्रमण ही लाठियों का प्रहार किया था। मैं चाहता था कि यदि पिस्तौल मिल जावे तो मैं पिता जी के शत्रुओं को मार डालूं। यह एक नाली का पिस्तौल उक्त महाशय अपने पास रखते थे किन्तु उसको चलाकर न देखा था। मैंने उसे चलाकर देखा तो वह नितान्त अक्रिय सिद्ध हुआ। मैंने उसे लेजाकर एक कोने में डाल दिया।

उक्त महाशय से इतना स्नेह बढ़ गया कि सायंकाल को मैं अपने घर से खीर की थाली ले जाकर उनके साथ साथ उनके मकान पर ही भोजन किया करता था। वह मेरे साथ श्री स्वामी सोमदेव जी के पास भी जाया करते थे। उनके पिता जब शहर आये तो उनको यह बड़ा बुरा मालूम हुआ। उन्होंने मुझसे अपने लड़के के पास न आने या उसे कहीं साथ न ले जानेके लिये बहुत ताड़ना की और कहा कि यदि मैं उनका कहना न मानूंगा तो वह ग्राम से आदमी लाकर मुझे पिटवायेंगे। मैंने उनके पास जाना आना त्याग दिया, किन्तु वह महाशय मेरे यहां आते जाते रहे।

लगभग १८ वर्ष की उम्र तक मैं रेल पर न चढ़ा था। मैं इतना दृढ़ सत्यवका होगया था कि एक समय रेल पर चढ़कर तीसरे दर्जे का टिकट खरीदा था पर, इंटर क्लासमें बैठकर दूसरों के साथ साथ चला गया। इस बात से मुझे बड़ा खेद हुआ। मैंने अपने साथियों से अनुरोध किया कि यह एक प्रकार की चोरी है सबको मिलकर इन्टर क्लास का भाड़ा स्टेशन मास्टर को दे देना चाहिये। एक समय मेरे पिता जी दीवानी में किसी पर दावा कर के वकील से कह गये थे कि जो काम होवे वह मुझसे करालें। कुछ आवश्यकता पड़ने पर वकील साहब ने मुझे बुला भेजा और कहा कि मैं पिता जी के हस्ताक्षर वकालतनामे पर कर दूं। मैंने तुरन्त उत्तर दिया कि यह तो धर्म के-विरुद्ध होगा इस प्रकार का पाप मैं कदापि नहीं कर सकता। वकील साहब ने बहुत कुछ समझाया कि एक सौ रुपये से अधिक का दावा है, मुकदमा खारिज हो जावेगा। किन्तु मुझ पर कुछ प्रभाव न हुआ, न मैंने हस्ताक्षर किये अपने जीवन में सर्व प्रकारेण सत्य का आचरण करता था; चाहे कुछ हो जाता, सत्य सत्य बात कह देता था।

मेरी माता मेरे धर्म-कार्य में तथा शिक्षादि में बड़ी सहायता करती थीं। वह प्रातःकाल चार बजे ही मुझे जगा दिया करती थीं। मैं नित्य प्रति नियम पूर्वक हवन भी किया करता था। मेरी छोटी वहिनका विवाह करनेके निमित्त माता जी तथा पिताजी ग्वालियर गये। मैं तथा श्री० दादी जी शाहजहांपुर में ही रह गये, क्यों कि मेरी वार्षिक परीक्षा थी। परीक्षा समाप्त करके मैं भी वहिन के विवाह में सम्मिलित होने को गया। बारात आ चुकी थी। मुझे ग्रामके बाहर ही मालूम हो गया कि बारात में वेश्या आई है। मैं घर न गया और न बारातमें सम्मिलित हुआ। मैं ने विवाह में कोई भी भाग न लिया। मैंने माता जी से थोड़े रुपये मांगे। माताजी ने मुझे लगभग १२५) दिये जिनको ले कर मैं ग्वालियर गया। यह अवसर रिवालवर खरीदने का अच्छा हाथ लगा। मैंने सुन रक्खा था कि रियासत में बड़ी आसानी से हथियार मिल जाते हैं। बड़ी खोज की। टोपीदार बन्दूक तथा पिस्तौल तो मिलते थे किन्तु कारतूसी हथियारों का कहीं पता नहीं। बड़े प्रयत्न के बाद एक महाशयने मुझे ठग लिया और ७५) में टोपीदार पांच फायर करनेवाला एक रिवाल्वर दिया। रियासत को बनी हुई बारूद और थोड़ी सी टोपियां दे दीं। मैं इसी को लेकर बड़ा प्रसन्न हुआ। सीधा शाहजहांपुर पहुंचा। रिवाल्वर को भर कर चलाया तो गोली केवल पन्द्रह या बीस गज पर ही गिरी, क्यों कि बारूद अच्छी न थी। मुझे बडा खेद हुआ। माताजी भी जब लौट कर शाहजहाँपुर आईं तो उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या लाये? मैं ने कुछ कह कर टाल दिया। रुपये सब खर्च हो गये। स्यात एक गिन्नी बची थी, सो मैं ने माताजी को लौटा दी। मुझे जब किसी बातके लिये धनकी आवश्यकता होती, मैं माताजी से कहता और वह मेरी मांग पूरी कर देती थीं। मेरा स्कूल घरसे एक

मील दूर था। मैं ने माता जी से प्रार्थना की कि मुझे साइकिल ले दें। उन्होंने लगभग एक सौ रुपये दिये। मैं ने साइकिल खरीद ली। उस समय मैं अंग्रेज़ीके नवें दर्जे में आ गया था। किसी धार्मिक या देश सम्बन्धी पुस्तक पढ़ने की इच्छा होती तो माताजी ही से दाम ले जाता। लखनऊ कांग्रेस जानेके लिये मेरी बड़ी इच्छा थी। दादी जी तथा पिता जी बहुत कुछ विरोध करते रहे, किन्तु माताजी ने मुझे खर्च दे ही दिया। उसी समय शाहजहांपुर में सेवा समिति का आरम्भ हुआ था। मैं बड़े उत्साह के साथ सेवा समिति में सहयोग देता था। पिता जी तथा दादी को मेरे इस प्रकार के कार्य अच्छे न लगते थे किन्तु माता जी मेरा उत्साह भंग न होने देती थीं जिसके कारण उन्हें बहुधा पिताजी का ताड़ना तथा दण्ड भी सहन करना पड़ता था। वास्तव में मेरी माताजी स्वर्गीय देवी हैं। मुझ में जो कुछ जीवन तथा साहस आया, वह मेरी माता जी तथा गुरुदेव श्री सोमदेव जी की कृपाओं का ही परिणाम है। दादी जी तथा पिता जी मेरे विवाह के लिये बहुत अनुरोध करते, किन्तु माता जी यही कहती कि शिक्षा पा चुकने के बाद ही विवाह करना उचित होगा। माता जी के प्रोत्साहन तथा सद्व्यवहार ने मेरे जीवन में वह दृढ़ता उत्पन्न की कि किसी आपत्ति तथा संकट के आने पर भी मैं ने अपने संकल्प को न त्यागा।

मेरी मां

ग्यारह वर्ष की उम्र में माता जी विवाह कर शाहजहांपुर आई थीं। उस समय आप नितान्त अशिक्षित एक ग्रामीण कन्या के सदृश थीं। शाहजहांपुर आने के थोड़े दिनों बाद श्री० दादीजी ने अपनी छोटी बहिन को बुला लिया। उन्हीं ने गृह—कार्य में

माता जी को शिक्षा दी। थोड़े ही दिनों में माता जी ने सब गृह कार्य को समझ लिया और भोजनादि का ठीक ठीक प्रबन्ध करने लगीं। मेरे जन्म होने के पांच या सात वर्ष बाद आपने हिन्दी पढ़ना आरम्भ किया। पढ़ने का शौक आप को खुद ही पैदा हुआ था। मोहल्ले की संग सहेली जो घर पर आ जाती थीं, उन्हीं में जो कोई शिक्षित थीं, माता जी उन से अक्षर बोध करती। इसी प्रकार घर का सब काम कर चुकने के बाद जो कुछ समय मिल जाता उस में पढ़ना लिखना करतीं। परिश्रम के फल से थोड़े दिनों में ही वे देवनागरी पुस्तकों का अवलोकन करने लगीं। मेरी बहिनों को छोटी आयु में माता जी ही उन्हें शिक्षा दिया करती थीं। जब से मैंने आर्य समाज में प्रवेश किया, तब से माता जी से खूब वार्तालाप होता उस समय की अपेक्षा अब आपके विचार भी कुछ उदार होगये हैं यदि मुझे ऐसी माता न मिलतीं, तो मैं भी अति साधारण मनुष्यकी भांति संसार चक्र में फंसकर जीवन निर्वाह करता। शिक्षादि के अतिरिक्त क्रांतिकारी जीवन में भी आपने मेरी वह सहायता की है जो मेजिनी को उनकी माता ने की थी। यथा समय मैं उन सारी बातों का उल्लेख करूंगा। माता जी का सब से बड़ा आदेश मेरे लिये यही था कि किसी की प्राण हानि न हो। उन का कहना था कि अपने शत्रु को भी कभी प्राण दण्ड न देना। आपके इस आदेश की पूर्ति करने के लिये मुझे मजबूरन दो एक बार अपनी प्रतिज्ञा भंग भी करनी पड़ी थी।

जन्मदात्री जननी, इस जीवन में तो तुम्हारा ऋण परिशोध करने के प्रयत्न करने का भी अवसर न मिला इस जन्म में तो क्या यदि अनेक जन्मों में भी सारे जीवन प्रयत्न करूं तो

तुम से उऋण नहीं हो सकता। जिस प्रेम तथा दृढ़ता के साथ तुम ने इस तुच्छ जीवन का सुधार किया है, वह अवर्णनीय है मुझे जीवन की प्रत्येक घटना का स्मरण है कि तुम ने किस प्रकार अपनी दैवी वाणी का उपदेश करके मेरा सुधार किया है। तुम्हारी दया से ही मैं देश सेवा में संलग्न हो सका। धार्मिक जीवन में भी तुम्हारे ही प्रोत्साहन ने सहायता दी। जो कुछ शिक्षा मैं ने ग्रहण की उस का भी श्रेय तुम्हीं को है। जिस मनोहर रूप से तुम मुझे उपदेश करती थीं उसका स्मरण कर तुम्हारी स्वर्गीय मूर्तिका ध्यान आ जाता और मस्तक नत हो जाता है। तुम्हें यदि मुझे ताड़ना भी देनी हुई तो बड़े स्नेह से हर एक बात को समझा किया। यदि मैं ने धृष्टता पूर्ण उत्तर दिया तब तुम ने प्रेम भरे शब्दों में यही कहा कि तुम्हें जो अच्छा लगे वह करो, किन्तु ऐसा करना ठीक नहीं इसका परिणाम अच्छा न होगा। जीवनदात्री! तुमने इस शरीर को जन्म देकर केवल पालन पोषण ही नहीं किया किन्तु आत्मिक, धार्मिक तथा सामाजिक उन्नति में तुम्हीं मेरी सदैव सहायक रहीं। जन्म - जन्मान्तर परमात्मा ऐसी ही माता दें! यही इच्छा है।

महान से महान संकट में भी तुमने मुझे अधीर न होने दिया। सदैव अपनी प्रेम भरी वाणी को सुनाते हुये मुझे सान्त्वना देती रहीं। तुम्हारी दया की छाया में मैं ने अपने जीवन भर में कोई कष्ट न अनुभव किया। इस संसार में मेरी किसी भी भोग विलास तथा ऐश्वर्यकी इच्छा नहीं। केवल एक तृष्णा है। वह यह कि एक बार श्रद्धा पूर्वक तुम्हारे चरणों की सेवा करके अपने जीवन को सफल बना लेता। किन्तु यह इच्छा पूर्ण होती नहीं दिखाई देती, और तुम्हें मेरी मृत्यु का दुख सम्वाद सुनाया जावेगा। मां मुझे विश्वास है कि तुम

यह समझ कर धैर्य धारण करोगी कि तुम्हारा पुत्र माताओं की माता—भारतमाता की सेवा में अपने जीवन को बलि वेदी की भेंट कर गया और उसने तुम्हारी कुक्ष को कलङ्कित न किया; अपनी प्रतिज्ञा में दृढ़ रहा। जब स्वाधीन भारतका इतिहास लिखा जावेगा, तो उसके किसी पृष्ठ पर उज्ज्वल अक्षरों में, तुम्हारा भी नाम लिखा जावेगा। गुरु गोविन्दसिंह जी की धर्म-पत्नी ने जब अपने पुत्रों की मृत्यु का सम्वाद सुना था तो बहुत हर्षित हुई और गुरु के नाम पर धर्म-रक्षार्थ अपने पुत्रों के बलिदान पर मिठाई बांटी थी। जन्मदात्री! वर दो कि अन्तिम, समय भी मेरा हृदय किसी प्रकार विचलित न हो और तुम्हारे चरण कमलों को प्रणाम कर मैं परमात्मा का स्मरण करता हुआ शरीर त्याग करूं।

मेरे गुरुदेव

माता जी के अतिरिक्त जो कुछ जीवन तथा शिक्षा मैंने प्राप्त की वह पूज्यपाद श्री १०८ स्वामी सोमदेव जी की कृपा का परिणाम है। आपका नाम श्रीयुत ब्रजलाल चौपड़ा था। पञ्जाब के लाहौर शहर में आपका जन्म हुआ था। आपका कुटुम्ब प्रसिद्ध था, क्योंकि आपके दादा महाराज रणजीतसिंह के मन्त्रियों में से एक थे। आपके जन्म के कुछ समय पश्चात आप की माता का देहान्त हो गया था। आपकी दादी ने ही आपका पालन-पोषण किया था। आप अपने पिता की अकेली सन्तान थे। जब आप बड़े हुए तो चाचियों ने दो तीन बार आपको ज़हर देकर मार देने का प्रयत्न किया, ताकि उनके लड़कों को ही जायदाद का अधिकार मिल जावे। आपके चाचा आप पर बड़ा स्नेह करते थे, और शिक्षादि की ओर विशेष ध्यान रखते थे। अपने चचेरे भाइयों के साथ

साथ आप भी अङ्गरेज़ी स्कूल में पढ़ते थे। जब आपने इंट्रेंस की परीक्षा दी तो परीक्षा फल प्रकाशित होने पर आप यूनिवर्सिटी में प्रथम आये और चचा के लड़के फेल हो गये। घर में बड़ा शोक मनाया गया। दिखाने के लिये भोजन तक नहीं बना। आपकी प्रशंसा तो दूर, किसी ने उस दिन भोजन करने को भी न पूछा, और बड़ी उपेक्षा की दृष्टि से देखा। आप का हृदय पहले से ही घायल था; इस घटना से आपके जीवन को और भी बड़ा आघात पहुंचा। चाचा जी के कहने सुनने पर कालेज में नाम लिखा तो लिया, किन्तु बड़े उदासीन रहने लगे। आप के हृदय में दया बहुत थी। बहुधा अपनी किताबें तथा कपड़े दूसरे सहपाठियों को बांट दिया करते थे। नये कपड़े बांटकर पुराने कपड़ स्वयं पहना करते थे। एक दो बार चाचा से दूसरे लोगों ने कहा कि श्री० ब्रजलाल को कपड़े भी आप नहीं बनवा देते, जो वह पुराने फटे कपड़े पहने फिरते हैं। चाचा को बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि उन्होंने कई जोड़े कपड़े थोड़े दिनों पहिले ही बनवाये थे। आपके सन्दूकों की तलाशी ली गई। उनमें दो चार जोड़ी पुराने कपड़े निकले, तब चाचा ने पूछा तो मालूम हुआ कि वे नये कपड़े निर्धन विद्यार्थियों को बांट दिया करते हैं। चाचा जी ने कहा जब कपड़े बांटने की इच्छा हो कह दिया करो, तो हम विद्यार्थियों को कपड़े बनवा दिया करेंगे, अपने कपड़े न बांटा करो। वे बहुधा निर्धन विद्यार्थियों को अपने घर पर ही भोजन कराया करते थे। चाचियों तथा चचाज़ात भाइयों के व्यवहार से आपको बड़ा क्लेश होता था। इसी कारण से आपने विवाह न किया। घरेलू दुर्व्यवहार से दुःखित हो कर आपने घर त्याग देने का निश्चय कर लिया और एक रात को जब सब सो रहे थे, चुप चाप उठकर घर से निकल गये। कुछ भी सामान साथ में न लिया। बहुत दिनों तक

इधर उधर भटकते रहे। भटकते भटकते आप हरद्वार पहुंचे। वहां एक सिद्ध योगी से भेंट हुई। श्री० ब्रजलाल जी को जिस वस्तु की इच्छा थी वह प्राप्त हो गई। उसी स्थान पर रह कर श्री० ब्रजलाल जी ने योग विद्या की पूर्ण शिक्षा पाई। योगीराज की कृपा से आप अट्ठारह बीस घण्टे की समाधि लगा लेने लगे। कई वर्ष तक आप वहां रहे इस समय आप को योग का इतना अभ्यास हो गया था कि अपने शरीर को वे इतना हल्का कर लेते थे कि पानी पर पृथ्वी के समान चले जाते थे। अब आप को देश भ्रमण तथा अध्ययन करने की इच्छा उत्पन्न हुई। अनेक स्थानों में भ्रमण करते हुए अध्ययन करते रहे। जर्मनी तथा अमेरिका से बहुत सी पुस्तकें मंगाई, जो शास्त्रों के सम्बन्ध में थीं। जब लाला लाजपतराय को देश—निर्वासन का दण्ड मिला था, उस समय आप लाहौर में थे। वहाँ उन्होंने एक समाचार पत्र की सम्पादकी के लिये डिक्लेरेशन दाखिल किया। डिप्टी कमिश्नर उस समय किसी के भी समाचार पत्रके डिक्लेरेशन को स्वीकार न करता था। जब आप से भेंट हुई, तो वह बड़ा प्रभावित हुआ, और उस ने डिक्लेरेशन मंजूर कर लिया। अखबार का पहला ही अग्रलेख "अंग्रेजों को चेतावनी" के नाम से निकाला। लेख इतना उत्तेजना पूर्ण था कि थोड़ी देर में ही समाचार पत्र की सब प्रतियां बिक गईं और जनता के अनुरोध पर उसी अङ्क का दूसरा संस्करण प्रकाशित करना पड़ा। डिप्टी कमिश्नर के पास रिपोर्ट हुई। उस ने आप को दर्शनार्थ बुलाया। वह बड़ा क्रोधित था। लेख को पढ़ कर कांपता, और क्रोध में आकर मेज़ पर हाथ दे मारता था। किन्तु अन्तिम शब्दों को पढ़ कर वह चुप हो जाता। उस लेख के शब्द यों थे कि 'यदि अंग्रेज अब भी न समझेंगे तो वह दिन दूर नहीं कि

सन् ५७ के दृश्य फिर दिखाई दें और अंग्रेजों के बच्चों का क़तल किया जावे, उनकी रमणियों की वेइज्ज़ती हो इत्यादि।' किन्तु यह सब स्वप्न है।' 'यह सब स्वप्न है,' इन्हीं शब्दों को पढ़ कर डिप्टी कमिश्नर कहता कि हम तुम्हारा कुछ नहीं कर सकते।

स्वामी सोमदेव भ्रमण करते हुए बम्बई पहुंचे। वहां पर आप के उपदेशोंको सुन कर जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ा। एक व्यक्ति, जो श्रीयुत अबुलकलाम आज़ाद के बड़े भाई थे, आप के व्याख्यान सुन कर मोहित हो गये। वह आप को अपने घर लिवा ले गये। इस समय तक आप गेरुआ कपड़ा न पहिनते थे। केवल एक लुंगी और कुरता पहनते थे और साफा बांधते थे। श्रीयुत अबुलकलाम आज़ाद के पूर्वज अरब के निवासी थे। आप के पिता के बम्बई में बहुत से मुरीद थे और कथा की तरह कुछ धार्मिक ग्रन्थ पढ़ने पर हजारों रुपये चढ़ावे में आया करते थे। वह सज्जन इतने मोहित हो गये कि उन्होंने धार्मिक कथाओं का पाठ करने के लिये जाना छोड़ दिया। वह दिन रात आप के पास ही बैठे रहते। जब आप उनसे कहीं जानेको कहते तो वह रोने लगते और कहते कि मैं तो आपके आत्मिक ज्ञान के उपदेशों पर मोहित हूं। मुझे संसारमें किसी वस्तु की भी इच्छा नहीं। आपने एक दिन क्रोधित हो कर उन के शरीर से एक चपत मार दी जिस से वह दिन भर रोते रहे। उन को घर वालों तथा शिष्योंने बहुत कुछ समझाया, किन्तु वह धार्मिक कथा कहने न जाते। यह देख कर उनके मुरीदों को बड़ा क्रोध आया कि हमारे धर्म गुरु एक काफ़िर के चक्कर में फंस गये हैं। एक दिन सन्ध्या को स्वामी जी अकेले समुद्र के तट पर भ्रमण करने गये थे कि कई मुरीद मकान पर बन्दूक ले कर स्वामी जी को मार डालने के लिये आये। यह समाचार

जान कर उन्हों ने स्वामी जी के प्राणों का भय देख स्वामी जी से बम्बई छोड़ देने की प्रार्थना की। प्रातःकाल एक स्टेशन पर स्वामी जी को तार मिला कि आपके प्रेमी श्रीयुत अबुलकलाम आज़ाद के भाई साहब ने आत्महत्या करली। तार पा कर आप को बड़ा क्लेश हुआ। जिस समय आपको इन बातों का स्मरण हो आता था, तो बड़े दुःखी होते थे। एक दिन सन्ध्या के समय मैं आपके निकट बैठा हुआ था अंधेरा काफी हो गया था। स्वामी जी ने बड़ी गहरी ठण्डी सांस ली, मैं ने चेहरे की ओर देखा तो आंखों से आंसू बह रहे थे। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ मैं ने कई घंटे प्रार्थना की तब आप ने उपरोक्त विवरण सुनाया।

अंग्रेजी की योग्यता आप को बड़ी उच्च कोटि की थी। शास्त्र विषयक आप का ज्ञान बड़ा गम्भीर था। आप बड़े निर्भीक वक्ता थे। आप की योग्यता को देख कर एक बार मद्रास की कांग्रेस कमेटी ने अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस का प्रतिनिधि चुन कर भेजा था। आगरा की आर्यमित्र सभा के वार्षिकोत्सव पर आप के व्याख्यानों को श्रवण कर राजा महेन्द्र प्रताप जी बड़े मुग्ध हुये थे। राजा साहब ने आप के पैर छुये और अपनी कोठी पर लिवा ले गये। उस समय से राजा साहब बहुधा आपके उपदेश सुना करते और आप को अपना गुरू मानते थे। इतना साफ़ निर्भीक बोलने वाला मैं ने आज तक नहीं देखा। सन् १९१२ ई० में मैं ने आप का पहला व्याख्यान शाहजहांपुर में सुना था। आर्य समाज के वार्षिकोत्सव पर आप पधारे थे। उस समय आप बरेली में निवास करते थे। आपका शरीर बहुत ही कृश था क्योंकि आप को एक अद्भुत रोग हो गया था। आप जब शौच जाते थे, तब आप के खून गिरता था। कभी दो छटांक, कभी चार छटांक और कभी कभी तो एक सेर

तक खून गिर जाता था। आपको बवासीर नहीं थी । ऐसा
कहते थे कि किसी प्रकार योग की क्रिया बिगड़ जाने से पेट
की आंत में कुछ विकार उत्पन्न हो गया। आंत सड़ गई। पेट
चिरवा कर आंत कटवाना पड़ी और तभीसे वह रोग हो गया था,
बड़े बड़े वैद्य डाक्टरों की औषधि की किन्तु कुछ लाभ न हुआ।
इतने कमज़ोर होने पर भी जब व्याख्यान देते तब इतने ज़ोर से
बोलते कि तीन चार फरलांग मे आपका व्याख्यान साफ़
सुनाई देता था। दो तीन वर्ष तक आप को हर साल आर्य
समाज के वार्षिकोत्सव पर बुलाया जाता। सन १९१५ ई० में
कतिपय सज्जनों की प्रार्थना पर आप आर्य समाज मन्दिर शाह-
जहांपुर में ही निवास करने लगे। इसी समय मे मैंने आप की
सेवा-सुश्रूषा में समय व्यतीत करना आरम्भ कर दिया।

स्वामी जी मुझे धार्मिक तथा राजनैतिक उपदेश देते थे
और इस प्रकार की पुस्तकें पढ़ने का भी आदेश करते थे । राज-
नीति में भी आपका ज्ञान उच्च कोटि का था। लाला हर दयाल
से आप से बहुत परामर्श होता था। एक बार महात्मा मुन्शी-
राम जी (स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी) को आपने पुलिस के
प्रकोप से बचाया। आचार्य रामदेव जी तथा श्रीयुत कृष्ण जी
से आपका बड़ा स्नेह था । राजनीति में आप मुझ से अधिक
खुलते न थे। आप मुझसे बहुधा कहा करते थे कि इन्ट्रेन्स
पास कर लेने के बाद योरुप यात्रा अवश्य करना । इटली जा
कर महात्मा मेज़िनी की जन्मभूमि के दर्शन अवश्य करना।
सन १९१६ ई० में लाहौर षड्यन्त्र का मामला चला। मैं समा-
चार पत्रों में उस का सब वृतान्त बड़े चाव से पढ़ा करता था।
श्रीयुत भाई परमानन्द जी में मेरी बड़ी श्रद्धा थी क्योंकि उनकी
लिखी हुई 'तवारीख हिन्द' पढ़ कर मेरे हृदय पर बड़ा प्रभाव

पढ़ा था। लाहौर षड्यन्त्र का फ़ैसला अख़बारों में छपा। श्री भाई परमानन्द जी को फांसी की सज़ा पढ़ कर मेरे शरीर में आग लग गई। मैं ने विचारा कि अंग्रेज़ बड़े अत्याचारी हैं, इन के राज्य में न्याय नहीं, जो इतने बड़े महानुभाव को फांसी की सज़ा का हुक्म दे दिया। मैं ने प्रतिज्ञा की कि इसका बदला अवश्य लूंगा। जीवन भर अंगरेज़ी राज्य को विध्वंस करने का प्रयत्न करता रहूंगा। इस प्रकार की प्रतिज्ञा कर चुकने के पश्चात् मैं स्वामी जी के पास आया। सब समाचार सुनाये और अख़बार दिया। अख़बार पढ़कर स्वामी जी भी बड़े दुःखित हुये तब मैं ने अपनी प्रतिज्ञा के सम्बन्ध में कहा। स्वामी जी कहने लगे कि प्रतिज्ञा करना सरल है, किन्तु उस पर दृढ़ रहना कठिन है। मैं ने स्वामी जी को प्रणाम कर उत्तर दिया कि यदि श्री चरणों की कृपा बनी रहेगी तो प्रतिज्ञा पूर्ति में किसी प्रकार की त्रुटि नहीं करूंगा। उस दिनसे स्वामी जी कुछ २ खुले। वे बहुत सी बातें बताया करते थे। उस ही दिन से मेरे क्रान्तिकारी जीवन का सूत्रपात हुआ। यद्यपि आप आर्य-समाज के सिद्धान्तों को सर्व प्रकारेण मानते थे किन्तु परमहंस रामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ तथा महात्मा कबीरदास के उपदेशों का अधिकतर वर्णन किया करते थे।

मुझ में जो कुछ धार्मिक तथा आत्मिक जीवन में दृढ़ता उत्पन्न हुई, वह स्वामी जी महाराज के सदुपदेशों का परिणाम है। आप की दया से ही मैं ब्रह्मचर्य पालन में सफलीभूत हुआ। आपने मेरे भविष्य जीवन के सम्बन्ध में जो जो बातें कहीं थीं। वह अक्षरशः सत्य हुईं। आप कहा करते थे कि दुःख है, कि यह शरीर न रहेगा। और तेरे जीवन में बड़ी विचित्र विचित्र समस्यायें आवेंगी, जिनको सुलझाने वाला कोई न मिलेगा। यदि

यह शरीर नष्ट न हुआ, जो असम्भव है, तो तेरा जीवन भी संसार में एक आदर्श जीवन होगा। मेरा दुर्भाग्य था कि जब आपके अन्तिम दिन बहुत निकट आ गये, तब आप ने मुझे योगाभ्यास सम्बन्धी कुछ क्रियाएँ बताने की इच्छा प्रकट की किन्तु आप इतने दुर्बल हो गये थे कि ज़रा सा परिश्रम करते था दश बीस कदम चलने पर ही आप को बेहोशी आ जाती थी। आप फिर कभी इस योग्य न हो सके कि कुछ देर बैठकर कुछ कियायें मुझे बता सकते। आप ने कहा था मेरा योग भ्रष्ट हो गया। प्रयत्न करूंगा, मरण समय पास रहना मुझसे पूछ लेना कि मैं कहां जन्म लूंगा। सम्भव है कि मैं बता सकूं। नित्य प्रति सेर आध सेर खून गिर जाने पर भी आप कभी क्षोभित न होते थे। आपकी आवाज़ भी कभी कमज़ोर न हुई। जैसे अद्वितीय आप वक्ता थे, वैसे ही आप लेखक भी थे। आप के कुछ लेख तथा पुस्तकें आपके एक भक्त के पास थीं जो योंही नष्ट होगईं। कुछ लेख तथा पुस्तकें श्री० स्वामी अनुभवानन्द जी शान्ति ले गये थे। कुछ लेख आपने प्रकाशित भी कराये थे। लगभग ४८ वर्ष की उम्र में आपने इहलोक त्याग किया। इस स्थान पर मैं महात्मा कबीरदास जी के कुछ अमृत वचनों का उल्लेख करता हूं, जो मुझे बड़े प्रिय तथा शिक्षाप्रद मालूम हुये :—

'कबीरा' यह शरीर सराय है इस में भाड़ा देके बस।
जब भटियारी खुश रहेगी तब जीवन का रस ॥ १ ॥
'कबीरा' क्षुधा है कूकरी करत भजन में भंग।
याको टुकरा डारि के सुमिरन करो निशङ्क ॥ २ ॥
नींद निसानी मीच की उठ 'कबीरा' जाग।
और रसायन त्याग के नाम रसायन चाख ॥ ३ ॥

चलना है रहना नहीं चलना विसवे बीस।
'कबीरा' ऐसे सुहाग पर कौन बंधावे सीस ॥ ४ ॥
अपने अपने चोर को सब कोई डारे मारि।
मेरा चोर जो मोहि मिले सर्वस डारूं वारि ॥ ५ ॥
कहा सुना की है नहीं देखा देखी बात।
दूल्हा दुल्हिन मिलि गये सूनी परी बरात ॥ ६ ॥
नैनन को करि कोठरी पुतरी पलंग बिछाय।
पलकन की चिक डारि के पीतम लेहु रिझाय ॥ ७ ॥
प्रेम पियाला जो पिये सीस दक्षिना देय।
लोभी सीस न दे सके नाम प्रेम का लेय ॥ ८ ॥
सीस उतारे भुंइ धरै तापै राखे पांव।
दास 'कबीरा' यूं कहे ऐसा होय तो आव ॥ ९ ॥
निन्दक नियरे राखिये आंगन कुटी बनाय।
बिन पानी साबुन बिना उज्वल करे सुभाय ॥ १० ॥

ब्रह्मचर्य व्रत पालन।

वर्तमान समय में इस देश की कुछ ऐसी दुर्दशा हो रही है कि जितने धनी तथा गण्य मान्य व्यक्ति हैं उनमें ९९ प्रति शत ऐसे हैं जो अपनी सन्तान रूपी अमूल्य धन राशि को अपने नौकर तथा नौकरानियों के हाथ में सौंप देते हैं। उन की जैसी इच्छा हो वे उन्हें बनावें। मध्यम श्रेणी के व्यक्ति भी अपने व्यवसाय तथा नौकरी इत्यादि में फँसे रहने के कारण सन्तान की ओर अधिक ध्यान नहीं दे सकते। सस्ता काम चलाऊ नौकर या नौकरानी रखते हैं और उन्हीं पर बाल बच्चों का भार सौंप देते हैं, ये नौकर बच्चों को तो नष्ट करते हैं। यदि कुछ भगवान् की दया हो गई, और बच्चे नौकर नौकरानियों के हाथ से बच गये, तो मौहल्ले की गन्दगी से बचना बड़ा कठिन है। बाकी रहेसहे

स्कूल में पहुंच कर पारंगत हो जाते हैं। कालेज पहुंचते पहुंचते आज कल के नवयुवकों के सोलहों संस्कार हो जाते हैं। कालेज में पहुंच कर ये लोग समाचार पत्रों में दिये हुये औषधियों के विज्ञापन देख देख कर दवाइयों को मंगा मंगा कर धन नष्ट करना आरम्भ करते हैं। ६५ प्रति सैकड़ा की आंखें खराब हो जाती हैं। कुछ को शारीरिक दुर्बलता तथा कुछ को फैशन के विचार से ऐनक लगाने की बुरी आदत पड़ जाती है। सौन्दर्योपासना तो उनकी रग रग में कूट कूट कर भर जाती है। स्यात् कोई ही विद्यार्थी ऐसा हो जिसकी प्रेम कथायें प्रचलित न हों। ऐसी अजीब अजीब बातें सुनने में आती हैं कि जिन का उल्लेख करने से ग्लानि होती है। यदि कोई विद्यार्थी सच्चरित्र बनने का प्रयत्न भी करता है और स्कूल या कालेज जीवन में उसे कुछ अच्छी शिक्षा भी मिल जाती है तो परिस्थितियां, जिन में उसे निर्वाह करना पड़ता है, उसे सुधरने नहीं देतीं। वे विचारते हैं कि थोड़ा सा इस जीवन का आनन्द ले लें, यदि कुछ खराबी पैदा हो गई तो दवाई खाकर या पौष्टिक पदार्थों का सेवन करके दूर कर लेंगे। यह उनकी बड़ी भारी भूल है। अंग्रेजी की कहावत है 'Only for once and for ever' तात्पर्य यह है कि यदि एक समय कोई बात पैदा हुई, मानो सदा के लिये रास्ता खुल गया। दवाइयां कोई लाभ नहीं पहुंचाती। अंडों जूस, मछलीके तेल, मांस आदि पदार्थ भी व्यर्थ सिद्ध होते हैं। सबसे आवश्यक बात चरित्र सुधारना ही होती है। विद्यार्थियों तथा उनके अध्यापकों को उचित है कि वे देश की दुर्दशा पर दया करके अपने चरित्र को सुधारने का प्रयत्न करें। संसार में ब्रह्मचर्य ही सारी शक्तियों का मूल है। बिना ब्रह्मचर्य व्रत पालन किये मनुष्य जीवन नितान्त शुष्क तथा नीरस प्रतीत होता है। विद्या, बल तथा बुद्धि सब ब्रह्मचर्य के प्रताप से ही प्राप्त होते हैं।

संसार में जितने बड़े आदमी हुये हैं, उनमें से अधिकतर ब्रह्मचर्य व्रत के प्रताप से ही बड़े बने और सैकडों हजारों वर्षके बाद भी उनका यश गान करके मनुष्य अपने आपको कृतार्थ करते हैं। ब्रह्मचर्य की महिमा यदि जानना हो तो परशुराम, राम, लक्ष्मण, कृष्ण, भीष्म, ईसा, मेज़िनी, बंदा, रामकृष्णा, दयानन्द तथा राममूर्ती की जीवनियों का अध्ययन करो।

जिन विद्यार्थियों को बाल्यवस्था में किसी कुटेव की बान पड़ जाती है, या जो बुरी संगत में पड़ कर अपना आचरण बिगाड़ लेते हैं और फिर अच्छी शिक्षा पाने पर आचरण सुधारने का प्रयत्न करते हैं, परन्तु सफल मनोरथ नहीं होते, उन्हें निराश न होना चाहिये। मनुष्य जीवन अभ्यासों का एक समूह है। मनुष्य के मन में भिन्न भिन्न प्रकार के अनेक विचार तथा भाव उत्पन्न होते रहते, हैं उनमें से जो उसे रुचिकर होते हैं, वे प्रथम कार्य रूप में परिणत होते हैं। क्रिया के बार बार होने से उसमें से ऐच्छिक भाव निकल जाता है और उसमें तात्कालिक प्रेरणा उत्पन्न होजाती है। इन तात्कालिक प्रेरक क्रियाओं को, जो पुनरावृत्ति का फल है अभ्यास कहते हैं। मानवी चरित्र इन्हीं अभ्यासों द्वारा बनता है। अभ्यास से तात्पर्य आदत, स्वभावबान है। अभ्यास अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के होते हैं। यदि हमारे मनमें निरन्तर अच्छे विचार उत्पन्न हों, तो उनका फल अच्छे अभ्यास होंगे, और यदि मन बुरे विचारों में लिप्त रहे, तो निश्चय रूपेण अभ्यास बुरे होंगे। मन इच्छाओं का केन्द्र हैं। उन्हीं की पूर्ति के लिये मनुष्य को प्रयत्न करना पड़ता हैं। अभ्यासों के बनने में पैत्रिक संस्कार, अर्थात माता पिता के अभ्यासों के अनुसार अनुकरण ही बच्चों के अभ्यास का सहायक होता हैं। दूसरे जैसी परिस्थितियों में निवास होता है, वैसे ही

अभ्यास भी पड़ते हैं। तीसरे प्रयत्न से भी अभ्यासों का निर्माण होता है। यह शक्ति इतनी प्रबल होसकती है कि इसके द्वारा मनुष्य पैत्रिक संस्कार तथा परिस्थितियों को भी जीत सकता है। हमारे जीवन का प्रत्येक कार्य जब अभ्यासों के आधीन है। यदि अभ्यासों द्वारा हमें कार्य में सुगमता प्रतीत न होती, तो हमारा जीवनबड़ा दुःख मय प्रतीत होता। लिखने का अभ्यास, वस्त्र पहिनना, पठन पाठन इत्यादि इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। यदि हमें प्रारम्भिक समय की भांति सदैव सावधानी से काम लेना हो तो कितनी कठिनता प्रतीत हो। इसी प्रकार बालक का खड़ा होना और चलना भी है कि उस समय वह क्या कष्ट अनुभव करता है; किन्तु एक मनुष्य मीलों चला जाता है। बहुत लोग तो चलने चलते नींद भी ले लेते हैं। जेल में बाहरी दीवार पर घड़ी में चाबी लगाने वाले जिन्हें बराबर छः घंटे चलना होता है, वे बहुधा बजाने चलते सो लिया करते हैं।

मानसिक भावों को शुद्ध रखते हुये अन्तःकरण को उच्च विचारों में बल पूर्वक संलग्न करने का अभ्यास करने से अवश्य सफलता होगी। प्रत्येक विद्यार्थी या नव युवक को जो कि ब्रह्मचर्य-व्रत के पालन की इच्छा रखता है उचित है कि अपनी दिनचर्या अवश्य निश्चित करे। खान पानादि का विशेष ध्यान रखे। महात्माओं के जीवन चरित्र तथा चरित्र संगठन सम्बन्धी पुस्तकों का अवलोकन करे। प्रेमालाप तथा उपन्यासों में समय नष्ट न करे। खाली समय अकेला न बैठे। जिस समय कोई बुरे विचार उत्पन्न हों तुरन्त शीतल जल पान कर घूमने लगे, या किसी अपने से बड़े के पास जाकर बातचीत करने लगे। अश्लील (इश्क भरी) गजलें, शेरें तथा गानों को न पढ़े और न सुने। स्त्रियों के दर्शन से बचता रहे। माता तथा बहिन से भी

एकान्त में न मिले। सुन्दर सहपाठियों या अन्य विद्यार्थियों से स्पर्श तथा आलिंगन की भी आदत न डाले।

विद्यार्थी प्रातः काल सूर्य उदय होनेसे एक घन्टा पहिलें शय्या त्याग कर शौचादि से निवृत हो व्यायाम करे, या वायु सेवनार्थ बाहर मैदान में जावे। सूर्य उदय होनेके पांच दस मिनट पूर्व स्नान से निवृत्त हो कर यथा विश्वास परमात्मा का ध्यान करे। सदैव कुंए के ताजे जल से स्नान करे। यदि कुंए का जल प्राप्त न हो तो जाड़ों में जल को थोड़ा सा गुनगुना करले और गर्मियों में शीतल जल से स्नान करे। स्नान करने के पश्चात् एक खुरखुरे तौलिया अंगौछा से खूब शरीर मले। उपासना के पश्चात थोड़ा सा जलपान करे। कोई फल शुष्क मेवा दुग्ध अथवा सब से उत्तम यह है कि गेहूं का दलिया रंधवा कर यथा रुचि मीठा या नमक डाल कर खावे। फिर अध्ययन करे और दश बजे से ग्यारह बजे के मध्य में भोजन कर लेवे। भोजनों में मांस, मछली, चर्परे खट्टे गरिष्ठ, बासी तथा उत्तेजक पदार्थों का त्याग करे। प्याज लहसुन, लाल मिर्च, आम की खटाई और अधिक मसालेदार भोजन कभी न खायें। सात्विक भोजन करे। शुष्क भोजनों का भी त्याग करे। जहां तक हो सके सब्जी अर्थात् साग अधिक खावे। भोजन खूब चबा चबा कर करे। अधिक गरम या अधिक ठण्डा भोजन भी वर्जित है। स्कूल अथवा कालेज़ से आकर थोड़ा सा आराम कर के एक घण्टा लिखने का काम कर के खेल ने के लिये जावे। मैदान में थोड़ा सा घूमे भी। घूमने के लिये चौक बाजार की गन्दी हवा में जाना ठीक नहीं। स्वच्छ वायु का सेवन करे। सन्ध्या समय भी शौच अवश्य जावे। थोड़ा सा ध्यान कर के हल्का सा भोजन कर ले। यदि हो सके तो रात्रि के समय केवल दुग्ध पीने का अभ्यास डाले, या फल खा लिया करे।

स्वप्न दोषादिक व्याधियाँ केवल पेट के भारी होने से ही होती हैं। जिस दिन भोजन भली भांति नहीं पचता, उस दिन विकार हो जाता है, या मानसिक भावनाओं की अशुद्धता से निद्रा ठीक न आकर स्वप्नावस्था में वीर्यपात होजाता है ; रात्रि के समय साढ़े दस बजे तक पठन पाठन करे, पुनः सो जावे। सोना सदैव खुली हवा में चाहिये। बहुत मुलायम चिकने बिस्तर पर न सोवे। जहां तक होसके, लकड़ी के तख्त पर कम्बल या गाढ़े की चद्दर बिछा कर सोवे। अधिक पाठ करना हो तो साढ़े नौ या दस पर सो जावे। प्रातःकाल ३½ या ४ बजे उठ कर कुल्ला कर के शीतल जल पान करे और शौच से निवृत हो पठन पाठन करे। सूर्योदय के निकट फिर नित्य की भांति व्यायाम या भ्रमण करे। सब व्यायामों में दण्ड बैठक सर्वोत्तम है जहां जी चाहा व्यायाम कर लिया। यदि हो सकै तो प्रोफ़ेसर राममूर्ति की विधि से दण्ड तथा बैठक करे। प्रोफेसर साहब रीति विद्यार्थियों के लिये बड़ी लाभदायक है थोड़े समय में ही पर्याप्त परिश्रम हो जाता है। दण्ड बैठक के अलावा शीर्षासन और पद्मासन का भी अभ्यास करना चाहिये और अपने कमरे में वीरों और महात्माओं के चित्र रखना चाहिये।
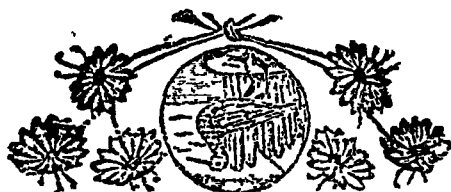
द्वितीय खण्ड ।

स्वदेश-प्रेम
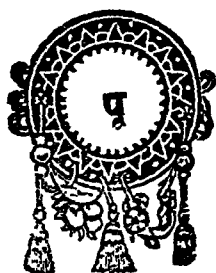
ज्यपाद श्री० स्वामी सोमदेव का देहान्त हो जाने के पश्चात जब से अंग्रेजी के नवें दर्जे में आया कुछ स्वदेश सम्बन्धी पुस्तकों का अवलोकन आरम्भ हुआ। शाहजहांपुर में सेवा समिति की नींव पं० श्रीराम बाजपेयी जी ने डाली, उस में भी बड़े उत्साह से कार्य किया। दूसरों की सेवा का भाव हृदय में उदय हुआ। कुछ समझ में आने लगा कि वास्तव में देश वासी बड़े दुःखी हैं। उसी वर्ष मेरे पड़ोसी तथा मित्र जिन से मेरा स्नेह अधिक था, इन्ट्रेंस की परीक्षा पास कर के कालेज में शिक्षा पाने को चले गये। कालेज के स्वतन्त्र वायु में उन के हृदय में भी स्वदेश के भाव उत्पन्न हुये। उसी साल लखनऊ में अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस का उत्सव हुआ। मैं भी उस में सम्मिलित हुआ, कतिपय सज्जनों से भेंट हुई। कुछ देश दशा का अनुमान हुआ, और निश्चय हुआ कि देश के लिये कुछ विशेष कार्य किया जावे। देश में जो कुछ भी हो रहा है, उस का उत्तरदायी सरकार ही है। भारतवासियों के दुःख तथा दुर्दशा की जिम्मेदारी गवर्नमेंट पर ही है, अतएव सरकार को पलटने का प्रयत्न करना चाहिये। मैं ने भी इस प्रकार के विचारों में योग दिया। कांग्रेस में महात्मा तिलक के पधारने की खबर थी, इस कारण से गरम दल के अधिक व्यक्ति आये हुये थे, कांग्रेस

के सभापति का स्वागत बड़ी धूमधाम से हुआ। उस के दूसरे दिन लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की स्पेशल गाडी आने का समाचार मिला। लखनऊ स्टेशन पर बहुत बड़ा जमाव था। स्वागतकारिणी समिति के सदस्यों से मालूम हुआ कि लोकमान्य का स्वागत केवल स्टेशन पर ही किया जावेगा, और शहर में सवारी न निकाली जावेगी। जिस का कारण यह था कि स्वागत कारिणी समिति के प्रधान पं० गोकरणनाथ जी तथा अन्य उदार दल (माडरेटों) वालों की संख्या अधिक थी। माडरेटों को भय था कि यदि लोकमान्य की सवारी शहर में निकाली गई, तो कांग्रेस के प्रधान से भी अधिक सम्मान होगा। जिसे वह उचित न समझते थे। अतः उन सब ने प्रबन्ध किया कि जैसे ही लोकमान्य पधारें, उन्हें मोटर में बिठा कर शहर के बाहर २ निकाल ले जावें। इन सब बातों को सुन कर नवयुवकों को बड़ा खेद हुआ। कालेज के एक एम० ए० के विद्यार्थी ने इस प्रबन्ध का विरोध करते हुये कहा कि लोकमा य का स्वागत् अवश्य होना चाहिये। मैं ने भी इस विद्यार्थी के कथन में सहयोग दिया। इसी प्रकार कई नवयुवकों ने निश्चय किया कि जैसे ही लोकमान्य स्पेशल से उतरें उन्हें घेर कर गाड़ी में बिठा लिया जावे और सवारी निकाली जावे। स्पेशल आनेपर लोकमान्य सब से पहिले उतरे। स्वागत कारिणी के सदस्यों ने कांग्रेस के स्वयंसेवकों का घेरा बना कर लोकमान्य को मोटर में जा बिठाया। मैं तथा एक एम० ए० का विद्यार्थी मोटर के आगे लेट गये। सब कुछ समझाया गया, मगर किसी की एक न सुनी हम लोगों की देखा देखी और कई नवयुवक भी मोटर के सामने आकर बैठ गये। उस समय मेरे उत्साह का यह हाल था कि मुंह से बात न निकलती थी, केवल रोता था और कहता था कि

'मोटर मेरे ऊपर से निकाल ले जाओ।' स्वागत कारिणी के सदस्यों से कांग्रेस के प्रधान को ले जाने वाली गाड़ी मांगी उन्हों ने देना स्वीकार न किया। एक नवयुवक ने मोटर का टायर काट दिया। लोकमान्य जी बहुत कुछ समझावें किन्तु सुनता कौन? एक किराये की गाड़ी के घोड़े खोलकर लोकमान्य के पैरों पर शिर रख आप को उस में बिठाया, और सब ने मिल कर हाथों से गाड़ी खींचना शुरू की। इस प्रकार लोकमान्य का इस धूमधाम से स्वागत हुआ कि किसी नेता की इतनी जोरों से सवारी न निकाली गई। लोगों के उत्साह का हाल था कि कहते थे कि एक बार गाड़ी में हाथ लगा लेने दो, जीवन सुफ़ल हो जावे। लोकमान्य पर फूलों की जो वर्षा की जाती थी उस में से जो फूल नीचे गिर जाते थे उसे उठा कर लोग पल्लू में बांध लेते थे। जिस स्थान पर लोकमान्य के पैर पड़ते, वहां की धूल सब के मत्थों पर दिखाई देती। कोई उस धूल को भी अपने रूमाल में बांध लेते थे। इस स्वागत से माडरेटों की बड़ी भद्द हुई।

क्रान्तिकारी आन्दोलन।

कांग्रेस के अवसर पर लखनऊ में ही मालूम हुआ कि एक गुप्त समिति है, जिस का मुख्य उद्देश्य क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग लेना है। यहीं से क्रान्तिकारी गुप्त समिति की चर्चा सुन कर थोड़े समय व्यतीत होने पर, मैं भी क्रान्तिकारी समिति के कार्य में योग देने लगा। अपने एक मित्र द्वारा क्रान्तिकारी समिति का सदस्य हो गया। थोड़े ही दिन में मैं कार्यकारिणी का सदस्य बना लिया गया। समिति में धन की बहुत कमी थी, उधर हथियारों की भी जरूरत थी। जब घर वापस आया। तब विचार हुआ कि एक पुस्तक प्रकाशित की जावे और उस में जो लाभ हो उस से हथियार खरीदे जावें। पुस्तक प्रकाशित कराने के

लिये धन कहां से आवे ? विचार करते करते, मुझे एक चाल सूझी मैंने अपनी माता जी से कहा ? मैं कुछ रोज़गार करना चाहता हूं। उसमें अच्छा लाभ होगा। यदि आप रुपये दे सकें तो बड़ा अच्छा हो। उन्होंने २००) दिये। 'अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली' नामक पुस्तक लिखी जा चुकी थी। प्रकाशित होने का प्रबन्ध हो गया। थोड़े रुपये की ज़रूरत और पड़ी, मैंने माता जी से २००) और लिये। पुस्तक की विक्री हो जाने पर माता जी के रुपये पहले निपटा दिये। लगभग २००) और भी बचे। पुस्तकें अभी विकने के लिये बहुत बाकी थीं। उसी समय 'देशवासियों के नाम संदेश' नामक एक पर्चा छपवाया गया क्योंकि पं० गेंदालाल जी, ब्रह्मचारी जी के दल सहित ग्वालियर में गिरफ़्तार हो गये थे। अब सब विद्यार्थियों ने अधिक उत्साह के साथ काम करने की प्रतिज्ञा की। पर्चे कई ज़िलों में लगाये गये, और बांटे भी गये। पर्चे तथा "अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली' दोनों संयुक्त प्रान्त की सरकार ने ज़ब्त करली।

हथियारों की ख़रीद।

अधिकतर लोगों का विचार है कि देशी राज्यों में हथियार (रिवाल्वर, पिस्तौल, तथा राइफ़लें इत्यादि) सब कोई रखता है, और बंदूक इत्यादि पर लाइसेन्स नहीं होता। अतएव इस प्रकार के अस्त्र बड़ी सुगमता से प्राप्त हो सकते हैं। देशी राज्यों में हथियारों पर कोई लाइसेन्स नहीं, यह बात विल्कुल ठीक है, और हर एक को बन्दूक इत्यादि रखने की आज़ादी है। किन्तु कारतूसी हथियार बहुत कम लोगों के पास रहते हैं, जिस का कारण यह है कि कारतूस या विलायती बारूद ख़रीदने पर पुलिस में सूचना देनी होती है। राज्य में तो कोई ऐसी दूकान नहीं होती जिस पर कारतूस या कारतूसी हथियार मिल सकें।

यहां तक कि विलायती बारूद और बन्दूक की टोपी भी नहीं मिलनी। क्योंकि ये सब चीज़ें बाहर से मंगानी पड़ती हैं जितनी चीजें इस प्रकारको बाहरसे मंगाई जाती है, उनके लिये रेज़ीडेंट (गवर्नमेंटका प्रतिनिधि जो रियासतोंमें रहता है),—की आज्ञा लेनी पड़ती है बिना रेजीडेन्टकी मंजूरीके हथियारों सम्बन्धी कोई चीज़ बाहर से रियासत में नहीं आ सकती। इस कारण इस खटखटसे बचने के लिये रियासत में ही टोपीदार बन्दूकें बनती हैं, और देशी बारूद भी वहीं के लोग शोरा, गन्धक तथा कोयला मिला कर बना लेते हैं। बन्दूक की टोपी चुरा छिपाकर मंगा लेते हैं। नहीं तो टोपी के स्थान पर भी मनसल और पुटास अलग अलग पीसकर दोनों को मिलाकर उसी से काम चलाते हैं। हथियार रखने की आज़ादी होने पर भी ग्रामों में किसी एक दो धनी या ज़मींदार के यहां टोपीदार बन्दूक या टोपीदार छोटे पिस्तौल होते हैं, जिनमें ये लोग रियासत की बनी हुई बारूद काम में लाते हैं। यह बारूद बरसात में सील खा जाती है और काम नहीं देती। एक बार मैं अकेला रिवाल्वर ख़रीदने गया। उस समय समझता था कि हथियारों की दूकान होगी, सीधे जाकर दाम देंगे और रिवाल्वर लेकर चले आवेंगे। प्रत्येक दूकान देखी, कहीं किसी पर बन्दूक इत्यादि का विज्ञापन या कोई दूसरा निशान न पाया। फिर एक तांगा पर सवार होकर, सब शहर घूमा। तांगे वाले ने पूछा क्या चाहिये। मैंने उससे डरते डरते अपना उद्देश्य कहा। उसी ने दो तीन दिन घूम फिर कर एक टोपीदार रिवाल्वर ख़रीदवा दिया था, और देशी बनी हुई बारूद एक दूकान से दिलादी। मैं कुछ जानता तो था नहीं, एक दम दो सेर बारूद ख़रीदी। जो घर पर सन्दूक में रखे रखे बरसात में सील खाकर पानी होगई। मुझे बड़ा दुःख हुआ। दूसरी बार जब मैं क्रान्तिकारी समिति का

सदस्य हो चुका था, तब, दूसरे सहयोगियों की सम्मति से,
सौ रुपया लेकर हथियार ख़रीदने गया। इस बार मैंने बहुत प्रय
किया तो एक कबाड़ी कैसी दूकान पर कुछ तलवारें, खंजर,क
तथा दो चार टोपीदार बन्दूकें रखी देखीं। मैंने बड़ा साहस क
उससे पूछा कि क्या आप ये चीजें बेचते हैं, उसने जब हां में उ
दिया तो मैंने दो चार चीजें देखीं। दाम पूछे। इसी प्रकार ब
लाप करके पूछा, कि क्या आप कारतूसी हथियार नहीं बेचते
और कहीं नहीं बिकते? तब उसने सब बिवरण सुनाया।
समय उसके पास टोपीदार एक नली के छोटे छोटे दो पिस
थे। मैंने वे दोनों ख़रीद लिये। एक कटार भी ख़रीद दी।
वादा किया कि यदि आप फिर आवें तो कुछ कारतूसी हथि
जुटाने का प्रयत्न किया जावे। लालच बुरी बला है, वाली कह
के अनुसार तथा इसलिये भी कि हम लोगों को कोई दूसरा
ज़रिया भी न था, जहां से हथियार मिल सकते, मैं कुछ
बाद फिर गया। इस समय उसी ने एक बड़ा सुन्दर कार
रिवाल्वर दिया। कुछ पुराने कारतूस दिये। रिव
था तो पुराना, किन्तु बड़ा ही उत्तम था। दाम उसके
के बराबर देने पड़े। अब उसे विश्वास हो गया कि यह हथि
के ख़रीदार हैं। उसने प्राणपण से चेष्टा की और
रिवाल्वर तथा दो तीन रायफलें जुटाईं। उसे भी
लाभ हो जाता था। प्रत्येक वस्तु पर वह बीस तीस रुपये मु
ले लेता था। बाज़ बाज़ चीज़ पर दूना नफ़ा खा लेता

इसके बाद हमारी संस्था के दो तीन सदस्य मिल कर
दूकानदार ने भी हमारी उत्कट इच्छा को देखकर इधर उ
पुराने हथियारों को ख़रीद करके, उनकी मरम्मत क
नया सा कर के हमारे हाथ बेंचना शुरू किया। खू

हम लोग कुछ जानते थे नहीं। इसी प्रकार अभ्यास करने से कुछ नया पुराना समझने लगे। एक दूसरे सिकलीगर से भेंट हुई। वह स्वयं कुछ नहीं जानता था, किन्तु उस ने वचन दिया कि वह कुछ रईसों से हमारी भेंट करा देगा। उसने एक रईस से मुलाकात कराई जिनके पास एक रिवालवर था। रिवालवर खरीदने की हमने इच्छा प्रकट की। उन महाशयने उस रिवालवरके डेढ़ सौ रुपये मांगे। रिवालवर नया था। बड़े कहने सुनने पर सौ कारतूस उन्होंने दिये और १५५) लिये; १५०) उन्होंने स्वयं लिये ५) सिकलीगर को कमीशन के तौर देने पड़े। रिवालवार चमकता हुआ नया था, समझे अधिक दामों का होगा। खरीद लिया। विचार हुआ कि इस प्रकार ठगे जाने से काम न चलेगा। किसी प्रकार कुछ जाननेका प्रयत्न किया जावे। बड़ी कोशिश के बाद कलकत्ता, बम्बई मे बन्दूक विक्रेताओं की लिस्टें मंगा कर देखीं। देखकर आँखें खुल गईं। जितने रिवालवर या बन्दूकें हम ने खरीदी थीं, दो एक को छोड़ सब के दूने दाम दिये थे। १५५) के रिवालवर के दाम केवल ३०) ही थे और १० के सौ कारतूस, इस प्रकार कुल सामान ४०) का था, जिस के बदले १५५) देने पड़े। बड़ा खेद हुआ। करें तो क्या करें और कोई दूसरा जरिया भी तो न था।

कुछ समय पश्चात् कारखानोंकी लिस्टें ले कर तीन चार सदस्य मिल कर गये। खूब जांच तथा खोज की। किसी प्रकार रियासत की पुलिसको पता चल गया। एक खुफिया पुलिस वाला मुझे मिला, उसने कई हथियार दिलाने का वादा किया और वह मुझे पुलिस इंस्पेक्टर के घर पर ले गया। दैवात् उस समय पुलिस इंस्पेक्टर घर पर मौजूद न थे। उनके द्वार पर एक पुलिस का सिपाही बैठा था, जिसे में भलीभांति जानता था। मुहल्ले में खुफिया पुलिसवाले की आंख बचा कर पूछा, कि अमुक घर

किस का है ? मालूम हुआ पुलिस इन्स्पेक्टर का। मैं इतस्ततः कर के जैसे तैसे निकल आया, और अति शीघ्र अपने ठहरने का स्थान बदला। उस समय हम लोगोंके पास दो राइफलें, चार रिवालवर तथा दो पिस्तौल खरीदे हुये मौजूद थे। किसी प्रकार उस खुफिया पुलिस वालेको एक कारीगर से जहां पर कि हम लोग अपने हथियारोंकी मरम्मत कराते थे, मालूम हुआ कि हम में से एक व्यक्ति उसी दिन जाने वाला था। उस ने चारों ओर स्टेशनपर तार दिलवाये। रेल गाड़ियोंकी तलाशी ली गई। पर, पुलिसकी असावधानीके कारण हम बाल बाल बच गये।

रुपये की चपत बुरी होती है। एक पुलिस सुपरिंटेण्डेण्टके पास एक राइफल थी। मालूम हुआ वे बेंचते हैं। हम लोग पहुंचे अपने आपको रियासतका रहनेवाला बतलाया। उन्होंने निश्चय करनेके लिये बहुत से प्रश्न पूछे, क्योंकि हम लोग लड़के तो थे ही। पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट पेन्शनयाफ्ता जाति के मुसलमान थे। हमारी बातोंपर पूर्ण विश्वास न हुआ। कहा अपने थानेदार से लिखा लाओ कि वह तुम्हें जानता है। मैं गया जिस स्थानका रहनेवाला बताया था। वहांके थानेदार का नाम मालूम किया, और एक दो जमींदारों का नाम मालूमकर के एक पत्र लिखा कि मैं उस स्थानके रहने वाले अमुक जमींदारका पुत्र हूं, और वे लोग मुझे भलीभांति जानते हैं। उसी पत्र पर जमींदारों के हिन्दीमें और पुलिस के दारोगाके अंगरेजी में हस्ताक्षर बना करके पत्र ले जाकर पुलिस कप्तान साहब को दिया। बड़े गौरसे देखने के बाद वे बोले मैं थानेमें दरियाफ्त कर लूं। तुम्हें भी थाने चल कर दाखिला देनी होगी कि राइफलें खरीद रहे हैं। हम लोगोंने कहा कि हमने आप के इतमीनान के लिये इतनी मुसीबत झेली, दस बारह रुपये खर्च

े, अगर अब भी इतमीनान न हो तो मजबूरी है। हम पुलिस
 जावेंगे। राइफ़ेल के दाम लिस्टमें १८०) लिखे थे, वह२५०)
ते थे, साथ में दो सौ कारतूस भी दे रहे थे। कारतूस भरनेका
ान भी देते थे, जो लगभग ५०) का होता। इस प्रकार पुरानी
फ़ेल के नई के समान दाम माँगते थे। हम लोग भी २५०)
थे। पुलिस कप्तान ने भी बिचारा पूरे दाम मिल रहे हैं।
यं वृद्ध हो चुके थे। कोई पुत्र भी न था। अतएव २५०) लेकर
इफ़ेल दे दी! पुलिस मे कुछ पूछने न गये। उन्हीं दिनों राज्य
 एक उच्च पदाधिकारी के नौकरको मिला कर उनके यहांसे
ावालवर चोरी कराया। जिसके दाम लिस्टमें ७५) थे, उसे
००) में खरीदा। एक माउज़र पिस्तौल भी चोरी कराया जिसके
ाम लिस्टमें उस समय २००) दिये थे। हमें माउजर पिस्तौल
ी प्राप्तिकी बड़ी उत्कट इच्छा थी। बड़े भारी प्रयत्न के बाद
ह माउजर पिस्तौल मिला, जिसका मूल्य ३००) देना पड़ा।
ारतूस एक भी नहीं मिला। हमारे पुराने मित्र कवाड़ी महोदय
के पास माउज़र पिस्तौलक पच्चास कारतूस पड़े थे। उन्होंने
वड़ा काम दिया। हममें से किसी ने भी पहले माउज़र पिस्तौल
देखा भी न था। कुछ न समझ सके कि कैसे प्रयोग किया जाता
है। बड़े कठिन परिश्रमसे उसका प्रयोग समझमें आया।

हमने तीन राइफलें, एक बारह बोर की दोनाली कारतूसी बन्दूक, दो टोपीदार बन्दूकें, तीन टोपीदार रिवालवर और पांच कारतूसी रिवालवर, खरीदे। प्रत्येक हथियारके साथ पचास या सौ कारतूस भी ले लिये। इन सबमें लगभग चार हजार रुपये व्यय हुए। कुछ कटार तथा तलवारें इत्यादि भी खरीदे थे।

मैनपुरी षड्यन्त्र।

इधर तो हम लोग अपने कार्यमें व्यस्त थे, उधर मैनपुरी

के एक सदस्य पर लीडरी का भूत सवार हुआ। उन्होंने अपना पृथक संगठन किया। कुछ अस्त्र शस्त्र भी एकत्रित किये। धन की कमी की पूर्ति के लिये एक सदस्य से कहा कि अपने किसी कुटुम्बी के यहां डाका डलवाओ। उस सदस्य ने कोई उत्तर न दिया। उसे आज्ञापत्र दिया गया और मार देने की धमकी दी गई। वह पुलिस के पास गया। मामला खुला। मैनपुरी में धर पकड़ शुरूहोगई। हम लोगों को भी समाचारपत्र मिला देहली में कांग्रेस होने वाली थी। विचार किया गया कि 'अमेरिका को स्वधीनता कैसे मिली' नामक पुस्तक, जो यू० पी० सरकार ने ज़ब्त कर ली थी, कांग्रेस के अवसर पर बेच दी जावे। कांग्रेस के उत्सव पर मैं शाहजहांपुर की सेवा समिति के साथ अपनी एंबुलेंस की टोली लेकर गया था। 'एंबुलेंस वालों' को प्रत्येक स्थान पर बिना रोक जाने की आज्ञा थी। कांग्रेस -पंडाल के बाहर खुले रूप में नवयुवक यह कह कर पुस्तक बेंच रहे थे। 'यू० पी० में जब्त किताब अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली' खुफिया पुलिस वालों ने कांग्रेस का कैम्प घेर लिया। सामने ही आर्य समाज का कैम्प था। वहां पर पुस्तक विक्रेताओं की पुलिस ने तलाशी लेना आरम्भ कर दी। मैं ने कांग्रेस कैम्पपर अपने स्वयंसेवक इसलिये छोड़ दिये कि वे बिना स्वागतकारिणी समिति के मंत्री या प्रधान की आज्ञा पाये किसी पुलिस वाले को कैम्प में न घुसने दें। आर्य समाज के कैम्प में गया। सब पुस्तकें एक टेंट में जमा थीं। मैं ने अपने ओवर-कोट में सब पुस्तकें लपेटीं, जो लगभग दो सौ के होंगीं, और उसे कन्धे पर डाल कर पुलिस वालों के सामने से निकला। मैं वर्दी पहने था, टोप लगाये हुये था एम्बुलेन्स का बड़ा सा लाल बिल्ला मेरे हाथ पर लगा हुआ था, किसी ने कोई सन्देह भी न किया और पुस्तकें बच गईं।

स्व० पं० गेंदालाल 'दीक्षित' / मैनपुरी ...
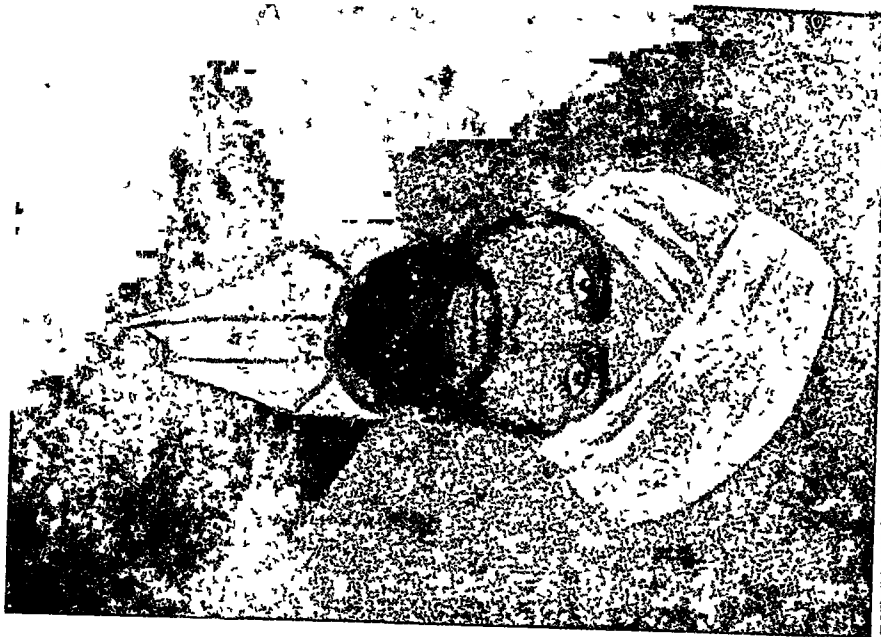
भाई रामप्रसाद 'बिस्मिल' के शव को उन के पिता गोद में
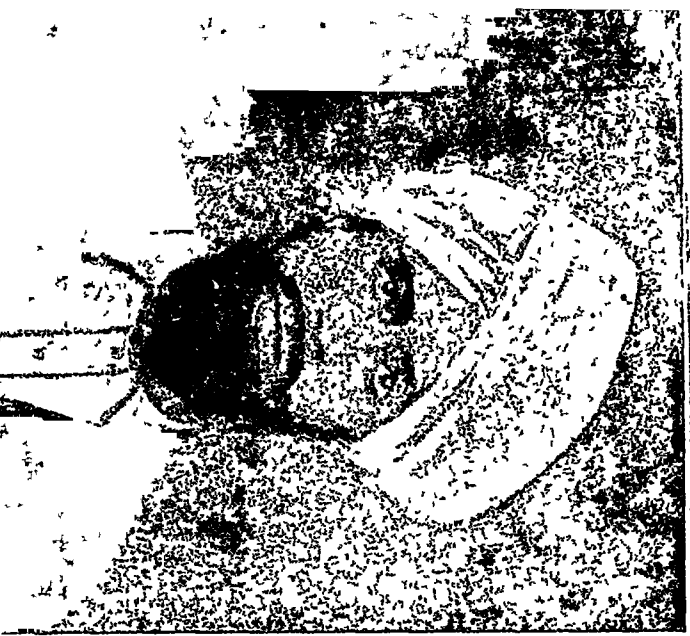
भाई रामप्रसाद 'बिस्मिल' के शव को उन के पिता गोद में

देहली कांग्रेस से लौट कर शाहजहांपुर आये। वहां भी पकड़ धकड़ शुरु हुई। हम लोग वहां से चल कर दूसरे शहर के एक मकान में ठहरे हुये थे। रात्रि के समय मकान मालिक ने बाहर से मकान में ताला डाल दिया। ग्यारह बजे के लगभग हमारा एक साथी बाहर से आया। उस ने बाहर से ताला पड़ा देख पुकारा। हम लोगों को भी सन्देह हुआ। सब के सब दीवार पर से उतर कर मकान छोड़ कर चल दिये। अँधेरी रात थी। थोड़ी दूर गये थे कि हठात् आवाज आई 'खड़े होजाओ ? कौन जाता है ? हम लोग सात आठ आदमी थे। समझे कि घिर गये। क़दम उठाना ही चाहते थे, कि फिर आवाज़ आई 'खड़े हो जाओ' नहीं तो 'गोली मारते हैं।' हम लोग खड़े हो गये। थोड़ी देर में एक पुलिस के दारोग़ा बन्दूक हमारी तरफ़ किये हुए रिवालवर कंधे में लटकाए कई सिपाहियों को लिये हुए आ पहुंचे। पूछा—'कौन हो, कहां जाते हो ?' हम लोगों ने कहा—'विद्यार्थी हैं, स्टेशन जा रहे।' 'कहां जाओगे ?' 'लखनऊ' उस समय दो बजे थे। लखनऊ की गाड़ी पांच बजे जाती थी। दारोग़ा जी को शक हुआ। लालटेन आई। हम लोगों के चेहरे रोशनी में देखकर शक जाता रहा। कहने लगे "रात के समय लालटेन लेकर चला कीजिये। ग़लती हुई मुआफ़ कीजिये।" हम लोग भी सलाम झाड़कर चलते बने। एक बाग़ में फूंस की मड़ैय्या पड़ी थी। उसमें जा बैठे। पानी बरसने लगा। मूसलाधार पानी गिरा। सब कपड़े भीग गये। ज़मीन पर भी पानी भर गया। जनवरी का महीना था। खूब जाड़ा पड़ रहा था। रात भर भींगते और ठिठुरते रहे। बड़ा कष्ट हुआ। प्रातःकाल धर्मशाला में जाकर कपड़े सुखाये। दूसरे दिन शाहजहांपुर आकर बन्दूकें ज़मीन में गाड़कर, प्रयाग पहुंचे।

विश्वासघात

प्रयाग की एक धर्मशाला में दो तीन दिन निवास करके विचार किया गया कि एक व्यक्ति बहुत दुर्बलात्मा है यदि वह पकड़ा गया तो सब भेद खुल जावेगा। अतः उसे मार दिया जावे। मैंने कहा मनुष्य हत्या ठीक नहीं। पर अन्त में निश्चय हुआ कि कल चला जावे और उसकी हत्या कर दी जावे। मैं चुप हो गया। हम लोग चार सदस्य साथ थे। हम चारों तीसरे पहर झूंसी का किला देखने गये। जब लौटे तब सन्ध्या हो चुकी थी। उसी समय गंगा पार करके यमुना तट पर गये। शौचादि से निवृत्त होकर मैं संध्या समय उपासना करने के लिये रेती पर बैठ गया। एक महाशय ने कहा—'यमुना के निकट बैठो।' मैं तट से दूर एक ऊंचे स्थान पर बैठा था। मैं वहीं बैठा रहा। वह तीनों भी मेरे पास ही आकर बैठ गये। मैं आंखें बन्द किये ध्यान कर रहा था। थोड़ी देर में खटसे आवाज़ हुई। समझा कि साथियों में से कोई कुछ कर रहा होगा। तुरन्त ही एक फ़ायर हुआ। गोली सन से मेरे कान के पास से निकल गई। मैं समझ गया कि मेरे ऊपर ही फ़ायर हो रहे हैं। मैंने भी रिवालवर निकाला। तब तक दूसरा फ़ायर हुआ। मैं रिवालवर निकालता हुआ आगे को बढ़ा। पीछे फिर कर देखा, वह महाशय माउज़र हाथ में लिये मेरे ऊपर गोली चला रहे हैं। कुछ दिन पहिले मुझसे उनसे कुछ झगड़ा हो चुका था, किन्तु बाद में समझौता हो गया था। फिर भी उन्होंने यह कार्य किया। मैं भी सामना करने को प्रस्तुत हुआ। तीसरा फायर करके वे भाग खड़े हुये। उनके साथ प्रयाग में ठहरे हुए दो सदस्य और भी थे। वे तीनों भाग गये। मुझे देर इसलिये हुई कि मेरा रिवालवर चमड़े के खोल

में रखा था। यदि आधा मिनट और उन में कोई भी खड़ा रह जाता तो मेरी गोली का निशाना बन जाता। जब सब भाग गये, तब मैं गोली चलाना व्यर्थ जान, वहां से चला आया। मैं बाल बाल बच गया। मुझ से दो गजके फ़ासले पर से माउज़र पिस्तौल से गोलियां चलाई गई और उस अवस्था में जब कि मैं बैठा हुआ था। मेरी समझ में नहीं आया कि मैं बच कैसे गया? पहला कारतूस फूटा नहीं। तीन फायर हुए। मैं गद्गद् हो कर परमात्मा का स्मरण करने लगा। आनन्दोल्लासमें मुझे मूर्छा आगई। मेरे हाथ से रिवालवर तथा खोल दोनों गिर गये। यदि उस समय कोई निकट होता तो मुझे भली भांति मार सकता था। मेरी यह अवस्था लगभग एक मिनट तक रही होगी कि मुझ से किसी ने कहा, 'उठ'! मैं उठा। रिवालवर उठा लिया। खोल उठानेका स्मरण ही न रहा। २२ जनवरी की घटना है। मैं केवल एक कोट और एक तहमद पहने था। बाल बढ़ रहे थे। नंगे सिर, पैर में जूता भी नहीं। ऐसी हालतमें कहां जाऊ ? अनेकों विचार उठ रहे थे।

इन्हीं विचारों में निमग्न यमुना तट पर बड़ी देर तक घूमता रहा। ध्यान आया कि धर्म्मशाला चल कर ताला तोड़ सामान निकालूं। फिर विचारा धर्म्मशाला जाने से गोली चलेगी, व्यर्थ में खून होगा। अभी ठीक नहीं। अकेले बदला लेना ठीक नहीं। और कुछ साथियों को ले कर फिर बदला लिया जावेगा। मेरे एक साधारण मित्र प्रयाग में रहते थे। उनके पास जाकर बड़ी मुश्किल से एक चादर ली, और रेल से लखनऊ आया, लखनऊ आकर बाल बनवाये। धोती, जूता ख़रीदे, क्योंकि रुपये मेरे पास थे। रुपये न भी होते तो मैं सदैव जो चालीस—पचास रुपये की सोनेकी अंगूठी पहने रहता

था, उसे काम में ला सकता। वहां से आ कर अन्य सदस्यों से मिल कर सब विवरण कह सुनाया। कुछ दिन जंगल में रहा। इच्छा थी कि सन्यासी हो जाऊं। संसार कुछ नहीं। बाद को फिर माताजी के पास गया। उन से सब कह सुनाया। उन्हों-ने मुझे ग्वालियर जाने का आदेश किया। थोड़े दिनों में माता पिता सभी दादी जी के भाई के यहां आ गये। मैं भी वहीं आ गया।

मैं प्रत्येक समय यही विचार किया करता कि मुझे बदला अवश्य लेना चाहिये, एक दिन प्रतिज्ञा कर के रिवालवर ले कर शत्रु को हत्या करने की इच्छा से मैं गया भी, किन्तु सफलता न हुई। इसी प्रकार की उधेड़—बुन में मुझे ज्वर आने लगा। कई महीने तक बीमार रहा। माता जी मेरे विचारों को समझ गईं। माता जी ने बड़ी सान्त्वना दी। कहने लगीं कि, प्रतिज्ञा करो कि तुम अपनी हत्या की चेष्टा करने वालों को जान से न मारोगे। मैं ने प्रतिज्ञा करने में इतस्ततः किया, तो वे कहने लगीं कि मैं मातृ ऋण के बदले में प्रतिज्ञा कराती हूं, क्या उत्तर है? मैं ने कहा—"मैं उन से बदला लेने की प्रतिज्ञा कर चुका हूं।" माता जी ने मुझे बाध्य कर मेरी प्रतिज्ञा भंग कराई। अपनी बात श्रेष्ठ रखी। मुझे भी शिर नीचा करना पड़ा। उस दिन से मेरा ज्वर कम होने लगा और मैं अच्छा हो गया।

पलायनावस्था

मैं ग्राम में ग्रामवासियों की भांति उसी प्रकार के वस्त्र पहिन कर निवास करने लगा। खेती भी करने लगा। देखने वाले अधिक से अधिक इतना समझ सकते थे कि मैं शहर में रहा हूं, सम्भव है कुछ पढ़ा भी होऊं। खेती के कामों में मैं ने विशेष ध्यान दिया। शरीर तो हृष्ट—पुष्ट था ही, थोड़े ही दिनों

में अच्छा खासा किसान बन गया। उस कठोर भूमि में खेती करना कोई सरल कार्य नहीं। बबूल, नीम के अतिरिक्त कोई एक दो आम के वृक्ष कहीं भले ही दिखलाई दे जावें बाकी वह नितान्त मरुभूमि है। खेत में जाता था। थोड़ी देर में ही झरबेरी के कांटों से पैर भर जाते। पहले पहल बड़ा कष्ट प्रतीत हुआ। कुछ समय पश्चात् अभ्यास होगया। जितना खेत उस देश का एक बलिष्ट पुरुष दिन भर में जोत सकता था, उतना मैं भी जोत लेता था। मेरा चेहरा बिल्कुल काला पड़ गया। थोड़े दिनों के लिये मै शाहजहांपुर की ओर घूमने आया। तो कुछ लोग मुझे पहचान न सके मैं रात को शाहजहांपुर पहुंचा। गाड़ी छूट गई। दिन के समय पैदल जारहा था, एक पुलिस वाले ने पहचान लिया। वह और पुलिस वालों को लेने के लिये गया। मैं भागा, पहले दिन काफी थका हुआ था। लगभग बीस मील पहले दिन पैदल चला था। उस दिन भी ३५ मील पैदल चलना पड़ा।

मेरे माता पिता ने सहायता की। मेरा समय अच्छे प्रकार व्यतीत हो गया। माता जी की पूंजी तो मैं ने नष्टकरदी। पिता जी से, सरकार की ओर से कहा गया कि लड़के की गिरफ़्तारी के वारंट की पूर्ति के लिये लड़के का हिस्सा, जो उसके दादा की जायदाद होगी, नीलाम किया जावेगा। 'पिता जी घबड़ा कर दो हज़ार रुपये का मकान आठ सौ में तथा और दूसरी चीज़ें भी थोड़े दामों में बेंच कर शाहजहांपुर छोड़ कर भाग गये। दो बहिनों का विवाह हुआ, जो कुछ रहा बचा था, वह भी व्यय होगया। माता पिता की हालत फिर निर्धनों की सी होगई। समिति के जो दूसरे सदस्य भागे हुयेथे, उनको बहुत बुरी दशा हुई। महीनों चनों पर ही समय काटना पड़ा। दो चार रुपये जो मित्रों तथा सहा-

यकों से मिल जाते थे, उन्हीं पर गुज़र होता था। पहनने को कपड़े तक न थे। विवश हो रिवालवर तथा बन्दूकें बेंची, तब दिन कटे। किसी से कुछ कह भी न सकते थे, गिरफ़्तारी के भय के कारण कोई व्यवसाय या नौकरी न कर सकते थे।

उसी अवस्था में मुझे व्यवसाय करने का विचार हुआ। मैं ने अपने सहपाठी तथा मित्र श्रीयुत सुशीलचन्द्र की, जिन का देहान्त हो गया था, स्मृति में बंगला भाषा का अध्ययन किया। मेरे छोटे भाई का जब जन्म हुआ तो मैं ने उसका नाम भी सुशीलचन्द्र रखा। मैंने विचारा कि एक पुस्तक माला निकालूं लाभ भी होगा। कार्य भी सरल है। बंगला से हिन्दी में पुस्तकों का अनुवाद करके प्रकाशित कराऊंगा। कुछ भी अनुभव नहीं था। बंगला पुस्तक 'निहिलिस्ट रहस्य' का अनुवाद प्रारम्भ कर दिया। जिस प्रकार अनुवाद किया, उसका स्मरण कर कई बार हंसी आजाती थी। कई बैल, गाय तथा भैंस लेकर ऊसर में चराने के लिये जाया करता था। ख़ाली बैठा रहना पड़ता था। अतएव कांपी पैंसिल ले जाया करता और पुस्तक का अनुवाद किया करता था। पशु जब कहीं दूर निकल जाते तब अनुवाद छोड़, लाठी लेकर उन्हें हकारने जाया करता था। कुछ समय के लिये एक साधु की कुटी पर जाकर रहा। वहां अधिक समय अनुवाद करने में व्यतीत करता था। भोजन के लिये आटा ले जाता था चार पांच दिन के लिये इकट्ठा आटा रखता था। भोजन स्वयं बना लेता था। जब पुस्तक ठीक हो गई तो 'सुशील माला' के नाम से पुस्तक माला निकाली। पुस्तक का नाम 'बोलिशेविकों की करतूत' रखा। दूसरी पुस्तक 'मन की लहर' छपवाई। इस व्यवसाय में लगभग पांच सौ रुपये की हानि हुई। जब राजकीय घोषणा हुई और राजनैतिक क़ैदी छोड़े गये,

तब शाहजहांपुर आ कर कोई व्यवसाय करने का विचार हुआ, ताकि माता पिता की कुछ सेवा हो सके। विचार किया करता था कि इस जीवन में अब फिर कभी आजादी से शाहजहांपुर में विचरण न कर सकूंगा। पर परमात्मा की लीला अपार है। वे दिन आये। मैं पुनः शाहजहांपुर का निवासी हुआ।

पं० गेंदालाल दीक्षित।

आप का जन्म यमुना तट पर वटेश्वर के निकट 'मई, ग्राम में हुआ था। आप ने मैट्रिक्यूलेशन (दसवां) दर्जे अँगरेजी का पास किया था। आप जब औरैया जिला इटावा में डी० ए० वी० स्कूल में टीचर थे, तब आप ने शिवाजी समिति की स्थापन की थी। जिस का उद्देश्य था शिवा जी की भांति दल बना कर उससे लूट मार करवाना। उस में से चौथ ले कर हथियार खरीदना और उस दलमें बाँटना। इसी की सफलता के लिये आप रियासत से हथियार ला रहे थे, जो कुछ नवयुवकों की असावधानी के कारण आगरा में स्टेशन के निकट पकड़ लिये गये थे। आप बड़े वीर तथा उत्साही थे। शान्त बैठना जानते ही न थे। नवयुवकों को सदैव कुछ न कुछ उपदेश करते रहते थे। एक एक सप्ताह तक बूट तथा वर्दी न उतारते थे। जब आप ब्रह्मचारी जी के पास सहायता लेने गये, तो दुर्भाग्यवश गिरफ्तार कर लिये गये। ब्रह्मचारी के दल ने अंगरेजी राज्य में कई डाके डाले थे। डाके डाल कर ये लोग चम्बल के बीहड़ों में छिप जाते थे। सरकार राज्य की ओर से ग्वालियर महाराजको लिखा गया। इस दलके पकड़नेका प्रबन्ध किया गया। सरकारने तो हिंदुस्तानी फ़ौज भी भेजी थी, जो आगरा जिला में चम्बल के किनारे बहुत दिनों तक पड़ी रही। पुलिस सवार तैनात किये, किन्तु ये लोग भयभीत न हुये। विश्वासघातसे पकड़े

गये। इन्हीं में से एक आदमी पुलिस ने मिला लिया। डाका डालने के लिये दूर एक स्थान निश्चय किया गया। जहां तक जाने के लिये एक पड़ाव देना पड़ता था। चलते चलते सब थक गये। पड़ाव दिया गया। जो आदमी पुलिस से मिला हुआ था। उसने भोजन लाने को कहा, क्योंकि उसके किसी सम्बन्धी का मकान निकट था। वह पूरी करा के लाया। सब पूड़ी खाने लग गये। ब्रह्मचारी जी जो सदैव अपने हाथ से बना कर भोजन करते थे या आलू अथवा घुइयां भून कर खा लेते थे, उन्हों ने भी उस दिन पूड़ी खाना स्वीकार किया सब भूखे तो थे ही खाने लगे। ब्रह्मचारीजी ने भी एक पूड़ी खाई। उनको ज़बान ऐंठने लगी और जो अधिक खा गये थे, वे गिर गये। पूड़ी लाने वाला पानी लेने के बहाने चल दिया। पूड़ियों में विष मिला हुआ था ब्रह्मचारी जी ने बन्दूक उठा कर पूड़ी लाने वाले पर गोली चलाई। ब्रह्मचारी की गोली का चलना था कि चारों ओर से गोली चलने लगी। पुलिस छिपी हुई थी। गोली चलने से ब्रह्मचारी जी के कई गोली लगी। तमाम शरीर घायल हो गया। पं० गेंदालाल जी की आंख में एक छर्रा लगा। बाईं आंख जाती रही। कुछ आदमी ज़हर के कारण मरे, कुछ गोली से मारे गये। सब पकड़ कर के ग्वालियर के क़िले में बन्द कर दिये गये। क़िले में हम लोग जब पण्डित जी से मिले तब चिट्ठी भेज कर उन्हों ने हम को सब हाल बताया। एक दिन हम लोगों पर भी किले में सन्देह हो गया था, बड़ी कठिनता से एक अधिकारी की सहायता से हम लोग निकल सके।

जब मैनपुरी षड्यन्त्र का अभियोग चला, पंडित गेंदालाल जी को सरकारने ग्वालियर राज्यसे मंगाया। ग्वालियरके

क़िले का जलवायु बड़ा ही हानिकारक था। पण्डित जी को क्षय रोग हो गया था। मैनपुरी स्टेशन से जेल जाते समय ग्यारह बार रास्ते में बैठ बैठकर जेल पहुंचे। पुलिस ने जब हाल पूछा तो उन्होंने कहा बालकोंको क्यों गिरफ़्तार किया है? मैं हाल बताऊंगा। पुलिस को विश्वास हो गया। आप को जेल से निकाल कर दूसरे सरकारी गवाहोंके निकट रख दिया। वहां पर सब विवरण जान रात्रि के समय एक और सरकारी गवाह को ले कर पण्डित जी भाग खड़े हुये। भाग कर एक गाँव में एक कोठरी में ठहरे। साथी कुछ काम के लिये बाज़ार गया और फिर लौट कर न आया। बाहर से कोठरी की जञ्जीर बन्द कर गया था। पण्डित जी उसी कोठरी में तीन दिन बिना अन्न जल के बन्द रहे। समझे कि साथी किसी आपत्ति में फंस गया होगा, अन्त में किसी प्रकारसे जञ्जीर खुलवाई। रुपये वह सब साथ ही ले गया था। पास एक पैसा भी न था। कोटा से पैदल आगरा आये। किसी प्रकार अपने घर पहुंचे। बहुत रुग्ण हो रहे थे। पिता ने यह समझ कर कि घर वालों पर आपत्ति न आवे पुलिस को सूचना देनी चाही। पण्डितजी ने पिता से बड़ी विनय प्रार्थना की और दो तीन दिन में घर छोड़ दिया। हम लोगोंकी बहुत खोज की। किसी का कुछ अनुसंधान न पा देहलीमें एक प्याऊ पर पानी पिलाने की नौकरी कर ली। अवस्था दिनों दिन बिगड़ रही थी। रोग भीषण रूप धारण कर रहा था। छोटे भाई तथा पत्नी को बुलाया। भाई किंकर्तव्य विमूढ़! क्या कर सकता था? सरकारी अस्पताल में भर्ती कराने ले गया। पण्डित जी की धर्मपत्नी को दूसरे स्थान में भेज कर जब वह अस्पताल आया, तो, जो देखा उसे लिखते हुए लेखनी कम्पायमान होती है! पण्डित जी शरीर त्याग चुके थे! केवल उनका मृत शरीर मात्र ही पड़ा हुआ था। स्वदेश की कार्य-

सिद्धि में पं० गेंदालाल दीक्षित ने जिस निःसहाय अवस्था में अन्तिम बलिदान दिया, उस की स्वप्न में भी आशा न थी। पण्डित जी की प्रबल इच्छा थी, कि उनकी गोली लग कर मृत्यु हो। भारतवर्ष की एक महानात्मा विलीन हो गई और देश में किसी ने जाना भी नहीं। आप की बिस्तृत जीवनी "प्रभा" मासिक पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी है। मैनपुरी षड्यन्त्रके मुख्य नेता आप ही समझे गये। इस षड्यन्त्रमें विशेषतायें ये हुई कि नेताओं में से केवल दो व्यक्ति पुलिसके हाथ आये जिनमें पण्डित "गेंदालाल दीक्षित" एक सरकारी गवाह को ले कर भाग गये। तथा श्रीयुत शिवकृष्ण जेल से भाग गये और फिर हाथ न आये। छः मास पश्चात जिन्हें सज़ा हुई थी वे भी राजकीय घोषणा से मुक्त कर दिये गये। खुफिया पुलिस विभागका क्रोध पूर्णतया शान्ति न हो सका और उनकी बदनामी भी इस केस में बहुत हुई।

पं० गेंदालालजी दीक्षित कहा करते थे —

> थाती नर तन पाय के, क्यों करता है नेह।
> मुंह उज्वल कर सौंप दे, जिसको जिसकी देह॥

तृतीय खण्ड

स्वतन्त्र जीवन
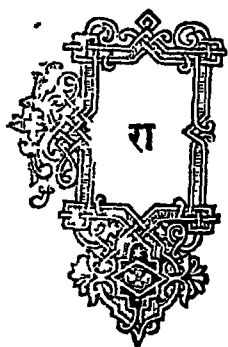
जकीय घोषणा के पश्चात् जब मैं शाहजहांपुर आया तो शहर की अद्भुत दशा देखी। कोई पास तक खड़े होने का साहस न करता था। जिसके पास मैं जाकर खड़ा हो जाता था, वह नमस्ते कर चल देता था। पुलिस वालों का बड़ा प्रकोप था। प्रत्येक समय छाया की भांति पीछे पीछे फिरा करती थी। इस प्रकार का जीवन कब तक व्यतीत किया जावे। मैंने कपड़ा बिनने का काम सीखना आरम्भ किया। जुलाहे बड़ा कष्ट देते थे। कोई काम सिखाना न चाहता था। बड़ी कठिनता से मैंने कुछ काम सीखा। उसी समय एक कारख़ाने में मैनेजरी का स्थान ख़ाली हुआ। मैंने उस स्थान के लिये प्रयत्न किया। मुझसे ५००) रुपये की ज़मानत मांगी गई। मेरी बड़ी शोचनीय दशा थी। तीन तीन दिवस तक भोजन प्राप्त नहीं होता था। क्योंकि मैंने प्रतिज्ञा की थी, कि किसी से कुछ सहायता न लूंगा। पिता जी से बिना कुछ कहे मैं चला आया था। मैं पांच सौ रुपये कहां से लाता? मैंने दो एक मित्रों से केवल दो सौ रुपये की ज़मानत देने की प्रार्थना की। उन्होंने साफ इन्कार कर दिया। मेरे हृदय पर वज्रपात हुआ। संसार अन्धकारमय दिखाई देता था! पर बाद को एक मित्र की कृपा से नौकरी मिल गई। अब अवस्था सुधरी। मैं भी सभ्य पुरुषों की भांति समय व्यतीत करने लगा। मेरे पास भी चार पैसे हो गये।

वे ही मित्र जिनसे मैंने दो सौ रुपये ज़मानत देने की प्रार्थना की थी, अब मेरे पास आपने चार चार हज़ार रुपयों की थैली, अपनी बन्दूक, लाइसेन्स इत्यादि सब डाल जाते थे कि मेरे यहाँ उनकी वस्तुएं सुरक्षित रहेंगी। समय के इस फेर को देखकर मुझे हंसी आती थी।

इस प्रकार कुछ काल व्यतीत हुआ। दो चार ऐसे पुरुषों मे भेंट हुई, जिनको पहले मैं बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखता था। उन लोगों ने मेरी पलायनावस्था के सम्बन्ध में कुछ समाचार सुने थे। मुझसे मिलकर बड़े प्रसन्न हुए। मेरी लिखी हुई पुस्तकें भी देखीं। इस समय मैं एक तीसरी पुस्तक 'केथोराइन' लिख चुका था। मुझे पुस्तकों के व्यवसाय में बहुत घाटा हो चुका था। मैंने माला का प्रकाशन स्थगित कर दिया। 'केथेराइन' एक पुस्तक प्रकाशक को दे दी। उन्होंने बड़ी कृपाकर उस पुस्तक को थोड़े से हेर फेर के साथ प्रकाशित करा दिया। 'केथेराइन' को देख कर मेरे इष्ट मित्रों को बड़ा स्नेह हुआ। उन्होंने मुझे पुस्तक लिखते रहने के लिये बड़ा उत्साहित किया। मैं ने 'स्वदेशी रंग' नामक एक और पुस्तक लिख कर एक पुस्तक प्रकाशक को दी। वह भी प्रकाशित होगई।

बड़े परिश्रम के साथ मैं ने एक पुस्तक 'क्रान्तिकारी' जीवन लिखी। 'क्रान्तिकारी जीवन' को कई पुस्तक प्रकाशकों ने देखा, पर किसी का साहस न होसका कि उसको प्रकाशित करे। आगरा, कानपुर, कलकत्ता इत्यादि कई स्थानों में घूम कर पुस्तक मेरे पास लौट आई। कई मासिक पत्रिकाओं में 'राम' तथा 'अज्ञात' नामसे मेरे लेख प्रकाशित हुआ करते थे। लोग बड़े चाव से उन लेखों का पाठ करते थे। मैं ने किसी स्थान पर लेखन शैली का नियम पूर्वक अध्ययन न किया था। बैठे बैठे

खाली समय में कुछ लिखा करता और प्रकाशनार्थ भेज दिया करता था। अधिकतर बंगला तथा अंगरेजी की पुस्तकों से अनुवाद करने का ही विचार था। थोडे समय के पश्चात श्रीयुत अरविन्द घोष की बंगला पुस्तक 'योगिक साधन' का अनुवाद किया। दो एक पुस्तक प्रकाशकों को दिखाया, पर वे अति अल्प पारितोषिक दे कर पुस्तक लेना चाहते थे। आज कल के समय में हिन्दी के लेखकों तथा अनुवादकों की अधिकता के कारण पुस्तक प्रकाशकों को भी बड़ा मान हो गया है। बड़ी कठिनता से बनारस के एक प्रकाशक ने 'योगिक साधन' प्रकाशित करने का वचन दिया। पर थोड़े दिनों में वह स्वयं ही अपने साहित्य मन्दिर में ताला डाल कर कहीं पधार गये। पुस्तक का अब तक कोई पता न लगा। पुस्तक अति उत्तम थी। प्रकाशित हो जानेसे हिन्दी साहित्य सेवियों को अच्छा लाभ होता। मेरेपास जो 'बोलशेविक करतूत' तथा 'मन की लहर' की प्रतियां बची थीं, वे मैं ने लागत से भी कम मूल्य पर कलकत्ता के एक व्यक्ति श्रीयुत दीनानाथ सगतिया को दे दीं। बहुत थोड़ी पुस्तकें मैं ने बेची थीं। दीनानाथ महाशय पुस्तकें हड़प कर गये मैंने नोटिस दिया। नालिश की लगभग ४००) रुपये की डिग्री भी हुई किन्तु दीनानाथ महाशय का कहीं अनुसन्धान न मिला। वे कलकत्ता छोड़ कर पटना गये। पटना से भी कई गरीबों का रुपया मार कर कहीं अन्तरध्यान हो गये। अनुभव हीनता से इस प्रकार ठोकरें खानी पड़ीं। कोई पथ प्रदर्शक तथा सहायक नहीं, जिस से परामर्श करता। व्यर्थ के उद्योग धन्धों तथा स्वतन्त्र कार्यों में शक्ति का व्यय करता रहा।

पुनर्संङ्गठन।

जिन महानुभावों को मैं पूजनीय दृष्टि से देखता था,

उन्हों ने अपनी इच्छा प्रकट की कि मैं क्रान्तिकारी दल का पुनः सङ्गठन करूं। गत जीवन के अनुभव से मेरा हृदय अत्यन्त दुखित था। मेरा साहस न देख कर, इन लोगों ने बहुत उत्साहित किया और कहा कि हम आप को केवल निरीक्षण का कार्य देंगे। बाकी सब कार्य स्वयं ही करेंगे। कुछ मनुष्य हम ने पहले जुटा लिये हैं, धन की कमी न होगी, आदि। मान्य पुरुषों की प्रवृत्ति देख मैं ने भी स्वीकृति दे दी। मेरे पास जो अस्त्र शस्त्र थे मैं ने दिये। जो दल उन्हों ने एकत्रित किया था, उस के नेता से मुझे मिलाया। उस की वीरता की बड़ी प्रशंसा की। वह एक अशिक्षित ग्रामीण पुरुष था। मेरी समझ में आ गया कि बदमाशों का या स्वार्थी जनों का कोई सङ्गठन है। मुझ से उस दल के नेता ने दल का कार्य निरीक्षण कर ने की प्रार्थना की। दल में कई फौज से आये हुये लड़ाई पर से वापिस किये गये व्यक्ति भी थे। मुझे इस प्रकार के व्यक्तियों से कभी कोई काम न पड़ा था। मैं दो एक महानुभावों को साथ ले इन लोगों का कार्य देखने के लिये गया।

थोड़े दिनों बाद इस दल के नेता महाशय एक वेश्या को भी ले आये। उसे रिवालिवर दिखाया कि यदि कहीं गई तो गोली से मारी जायगी। यह समाचार सुन उसी दल के दूसरे सदस्य ने बड़ा क्रोध प्रकाशित किया और मेरे पास खबर भेज ने का प्रबन्ध किया। उसी समय एक दूसरा आदमी पकड़ा गया, जो नेता महाशय को जानता था। नेता महाशय रिवालिवर तथा कुछ सोने के आभूषणों सहित गिरफ्तार हो गये। उन की वीरता की बड़ी प्रशंसा सुनी थी, जो इस प्रकार प्रकट हुई कि कई आदमियों के नाम पुलिस को बताये और इकबाल कर दिया। लगभग तीस चालीस आदमी पकड़े गये।

एक दूसरा व्यक्ति था जो बहुत वीर था। पुलिस उसके पीछे पड़ी हुई थी। एकदिन पुलिस कप्तानने सवार तथा तीस चालीस बन्दूक वाले सिपाही लेकर उसके घरमें उसे घेर लिया। उस ने छत पर चढ़ कर दोनाली कारतूसी बन्दूकसे लगभग तीन सौ फायर किये बन्दूक गरम होकर गल गई। पुलिस वाले समझे कि घर में कई आदमी हैं। सब पुलिस वाले छिप कर आड़ में से सुबह होने की प्रतीक्षा करने लगे। उस ने मौका पाया। मकान के पीछे से कूद पड़ा, एक सिपाही ने देख लिया। उस ने सिपाही की नाक पर रिवालवर का कुन्दा मारा। सिपाही चिल्लाया। सिपाही के चिल्लाते ही मकान में से फायर हुआ। पुलिस वाले समझे मकान ही में है। सिपाही को धोका हुआ होगा। बस, वह जंगल में निकल गया। अपनी स्त्रीको एक टोपीदार बन्दूक दे आया था कि यदि चिल्लाहट हो तो फायर कर देना। ऐसा ही हुआ और वह निकल गया। जंगल में जाकर एक दूसरे दल से मिला। जंगल में भी एक समय पुलिस कप्तान से सामना हो गया। गोली चली। उसके भी पैर में छर्रे लगे थे। अब यह बड़े साहसी हो गये थे। समझ गये थे कि पुलिस वाले किस प्रकार समयपर आड़में छिप जाते हैं। इन लोगोंका दल छिन्न भिन्न हो गया था। अतः उन्होंने मेरे पास आश्रय लेना चाहा। मैंने बड़ी कठिनता से अपना पीछा छुड़ाया। तत्पश्चात् जंगलमें जाकर ये दूसरे दलसे मिल गये। वहां पर दुराचार के कारण जंगलके दल के नेता ने इन्हें गोली से मार दिया। उस नेता को भी समय पाकर उसके साथीने गोलीसे मार दिया। इस प्रकार सब दल छिन्न भिन्न हो गया। जो पकड़े गये उनपर कई डकैतियां चलीं; किसी को तीस साल, किसी को पचास साल, किसीको बीस सालकी सजायें हुई। एक बेचारा जिसका किसी डकैती से कोई सम्बन्ध न था, केवल शत्रुता के

कारण फंसा दिया गया। उसे फांसी हो गई। और जो सब प्रकार डकैतियों में समिलित था, जिसके पास डकैती का माल तथा कुछ हथियार पाये गये, पुलिससे गोली भी चली उसे पहले फांसी को सजा की आज्ञा हुई, पर पैरवी अच्छी हुई, अतएव हाईकोर्ट से फाँसी का सजा माफ हो गई, केवल पांच वर्ष की सजा रह गई। जेल वालोंसे मिल कर उसने डकैतियोंमें शिनाख्त न होने दी थी। इस प्रकार इस दलकी समाप्ति हुई। दैव योग से हमारे अस्त्र बच गये। केवल एक हो रिवालवर पकड़ा गया।

नोट बनाना

इसी बीच मेरे एक मित्र को एक नोट बनाने वाले महाशय से भेंट हुई। उन्होंने बड़ी बड़ी आशायें बांधीं। बड़ी लम्बी लम्बी स्कीम बांधनेके पश्चात् मुझसे कहा कि एक नोट बनाने वा॰ से भेंट हुई है। बड़ा दक्ष पुरुष है। मुझे भी बना हुआ नोट देखने की बड़ी उत्कट इच्छा थी। मैंने उन सज्जन के दर्शन की इच्छा प्रकट की। जब उक्त नोट बनाने वाले महाशय मुझे मिले तो बड़ी कौतुहलोत्पादक बातें कीं। मैंने कहा कि मैं स्थान तथा आर्थिक सहायता दूंगा, नोट बनाओ। जिस प्रकार उन्होंने मुझ से कहा, मैंने सब प्रबन्ध कर दिया, किन्तु मैंने कह दिया था कि नोट बनाते समय मैं वहां उपस्थित रहूंगा। मुझे बताना कुछ मत, पर मैं नोट बनानेकी रीति अवश्य देखना चाहता हूं। पहले पहल उन्होंने दस रुपये का नोट बनाने का निश्चय किया। मुझ से एक दस रुपये का नया साफ नोट मंगाया। नौ रुपये दवा खरीदनेके बहाने से ले गये। रात्रि में नोट बनाने का प्रबन्ध हुआ। दो शीशे लाये। कुछ कागज भी लाये। दो तीन शीशियोंमें कुछ दवाई थी। दवाइयों को मिला एक प्लेट में सादे कागज पानीमें भिगोये। मैं जो साफ नोट लाया था। उस

पर एक सादा काग़ज़ लगा कर दोनों को दूसरी दवा डाल कर धोया। फिर सादे काग़ज़ों में लपेट एक पुड़ियासी बनाई और अपने एक साथी को दी कि उसे आग पर गरम कर लावे। आग वहां से कुछ दूर पर जलती थी। कुछ समय तक वह आग पर गरम करता रहा और पुड़िया लाकर वापस करदी। नोट बनाने वाले ने पुड़िया खोल कर दोनों शीशों में दवा कर, शीशों को दवा में धोया और फ़ीतेसे शीशों को बांध कर रख दिया और कहा कि दो घण्टे में नोट बन जावेगा शीशे रख दिये। बात-चीत होने लगी। कहने लगा। इस प्रयोग में बड़ा व्यय होता है। छोटे छोटे नोट बनाने से कोई लाभ नहीं। बड़े नोट बनाना चाहिये। जिस में पर्याप्त धन की प्राप्ति हो। इस प्रकार मुझे भी सिखा देने का वचन दिया। मुझे कुछ कार्य था। मैं जाने लगा तो वहभी चला गया। दो घंटे बाद आने का निश्चय हुआ।

मैं विचारने लगा कि किस प्रकार एक नोट के ऊपर दूसरा सादा काग़ज़ रखने से नोट बन जावेगा। मैं ने प्रेस का काम सीखा था। थोड़ी बहुत फ़ोटोग्राफी भी जानता था। साइन्स (विज्ञान) का भी अध्ययन किया था, कुछ समझ में न आया कि नोट सीधा कैसे छपेगा। सब से बड़ी बात यह थी कि नम्बर कैसे छपेंगे। मुझे बड़ा भारी सन्देह हुआ। दो घंटे बाद मैं जब गया तो रिवालवर भर कर जेब में डाल ले गया। यथा समय वह महाशय आये। उन्होंने शीशे खोल कर काग़ज़ निकाल कर उन्हें फिर एक दवा में धोया। अब दोनों काग़ज़ खोले। एक मेरा लाया हुआ नोट और दूसरा और एक दस रुपये का साफ़ नोट उसी के ऊपर से उतार कर सुखाया। कहा कितना साफ़ नोट है। मैं ने हाथ में ले कर देखा। दोनों नोटों के नम्बर मिलाये। नम्बर नितान्त भिन्न

मित्र थे। मैं ने जेब से रिवालवर निकाल नोट बनाने वाले महाशय की छाती पर रख कर कहा, 'बदमाश! इस तरह ठगता फिरता है? वह कांप कर गिर पड़ा। मैं ने उसको उसकी मूर्खता समझाई कि यह ढोंग ग्रामवासियों के सामने चल सकता है, अनजान पढ़े लिखे भी धोके में आ सकते हैं। किन्तु तू मुझे धोका देने आया है? अन्त में मैंने उससे प्रतिज्ञापत्र लिखा कर, उस पर उस के हाथ की दसों अंगुलियों के निशान लगवाये कि वह ऐसा काम फिर न करेगा। दशों अंगुलियों के निशान देने से उस ने कुछ ढील की। मैंने रिवालवर उठाया कि गोली चलती है, उसने तुरन्त दसों अंगुलियों के निशान बना दिये। बुरी तरह कांप रहा था। मेरे उन्नीस रुपये खर्च हो चुके थे। मैं ने दोनों नोट रख लिये और शीशे, दवायें इत्यादि सब छीन लीं कि मित्रों को तमाशा दिखाऊंगा। तत्पश्चात् उन महाशय को विदा किया। उसने किया यह था कि जब अपने साथी को आग पर गरम करने के लिये काग़ज़ की पुड़िया दी थी, उसी समय उस साथी ने सादे काग़ज़ की पुड़िया बदल कर दूसरी पुड़िया ले आया जिस में दोनों नोट थे। इस प्रकार नोट बन गया। इस प्रकार का एक बड़ा भारी दल है जो सारे भारतवर्ष में ठगी का काम करके हज़ारों रुपये पैदा करता है। मैं एक सज्जन को जानता हूं जिन्होंने इसी प्रकार पचास हज़ार से अधिक रुपये पैदा कर लिये। होता यह है कि ये लोग अपने एजेन्ट रखते हैं। वे एजेण्ट साधारण पुरुषों के पास जाकर नोट बनाने की कथा कहते हैं। आता धन किसे बुरा लगता है। वे नोट बनवाते हैं इस प्रकार पहले दस का नोट बना कर दिया; वह बाज़ार में बेंच आये। सौ रुपये का बना करदिया वह भी बाज़ार में चलाया और चल क्यों न जावे? इस प्रकार के सब नोट असली होते

है। वे तो केवल चाल से रख दिये जाते हैं। इसके बाद कहा कि हज़ार या पांच सौ का नोट लाओ जो कुछ धन भी मिले। जैसे तैसे कर के बेचारा एक हजार का नोट लाया। सादा कागज़ रख कर शीशे में बांध दिया। हज़ार का नोट जेब में रखा और अपना रास्ता लिया। नोट के मालिक रास्ता देखते हैं, वहां नोट बनाने वालों का पता नहीं। अन्त में विवश हो शीशों को खोला जाता है, तो दो सादे कागज़ के अलावा कुछ नहीं मिलता। वे अपने शिरपर हाथ मार कर रह जाते हैं। इस डर से कि यदि पुलिस को मालूम हो गया तो और लेने के देने पड़ेंगे, किसी से कुछ कह भी नहीं सकते। कलेजा मसोस कर रह जाते है। पुलिस ने इस प्रकार के कुछ अभियुक्तों को गिरफ्तार भी किया; किन्तु ये लोग पुलिस को नियम पूर्वक चौथ देते हैं और इस कारण बचे रहते है।

चालबाजो।

कई महानुभावों ने गुप्त समिति के नियमादि बना कर मुझे दिखाये। उन मे एक नियम यह भी था कि जो व्यक्ति समिति का कार्य करें, उन्हें समिति की ओर से कुछ मासिक दिया जावे। मैं ने इस नियम को अनिवार्य रूप में मानना अस्वीकार किया। मैं यहां तक सहमत था कि जो व्यक्ति सर्व प्रकारेण समितिके कार्य मे अपना समय व्यतीत करें, उनको केवल गुजारा मात्र समिति की ओर से दिया जा सकता है। जो लोग किसी व्यवसाय को करते हैं, उन्हें किसी प्रकार का मासिक देना उचित न होगा। जिन्हें समितिके कोष में से कुछ दिया जावे, उन को भी कुछ व्यवसाय करने का प्रबन्ध करना उचित है, ताकि वह लोग सर्वथा समिति की सहायता पर निर्भर रह कर निरे भाड़े के टट्टू न बन जावें। भाड़े के टट्टुओं से समिति का कार्य लेना, जिस में कतिपय मनुष्यों

के प्राणों का उत्तरदायित्व हो और थोड़ा सा भेद खुलने से ही बड़ा भयंकर परिणाम हो सकता है, उचित नहीं है। तत्पचात् उन महानुभावों की सम्मति हुई कि एक निश्चित कोष समितिके सदस्यों के देने के निमित्त स्थापित किया जावे। जिसकी आय का न्योरा इस प्रकार हो कि डकैतियों से जितना धन प्राप्त हो उस का आधा समिति के कार्यों में व्यय किया जावे और आधा समिति के सदस्यों को बराबर बांट दिया जावे। इस प्रकार के परामश से मैं सहमत न हो सका। और मैंने इस प्रकार की गुप्त समिति में, कि जिस का एक उद्देश्य पेट—पूर्ति हो योग देने से इनकार कर दिया। जब मेरी इस प्रकारकी दृष्टि देखी तो उन महानुभावों ने आपसमें षड्यन्त्र रचा।

जब मैंने उन महानुभावों के परामर्श तथा नियमादि को स्वीकार न किया तो वे चुप हो गये। मैं भी कुछ समझ न सका कि जो लोग मुझमें इतनी श्रद्धा रखते थे, जिन्होंने कई प्रकार की आशायें बांध कर मुझ से क्रान्तिकारी दल का पुनर्संङ्गठन करने की प्रार्थनायें की थीं, अनेकों प्रकार की आशायें बँधाई थी, सब कार्य स्वयं करने के वचन दिये थे, वे लोग ही मुझ पर इस प्रकारके नियम बनाने की सम्मति मांगने लगे। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। प्रथम प्रयत्न में जिस समय मैनपुरी षड्यन्त्र के सदस्यों के सहित कार्य करता था उस समय हम में से कोई भी अपने व्यक्तिगत प्राइवेट खर्च में समितिका धन व्यय करना पूर्ण पाप समझता था। जहां तक हो सकता अपने खर्चमें से माता पिता से कुछ लाकर प्रत्येक सदस्य समिति के कार्यों में धन व्यय किया करता था। इस कारण मेरा साहस इस प्रकार के नियमों में सहमत होने को न हो सका। मैं ने विचार किया कि यदि कोई समय आया, और किसी प्रकार अधिक धन प्राप्त हुआ, तो कुछ ऐसे स्वार्थी सदस्य हो सकते हैं,

जो अधिक धन लेनेकी इच्छा करें, और आपस में वैमनस्य बढ़े। परिणाम बड़े भयङ्कर हो सकते हैं। अतः इस प्रकारके कार्य में योग देना मैंने उचित न समझा।

मेरी यह अवस्था देख इन लोगोंने आपसमें षड्यन्त्र रचा, कि जिस प्रकार मैं कहूं वे नियम स्वीकार कर लें और विश्वास दिला कर जितने अस्त्र-शस्त्र मेरे पास थे, उन को मुझसे लेकर सबपर अपना आधिपत्य जमा लें। यदि मैं अस्त्र शस्त्र मांगू तो मुझसे युद्ध किया जावे, और आ पड़े तो मुझे कहीं ले जाकर जान से मार दिया जावे। तीन सज्जनों ने इस प्रकारका षड्यन्त्र रचा और मुझ से चालबाजी करनी चाही। दैवात् उन में से एक सदस्य के मन में कुछ दया आई। उसने आकर मुझसे सब भेद कह दिया। मुझे सुन कर बड़ा खेद हुआ, कि जिन व्यक्तियों को मैं पिता तुल्य मान कर श्रद्धा करता हूं, वे ही मेरे नाश करने का इस प्रकार नीचता का कार्य करनेको उद्यत हैं। मैं संभल गया। मैं उन लोगोंसे सतर्क रहने लगा कि पुनः प्रयाग की सी घटना न घटे। जिन महाशय ने मुझसे भेद कहा था, उन की उत्कट इच्छा थी कि वे एक रिवालवर रखें और इस इच्छा पूर्ति के लिये उन्होंने मेरा विश्वासपात्र बनने के कारण मुझसे भेद कहा। मुझसे एक रिवालवर मांगा कि मैं उन्हें कुछ समय के लिये रिवालवर दूं। यदि मैं उन्हें रिवालवर दे दूं तो वह उसे हजम कर जायें। मैं कर ही क्या सकता था। और अब रिवालवर इत्यादि पाना कोई सरल कार्य न था। बाद को बड़ी कठिनता से इन चालबाजियों से अपना पीछा छुड़ाया।

अब सब ओर से चित्त को हटा कर बड़े मनोयोगसे नौकरी में समय व्यतीत करने लगा। कुछ रुपया इकट्ठा करनेके विचार से, कुछ कमीशन इत्यादि का प्रबन्ध कर लेता था। इस प्रकार थोड़ा सा पिताजी का भार बटाया। सब से छोटी बहिन

का विवाह नहीं हुआ था। पिताजी के सामर्थ्य के बाहर था कि उस वहिन का विवाह किसी भले घरमें कर सकते। मैं ने रुपया जमा करके वहिनका विवाह एक अच्छे ज़मींदार के यहां कर दिया। पिता जी का भार उतर गया। अब केवल माता पिता, दादी तथा छोटे भाई थे, जिन के भोजनों का प्रबन्ध होना अधिक कठिन व्यापार न था। अब माताजी की उत्कट इच्छा हुई कि मैं भी विवाह कर लूं। कई अच्छे २ विवाह–सम्बन्ध सुयोग एकत्रित हुए। किन्तु मैं विचारता था कि जब तक पर्याप्त धन पास न हो, विवाह बन्धनमें फंसना ठीक नहीं। मैंने स्वतन्त्र कार्य आरम्भ किया, नौकरी छोड़ दी। एक मित्र ने सहायता दी। मैं ने एक निजी रेशमी कपड़ा बुनने का कारख़ाना खोल दिया। बड़े मनोयोग तथा परिश्रम से कार्य किया। परमात्मा की दयासे अच्छी सफलता हुई। एक डेढ़ साल में ही मेरा कारखाना चमक गया। तीन चार हज़ार की पूंजी से कार्य आरम्भ किया था। एक साल बाद सब खर्च निकाल कर लगभग दो हज़ार रुपये लाभ हुए। मेरा उत्साह और भी बढ़ा। मैंने एक दो व्यवसाय और प्रारम्भ किये। उसी समय मालूम हुआ कि संयुक्त प्रान्तके क्रान्तिकारी दलका पुनर्सङ्गठन हो रहा है। कार्यारम्भ हो गया है। मैं ने भी योग देने का वचन दिया। किन्तु उस समय मैं अपने व्यवसाय में बुरी तरह फंसा हुआ था। मैंने छः मास का समय लिया कि छः मास में मैं अपने व्यवसायको अपने साझी को सौंप दूंगा, और अपने आपको उसमें से निकाल लूंगा, तब स्वतन्त्रता पूर्वक क्रान्तिकारी कार्यमें योग दे सकूंगा। छः मास तक मैंने अपने कारखाने का सब काम साफ करके अपने साझी को सब काम समझा दिया। तत्पश्चात् अपने वचनानुसार कार्यमें योग देनेका उद्योग किया।

चतुर्थ खण्ड

वृहत् सङ्गठन ।

यद्यपि मैं अपना निश्चय कर चुका था, कि अब इस प्रकार के कार्यों में कोई भाग न लूंगा। किन्तु मुझे पुनः क्रान्तिकारी आन्दोलन में हाथ डालना पड़ा, जिस का कारण यह था कि मेरी तृष्णा न बुझी थी, मेरे दिल के अरमान न निकले थे। असहयोग आन्दोलन शिथिल हो चुका था। पूर्ण आशा थी कि जितने देश के नवयुवक उस आन्दोलन में भाग लेते थे, उन में अधिकतर क्रान्तिकारी आन्दोलन में सहायता देंगे और पूर्ण प्रीति से कार्य करेंगे। जब कार्य आरम्भ हो गया और असहयोगियों को टटोला तो वे आन्दोलन से कहीं अधिक शिथिल हो चुके थे। उन की आशाओं पर पानी फिर चुका था। घर की पूँजी समाप्त हो चुकी थी। घर में व्रत हो रहे थे। आगे की भी कोई विशेष आशा न थी। कांग्रेस में भी स्वराज्य दल का ज़ोर हो गया था। जिन के पास कुछ धन तथा इष्ट मित्रों का संगठन था, वे कौन्सिलों तथा एसेम्बली के सदस्य बन गये। ऐसा अवस्था में यदि क्रान्तिकारी संगठन कर्त्ताओं के पास पर्याप्त धन होता तो वे असहयोगियों को हाथ में ले कर उन से काम ले सकते थे। कितना भी सच्चा काम करने वाला हो किन्तु पेट तो सब के हैं। दिन भर में थोड़ा सा अन्न क्षुधा निवृति के लिये मिलना परमावश्यक है। फिर शरीर ढकने को भी आवश्यकता

होती है। अतएव कुछ प्रवन्ध ही ऐसा होना चाहिये जो नि
की आवश्यकतायें पूरी हो जावें । जितने धनी मानी स्वदे
प्रेमी थे उन्हों ने असहयोग आन्दोलन में पूर्ण सहायता दी थी
फिर भी कुछ ऐसे कृपालु सज्जन थे जो थोड़ी बहुत आर्थि
सहायता देते। किन्तु प्रान्त भर के प्रत्येक जिले में संगठन क
का विचार था । पुलिस की दृष्टि बचाने के लिये भी पू
प्रयत्न करना पड़ता था। ऐसी परिस्थिति मे साधारण नियम
को काम में लाते हुये कार्य करना बडा कठिन था । अनेक
उद्योग के पश्चात कुछ सफलता न होती थी । दो चार ज़िल
में संगठनकर्त्ता नियत किये गये थे, जिन को कुछ मासिक गुजा
दिया जाता था। पांच दश मास तक तो इस प्रकार कार्य चल
रहा। वाद को जो सहायक कुछ आर्थिक सहायता देने
उन्हों ने हाथ खींच लिया। अव हम लोगों की अवस्था ब
ख़राव हो गई । सब कार्य भार मेरे ऊपर ही आ चुका थ
कोई भी किसी प्रकार की सहायता न देता था । जहां तहां
पृथक पृथक ज़िलों में कार्य करने वाले मासिक व्यय का म
कर रहे थे। कई मेरे पास आये। मै ने कुछ रुपया कर्ज़ ले
उन लोगों को एक मास का खर्च दिया। कइयों पर कुछ क
भी हो चुका था। मैं कर्ज़ न निपटा सका। एक केन्द्र के का
कर्त्ता को जव पर्याप्त धन न मिल सका तो वे कार्य छोड़ कर च
गये। मेरे पास क्या प्रवन्ध था जो मैं सब की उदर पू
कर सकता? अद्भुत समस्या थी । किसी तरह उन लो
को समझाया।

थोडे दिनों में क्रान्तिकारी पर्चे आये । सारे देश
निश्चित तिथि पर पर्चे बांटे गये। रंगून, वम्बई, लाहौर, अमृतस
कलकत्ता तथा वंगाल के मुख्य मुख्य शहरों तथा संयुक्त प्रान्त
सभी मुख्य मुख्य ज़िलों मे पर्याप्त संख्या में पर्चो का वि

हुआ। भारत सरकार बड़ी सशङ्क हुई कि इतनी बड़ी सुसङ्गठित समिति है जो एक ही दिन सकल भारतवर्ष में पर्चे बट गये! उसी के बाद मैं ने कार्य कारिणी की एक बैठक कर के जो केन्द्र खाली हो गया था, उस के लिये एक महाशय को नियुक्त किया। केन्द्रों में कुछ परिवर्तन भी हुआ क्योंकि सरकार के पास संयुक्त प्रान्त के सम्बन्ध में बहुत सी सूचनायें पहुंच गई थीं। भविष्य की कार्य-कारिणी का निर्णय किया गया।

कार्यकर्त्ताओं की दुर्दशा

इस समय समिति के सदस्यों की बड़ी दुर्दशा थी। चने मिलना भी कठिन था। सब पर कुछ न कुछ क़र्ज़ा हो गया था। किसी के पास साबित कपड़े तक न थे। कुछ विद्यार्थी बन कर धर्मक्षेत्रों तक में भोजन कर आते थे। चार पांच ने अपने अपने केन्द्र त्याग दिये। पांच सौ से अधिक रुपये मैं क़र्ज़ा लेकर व्यय कर चुका था। यह दुर्दशा देख मुझे बड़ा कष्ट होने लगा। मुझसे भी भर पेट भोजन न किया जाता था। सहायता के लिये कुछ सहानुभूति रखने वालों का द्वार खटखटाया, किन्तु कोरा उत्तर मिला। किंकर्तव्य विमूढ़ कुछ समझ में न आता था। कोमल हृदय नवयुवक मेरे चारों ओर बैठ कर कहा करते, "पंडित जी अब क्या करें?" मैं उन के सूखे सूखे मुख देख बहुधा रो पड़ता कि स्वदेश-सेवा का व्रत लेने के कारण फ़कीरों से भी बुरी दशा हो रही है। एक एक कुर्ता तथा धोती भी ऐसी नहीं थी जो साबित होती। लँगोट पहिन कर दिन व्यतीत करते थे। अंगौछे पहन कर नहाते थे, एक समय क्षेत्र में भोजन करते थे, एक समय दो दो पैसे के सत्तू खाते थे! मैं पन्द्रह वर्ष से एक समय दूध पीता था। इन लोगों की यह दशा देख कर मुझे दूध पीने का साहस न होता था। मैं भी सब के साथ बैठ कर सत्तू खा लेता

था। मैं ने विचार किया कि इतने नवयुवकों के जीवन को नष्ट कर के उन्हें कहाँ भेजा जावे ? जब समिति का सदस्य बनाया था, तो लोगों ने बड़ी बडी आशायें बँधाई थीं। कइयों का पढ़ना लिखना छुड़ा कर काम में लगा दिया था। पहले से मुझे यह हालत मालूम होती तो मैं कदापि इसप्रकार की समितिमें योग न देता, बुरा फँसा। क्या करूं कुछ समझ ही में न आताथा अन्त में धैर्य धारण कर दृढ़ता पूर्वक कार्य करने का निश्चय किया।

इसी बीच मे बंगाल आर्डिनेन्स निकला और गिरफ्तारियां हुई। इन की गिरफ्तारियों ने यहां तक असर डाला कि कार्य-कर्त्ताओं में निष्क्रियता के भाव आगये। क्या प्रबन्ध किया जावे कुछ निर्णय नहीं कर सके। मैं ने प्रयत्न किया कि किसी तरह एक सौ रुपया मासिक का कहीं से प्रबन्ध हो जाय। प्रत्येक केन्द्र के प्रतिनिधिसे सर्व प्रकारेण प्रार्थना की थी कि समितिके सदस्यों से कुछ सहायता लें मासिक चन्दा वसूल करें, पर किसी ने कुछ न सुनी। व्यक्तिगत कुछ सज्जनों से प्रार्थना की कि वे अपने वेतन में से कुछ मासिक दे दिया करें किसी ने कुछ ध्यान न दिया। सदस्य रोज़ मेरे द्वार पर खडे रहते थे। पत्रों की भरमार रहती थी कि कुछ धन का प्रबन्ध कीजिये भूखों मर रहे है। दो एक को व्यवसाय में लगाने का भी प्रबन्ध किया। दो चार ज़िलों में काम बन्द कर दिया वहां के कार्यकर्त्ताओं से स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि हम मासिक शुल्क नहीं दे सकते। यदि कोई दूसरा निर्वाह का मार्ग हो, और उस ही पर निर्भर रह कर कार्य कर सकते हो तो करो। हम से जिस समय हो सकेगा देंगे किन्तु मासिक वेतन देने के लिये हम बाध्य नहीं। कोई बीस रुपये क़र्ज़े के मांगता था, कोई पचास का बिल भेजता था कईयों ने असंतुष्ट हो कर कार्य छोड़ दिया। मैं ने भी समझ लिया ठीक ही है, पर इतना करने पर भी गुज़र न हो सकी।

अशान्ति युवक दल ।

कुछ महानुभावों की प्रकृति होती है कि वे अपनी कुछ शान जमाना या अपने आप को बड़ा दिखाना अपना कर्तव्य समझते हैं, जिससे बहुत बड़ी हानियाँ हो जाती हैं। सरल प्रकृति के मनुष्य ऐसे मनुष्यों में विश्वास करके उनमें अशातीत साहस, योग्यता तथा कार्य दक्षता की आशा करके उन पर श्रद्धा रखते हैं। किन्तु समय आने पर यह निराशा के रूप में परिणत हो जाती है। इस प्रकार के मनुष्यों की किन्हीं कारणों वश यदि प्रतिष्ठा हो गई, अथवा अनुकूल परिस्थितियों के उपस्थित हो जाने से उन्होंने किसी उच्च कार्य में योग दे दिया, तब तो फिर वे अपने आपको बड़ा भारी कार्यकर्ता जाहिर करते हैं। जन साधारण भी अन्धविश्वास से उनकी बातों पर विश्वास कर लेते हैं, विशेष कर नवयुवक तो इस प्रकार के मनुष्यों के जाल में शीघ्र ही आजाते हैं। ऐसे ही लोग नेतागिरी की धुन में अपनी डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग पकाया करते हैं। इसी कारण पृथक पृथक दलों का निर्माण होता है। इस प्रकार के मनुष्य प्रत्येक समाज तथा प्रत्येक जाति में पाये जाते हैं। इन से क्रान्तिकारी दल भी मुक्त नहीं रह सकता। नवयुवकों का चंचल स्वभाव होता है, वह शान्त रह कर संगठित कार्य करना बड़ा दुष्कर समझते हैं। उनके हृदय में उत्साह की उमंगें उठती हैं, वे समझते हैं दो चार अस्त्र हाथ आये कि हमने गवरमेंन्ट को नाकों चने चबवा दिये। मैं भी जब क्रान्तिकारी दल में योग देने का विचार कर रहा था, उस समय मेरी उत्कण्ठा इच्छा थी कि यदि एक रिवालवर मिल जावे तो दसबीस अंग्रेजों को मार दूं। इसी प्रकार के भाव मैं ने कई नवयुवकों में देखे। उनकी बड़ी प्रबल हार्दिक इच्छा होती है, कि किसी प्रकार एक रिवालवर या पिस्तौल उनके हाथ लगता तो वे

उसे अपने पास रखते। मैं ने उन से, पास रखने का लाभ पूछा, तो कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं। कई युवकों को मैं ने इस शौक़ के पूरा करने में सैकडों रुपये बरबाद करते भी देखा है। किसी क्रान्तिकारी आन्दोलन के सदस्य नहीं, कोई विशेष कार्य भी नहीं, महज़ शौक़िया रिवालवर पास रखेंगे। ऐसे ही थोड़े से युवकों का एक दल एक महोदय ने भी एकत्रित किया। ये सब बड़े सच्चरित्र, स्वदेशाभिमानी और सच्चे कार्यकर्ता थे। इस दल ने विदेश से अस्त्र प्राप्त करने का बड़ा उत्तम सूत्र प्राप्त किया था, जिसमें यथा रुचि पर्याप्त अस्त्र मिल सकते थे, उन अस्त्रों के दाम भी अधिक न थे। अस्त्र भी पर्याप्त संख्या में बिलकुल नये मिलते थे। यहां तक प्रबन्ध हो गया था कि यदि हम लोग मूल्य का उचित प्रबन्ध कर देंगे, और यथा समय मूल्य निपटा दिया करेंगे, तो हम को माल उधार भी मिल जाया करेगा और हमें जब जिस प्रकार के जितनी संख्या में अस्त्रों की आवश्यकता होगी, मिल जाया करेंगे। यही नहीं समय आने पर हम विशेष प्रकार की मशीन वाली बन्दूकें भी बनवा सकेंगे। इस समय समिति की आर्थिक अवस्था बड़ी खराब थी। इस सूत्र के हाथ लग जाने और इससे लाभ उठाने की इच्छा होने पर भी बिना रुपये के कुछ होता दिखलाई न पडता था। रुपये का प्रबन्ध करना नितान्त आवश्यक था। किन्तु वह हो कैसे? दान कोई देता न था, कर्ज़ भी मिलता न था, और कोई उपाय न देख डाका डालना तय हुआ किन्तु किसी व्यक्तिविशेषकी सम्पत्ति(Private Property)पर डाकाडालना हमे अभीष्ट न था। सोचा, यदि लूटना है तो सरकारी माल क्यों न लूटा जावे। इसी उधेड़ बुन में एक दिन रेल में जा रहा था गार्ड के डब्बे के पास की गाड़ी में बैठा था। स्टेशन मास्टर एक थैली लाया, और गार्ड के डब्बे में डाल गया। कुछ खटपट

की आवाज़ हुई मैंने उतर कर देखा कि एक लोहे का संदूक रखा है। विचार किया कि इसी में थैली डाला होगी। अगले स्टेशन पर उसमें थैली डालते भी देखा। अनुमान किया कि लोहे का संदूक गार्ड के डब्बे में ज़ंजीर से बंधा रहता होगा, ताला पड़ा रहता होगा, आवश्यकता पड़ने पर ताला खोलकर उतार लेते होंगे। इसके थोड़े दिनों बाद लखनऊ स्टेशन पर जाने का अवसर प्राप्त हुआ। देखा कि एक गाड़ी में से कुली लोहे के, आमदनी डालने वाले सन्दूक उतार रहे हैं। निरीक्षण करने से मालूम हुआ कि उसमें जञ्जीर ताला कुछ नहीं पड़ता, यों ही रखे जाते हैं। उसी समय निश्चय किया कि इसी पर हाथ मारूंगा।

रेलवे डकैती

उसी समय से धुन सवार हुई तुरन्त स्थान पर जा टाइम टेबुल देखकर अनुमान किया कि सहारनपुर से गाड़ी चलती है, लखनऊ तक अवश्य दस हज़ार रुपये रोज़ की आमदनी आती होगी। सब बातें ठीक करके कार्यकर्ताओं का संग्रह किया। दस नवयुवकों को लेकर विचार किया कि किसी छोटे स्टेशन पर जब गाड़ी खड़ी हो, स्टेशन के तार घर पर अधिकार करलें, और गाड़ी का भी सन्दूक उतार कर तोड़ डालें, जो कुछ मिले उसे लेकर चल दें। परन्तु इस कार्य में मनुष्यों की अधिक संख्या की आवश्यकता थी। इस कारण यही निश्चय किया कि गाड़ी की जञ्जीर खींचकर, चलती गाड़ी को खड़ा करके तब लूटा जावे। सम्भव है कि तीसरे दर्जे की जञ्जीर खींचने से गाड़ी न खड़ी हो, क्योंकि तीसरे दर्जे में बहुधा प्रबन्ध ठीक नहीं रहता है। इस कारण से दूसरे दर्जे की जञ्जीर खींचने का प्रबन्ध किया। सब लोग उसी ट्रेन में सवार थे। गाड़ी खड़ी होने पर सब उतर कर गार्ड के डब्बे के पास पहुंच गये। लोहे का सन्दूक उतारकर

छेनियों से काटना चाहा, छेनियों ने काम न दिया तब कुल्हाड़ा चला।

मुसाफिरों से कह दिया कि सब गाड़ी में चढ़ जाओ। गाड़ी का गार्ड गाड़ी में चढ़ना चाहता था, पर उसे ज़मीन पर लेट जाने को आज्ञा दी, ताकि बिना गार्ड के गाड़ी न जा सके। दो आदमियों को नियुक्त किया कि वे लाइन की पगडन्डी को छोड़कर घास में खड़े होकर गाड़ी से हटे हुए गोली चलाते रहें। एक सज्जन गार्ड के डब्बे से उतरे। उनके पास भी माउज़र पिस्तौल था। विचारा कि ऐसा शुभअवसर जाने कब हाथ आवे। माउज़र पिस्तौल काहे को चलाने को मिलेगा? उमंग जो आई सीधा करके दागने लगे। मैंने जो देखा तो डाटा, क्योंकि गोली चलाने की ड्यूटी (काम) ही न थी। फिर यदि कोई रेलवे मुसाफिर कौतूहल वश बाहर को शिर निकाले तो, उसके गोली ज़रूर लग जावे। हुआ भी ऐसा ही, जो व्यक्ति रेल से उतरकर अपनी स्त्री के पास जा रहा था, मेरा विचार है कि इन्हीं महाशय की गोली उसके लग गई, क्योंकि जिस समय यह महाशय सन्दूक नीचे डालकर गार्ड के डब्बे से उतरे थे, केवल दो तीन फ़ायर हुये थे। रेल के मुसाफिर ट्रेन में चढ़ चुके थे। अनुमान होता है, उसी समय स्त्री ने कोलाहल किया होगा और उसका पति उसके पास जा रहा था जो उक्त महाशय की उमंग का शिकार होगया। मैंने यथाशक्ति पूर्ण प्रबन्ध किया था कि जब तक कोई बन्दूक लेकर सामना करने न आवे, या मुकाबले मे गोली न चले तब तक किसी आदमी पर फ़ायर न होने पावे। मैं नर-हत्या करा के डकैती को भीषण रूप देना नहीं चाहता था। फिर भी मेरा कहा न मानकर अपना काम छोड गोली चलादेनेका यहपरिणाम हुआ। गोली चलाने की जिनको मैंने ड्यूटी दी थी वे बड़े दक्ष तथा अनुभवी मनुष्य थे, उनसे भूल होना असम्भव है। उन लोगों को

मैंने देखा कि वे अपने स्थान से पांच मिनट बाद पांच फ़ायर करते थे यही मेरा आदेश था।

सन्दूक तोड तीन गठरियों में थैलियां बांधी। सबसे कई बार कहा–देख लो कोई सामान रह तो नहीं गया ? इस पर भी एक महाशय चद्दर डाल आये। रास्ते में थैलियों से रुपया निकालकर गठरी बांधी और उसी समय लखनऊ शहर मे जा पहुंचे। किसी ने पूछा भी नहीं, कौन हो, कहां से आये हो ? इस प्रकार दस आदमियों ने एक गाड़ी को रोक कर लूट लिया। उस गाड़ी में चौदह मनुष्य ऐसे थे जिनके पास बन्दूक या रायफलें थीं। दो अङ्गरेज सशस्त्र फौजी जवान भी थे, पर सब शांत रहे। ड्रायवर महाशय तथा एक इंजीनियर महाशय दोनों का बुरा हाल था। वे दोनों अंगरेज थे। ड्रायवर महाशय इंजन में लेट रहे। इंजीनियर महाशय पाख़ाने में जा छिपे। हमने यह कह दिया था कि मुसाफिरों से न बोलेंगे, सरकार का माल लूटेंगे। इस कारणसे मुसा-[illegible]र भी शान्ति पूर्वक बैठे रहे। समझे तीस चालीस आदमियों ने [illegible]ड़ी को चारों ओरसे घेर लिया है। केवल दस युवकों ने इतना [illegible]ा आतंक फैला दिया। साधारणतया इस बात पर बहुत से [illegible]नुष्य विश्वास करने में भी संकोच करेंगे कि दस नवयुवकों ने [illegible]ड़ी खड़ी करके लूट ली। जो भी हो बात वास्तव में यही थी। [illegible] दस कार्यकर्ताओं में अधिकतर तो ऐसे थे जो आयु मे सिर्फ [illegible]गभग बाईस वर्ष के होंगे, और जो शरीर में बड़े पुष्ट भी न थे। [illegible] सफलता को देखकर मेरा साहस बहुत बढ़ गया। मेरा जो [illegible]चार था, वह अक्षरशः सत्य सिद्ध हुआ। पुलिस वालों की [illegible]रता का मुझे अन्दाज़ा था। इस घटना से भविष्य के कार्य की [illegible]त बड़ी आशा बंध गई। नवयुवकों का भी उत्साह बढ़ गया। [illegible]तना क़र्ज़ा था निपटा दिया। अस्त्रों की ख़रीद के लिये लगभग

एक हज़ार रुपये भेज दिये। प्रत्येक केन्द्र के कार्यकर्ता को
स्थान भेज कर दूसरे प्रान्तों में भी कार्य विस्तार करनेका नि
कर के कुछ प्रबन्ध किया। एक युवक दलने बम्ब बनाने
प्रबन्ध किया, मुझ से भी सहायता चाही। मैंने आर्थिक सहा
दे कर अपना एक सदस्य भेजने का वचन दिया। किन्तु
त्रुटियां हुईं, जिससे सम्पूर्ण दल अस्त-व्यस्त हो गया।

मैं इस विषय में कुछ भी न जान सका कि दूसरे देश
क्रान्तिकारियों ने प्रारम्भिक अवस्था में हम लोगों की
प्रयत्न किया या नहीं। यदि पर्याप्त अनुभव होता
इतनी साधारण भूलें न करते। त्रुटियों के होते हुए भी
भी न बिगड़ता और न कुछ भेद खुलता; न इस अवस्था
पहुंचते। क्योंकि मैं ने जो संगठन किया था उस में किसी
से मुझे कोई कमजोरी न दिखाई देती थी। कोई भी
प्रकार की कमज़ोरी न समझ सकता था। इसी कारण
बन्द किये बैठे रहे। किन्तु आस्तीन में सांप छिपा हुआ
ऐसा गहरा मुंह मारा कि चारोंखाने चित्त कर दिया!

जिन्हें हम हार समझे थे गला अपना सजाने को।
वही अब नाग बन बैठे हमारे काट खाने को॥

नवयुवकों में आपस की होड़ के कारण बहुधा वित
तथा कलह भी हो जाती थी, जो भयंकर रूप धारण कर ले
मेरे पास जब मामला आता तो मैं प्रेमपूर्वक समिति की
का अवलोकन कराके, सब को शान्ति कर देता। कभी नेतृत्व
लेकर वादाविवाद चल जाता। एक केन्द्र के निरीक्षक से
के कार्यकर्ता अत्यन्त असन्तुष्ट थे। क्योंकि निरीक्षक ने
भव हीनता के कारण कुछ भूलें हो गई थीं। वह अवस्था

मुझे बड़ा खेद तथा आश्चर्य हुआ क्योंकि नेतागीरी का भूत सबसे भयानक होता है। जिस समय से यह भूत खोपड़ी पर सवार होता है, उसी समयसे सब काम चौपट होजाता है। केवल एक दूसरे के दोष देखने में समय व्यतीत होता है और वैमनस्य बढ़कर बड़े भयंकर परिणामों का उत्पादक होता है। इस प्रकार के समाचार सुन मैंने सबको एकत्रित कर खूब फटकारा। सब अपनी त्रुटि समझकर पछताये और प्रीति पूर्वक आपस में मिल कर कार्य करने लगे। पर ऐसी अवस्था हो गई थी कि दलबन्दी की नौबत आ गई थी। एक प्रकार से तो दलबन्दी हो ही गई थी पर मुझ पर सब की श्रद्धा थी और मेरे वक्तव्य को सब मान लेते थे। सब कुछ होने पर भी मुझे किसी ओर से किसी प्रकार का सन्देह न था। किन्तु परमात्मा को ऐसा ही स्वीकार था जो इस अवस्था का दर्शन करना पड़ा।

गिरफ्तारी

काकोरी डकैती होने के बाद से ही पुलिस बहुत सचेत हुई। बड़े जोरों के साथ जाँच आरम्भ हो गई। शाहजहांपुर में कुछ नई मूर्तियों के दर्शन हुए। कुछ पुलिस के विशेष सदस्य मुझसे भी मिले। चारों ओर शहर में यही चर्चा थी कि रेलवे डकैती किसने करली? उन्हीं दिनों शहर में दो एक डकैती के नोट निकल आये, अब तो पुलिस का अनुसन्धान और भी बढ़ने लगा। कई मित्रों ने मुझसे भी कहा कि सतर्क रहो। दो एक सज्जन ने निश्चित रूपेण समाचार दिया कि मेरी गिरफ्तारी ज़रूर हो जावेगी। मेरी कुछ समझ में न आया। मैंने विचार किया कि यदि गिरफ़्तारी हो भी गई तो पुलिस को मेरे विरुद्ध कुछ भी प्रमाण न मिल सकेगा। अपनी बुद्धिमत्ता पर कुछ अधिक विश्वास था। अपनी बुद्धि के सामने दूसरों की बुद्धि को तुच्छ

समझता था। कुछ यह भी विचार था कि देश की सहानुभूति की परीक्षा की जावे। जिस देश पर हम अपना बलिदान देने को उपस्थित हैं, उस देश के वासी हमारे साथ कितनी सहानुभूति रखते हैं? कुछ जेल का अनुभव भी प्राप्त करना था। वास्तव में मैं काम करते करते श्रान्त हो गया था। भविष्य के कार्यों में अधिक नर-हत्या का ध्यान करके मैं हतबुद्धि सा होगया था। मैंने किसी के कहने की कोई भी चिन्ता न की।

रात्रि के समय ग्यारह बजे के लगभग एक मित्र के यहां से अपने घर पर गया। रास्ते में खुफिया पुलिस के सिपाहियों से भेंट हुई। कुछ विशेष रूप से उस समय भी वे मेरी देख भाल कर रहे थे। मैंने कोई चिन्ता न की और घर पर जाकर सो गया। प्रातःकाल चार बजने पर जगा, शौचादि से निवृत्त होने पर बाहर द्वार पर बन्दूक के कुन्दों का शब्द सुनाई दिया। मैं समझ गया कि पुलिस आ गई है। मैं तुरन्त ही द्वार खोल कर बाहर गया। एक पुलिस अफ़सर ने बढ़कर हाथ पकड़ लिया। मैं गिरफ्तार होगया। मैं केवल एक अंगोछा पहने हुए था। पुलिस वालों को अधिक भय न था। पूछा यदि घर में कोई अस्त्र हों, तो दे दीजिये। मैंने कहा कोई आपत्तिजनक वस्तु घरमें नहींहैं। उन्होंने बड़ी सज्जनता की। मेरे हथकड़ी इत्यादि कुछ न डालीं। मकान की तलाशी लेते समय एक पत्र मिल गया, जो मेरी जेब में था। कुछ होनहार, कि तीन चार पत्र मैंने लिखे थे। डाकखानेमें डालने को भेजे, तब तक डाक निकल चुकी थी। मैंने वह सब अपने पास ही रख लिये। विचार हुआ कि डाक के बम्बे में डाल दूं। फिर विचार किया जैसे बम्बे में पड़े रहेंगे वैसे जेब में पड़े हैं। मैं उन

पत्रों को वापस घर ले आया। उन्हीं में एक पत्र आपत्तिजनक था, जो पुलिस के हाथ लग गया। गिरफ़्तार होकर पुलिस कोतवाली पहुंचा। वहां पर एक ख़ुफ़िया पुलिस के अफ़सर से भेंट हुई। उस समय उन्होंने कुछ ऐसी बातें की, जिन्हें मैं या एक व्यक्ति और जानता था। कोई तीसरा व्यक्ति इस प्रकार से व्योरावार नहीं जान सकता था। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। किन्तु सन्देह इस कारण न हो सका कि मैं दूसरे व्यक्ति के कार्यों पर अपने शरीर के समान ही विश्वास रखता था। शाहजहाँपुर में जिन जिन व्यक्तियों की गिरफ़्तारी हुई, वह भी बड़ी आश्चर्यजनक प्रतीत होती थी, जिन पर कोई सन्देह भी न करता था, पुलिस उन्हें कैसे जान गई ? दूसरे स्थानों पर क्या हुआ, कुछ भी न मालूम हो सका। जेल पहुंच जाने पर मैं थोड़ा बहुत अनुमान कर सका, कि सम्भवतः दूसरे स्थानों में भी गिरफ़्तारियां हुई होंगी, गिरफ़्तारियों के समाचार सुन शहर के सभी मित्र भयभीत हो गये। किसी से इतना भी न हो सका कि जेल में हम लोगों के पास समाचार भेजने का प्रबन्ध कर देता।

जेल

जेल में पहुंचते ही ख़ुफ़िया पुलिस वालों ने यह प्रबन्ध करवा कि हम सब एक दूसरे से अलग रक्खे गये, किन्तु फिर भी एक दूसरे से बातचीत हो जाती थी। यदि साधारण क़ैदियों के साथ रखते तब तो बातचीत का पूर्ण प्रबन्ध हो जाता, इस कारण से सबको अलग अलग तनहाई की कोठरियों में बन्द किया यही प्रबन्ध दूसरे ज़िले की जेलों में भी किया गया था, जहां जहां पर इस सम्बन्ध में गिरफ़्तारियां हुई थी। अलग अलग रखने से पुलिस को यह सुविधा होती है कि प्रत्येक से पृथक्

पृथक मिलकर वातचीत करते हैं। कुछ भय दिखाते हैं, कुछ इधर उधर की बातें करके भेद जानने का प्रयत्न करते हैं। अनुभवी लोग तो पुलिस वालों से मिलने से इन्कार ही कर देते हैं। क्योंकि उनसे मिलकर हानि के अतिरिक्त लाभ कुछ नहीं होता। कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जो समाचार जानने के लिये कुछ बात चीत करते हैं। पुलिस वालों से मिलना ही क्या है वे तो चाल बाज़ी से बात निकालने की रोटी ही खाते हैं। उनका जीवन इसी प्रकार की बातों में व्यतीत होता है। नवयुवक दुनियादारी क्या जानें, न वे इस प्रकार की बातें बना सकते हैं।

जब किसी प्रकार कुछ समाचार ही न मिलते तब तो बहुत जी घबड़ाता। यही पता नहीं चलता कि पुलिस क्या कर रहा है, भाग्य का क्या निर्णय होगा? जितना समय व्यतीत होता जाता था उतनी ही चिन्ता बढ़ती जाती थी। जेल अधिकारियों से मिलकर पुलिस यह भी प्रबन्ध करा देती है कि मुलाक़ात करने वालों से घर के सम्बन्ध में बातचीत करें, मुक़द्दमे के सम्बन्ध में कोई बातचीत न करें। सुविधा के लिये सबसे प्रथम यह परमावश्यक है कि एक विश्वासपात्र वकील किया जावे जो यथा समय आकर बातचीत कर सके। वकील के लिये किसी प्रकार की रुकावट नहीं हो सकती। वकील के साथ जो अभियुक्त की बातें होती हैं, उनको कोई दूसरा नहीं सुन सकता। क्योंकि इस प्रकार का क़ानून है, इस प्रकार का अनुभव बाद में हुआ। गिरफ़्तारी के बाद शाहजहांपुर के वकीलों से मिलना भी चाहा, किन्तु शाहजहांपुर में ऐसे दब्बू वकील रहते हैं जो सरकार के विरुद्ध मुक़द्दमे में सहायता देने में हिचकते हैं।

मुझसे ख़ुफ़िया पुलिस के कप्तान साहब मिले। थोड़ी सी बातें करके अपनी इच्छा प्रकट की कि मुझे सरकारी गवाह

बनाने की इच्छा रखते हैं। थोड़े दिनों में एक मित्र ने भयभीत होकर, कि कहीं यह भी न पकड़ा जावे, बनारसीलाल से भेंट की और समझा बुझाकर उसे सरकारी गवाह बना दिया। बनारसी-लाल बहुत घबराता था कि कौन सहायता देगा, सज़ा जरूर हो जावेगी। यदि किसी वकील से मिल लिया होता तो उसका धैर्य्य न टूटता। पं० हरकरननाथ शाहजहांपुर आये, जिस समय वह अभियुक्त श्रीयुत प्रेमकृष्ण खन्ना से मिले, उस समय अभियुक्त ने पं० हरकरननाथ से बहुत कुछ कहा कि मुझ से तथा दूसरे अभियुक्तों से मिल लें। यदि वह कहा मान जाते और मिल लेते तो बनारसीलाल को साहस हो जाता और वह डटा रहता। उसी रात्रि को पहले एक इन्स्पेक्टर पुलिस बनारसीलाल से मिले। फिर जब मैं सो गया तब बनारसीलाल को निकाल कर ले गये। प्रातःकाल पांच बजे के क़रीब, जब बनारसीलाल की कोठरी में से कुछ शब्द न सुनाई दिया, तो बनारसीलाल को पुकारा। पहरे पर जो क़ैदी था, उससे मालूम हुआ, बनारसीलाल बयान दे चुके। बनारसीलाल के सम्बन्ध में सब मित्रों ने कहा था कि इस से अवश्य धोखा होगा, पर मेरी बुद्धि में कुछ न समाया था। प्रत्येक जानकार ने बनारसीदास के सम्बन्ध में यही भविष्यवाणी की थी कि वह आपत्ति पड़ने पर अटल न रह सकेगा। इस कारण सब ने उसे किसी प्रकार के गुप्त कार्य में लेने की मनाही की थी। अब तो जो होना था सो हो ही गया।

थोड़े दिनों के बाद ज़िला कलेक्टर मिले। कहने लगे फांसी हो जावेगी। बचना हो तो बयान दे दो। मैंने कुछ उत्तर न दिया। तत्पश्चात् ख़ुफ़िया पुलिस के कप्तान साहब मिले, बहुत सी बातें कीं। कई क़ाग़ज़ दिखलाये। मैंने कुछ कुछ अन्दाज़ा लगाया कि कितनी दूर तक वे लोग पहुंच गये हैं। मैंने कुछ बातें बनाईं

ताकि पुलिस का ध्यान दूसरी ओर चला जावे, परन्तु उन्हें तो विश्वसनीय सूत्र हाथ लग चुका था, वे बनावटी बातों पर क्यों विश्वास करते ? अन्त में उन्हों ने अपनी यह इच्छा प्रकट की कि यदि मैं बङ्गाल का सम्बन्ध बनाकर कुछ बोलशेविक सम्बन्ध के विषय में अपना बयान दे दूं, तो वह मुझे थोड़ी सी सज़ा करा देंगे, और सज़ा के थोड़े दिनों बाद ही जेल से निकाल कर इङ्गलैण्ड भेज देंगे। और पन्द्रह हज़ार रुपये पारितोषिक सरकार से दिला देंगे। मैं मन ही मन बहुत हंसता था। अन्त में एक दिन फिर मुझ से जेल में मिलने को गुप्तचर विभाग के कप्तान साहब आये। मैंने अपनी कोठरी में से निकलने से ही इन्कार कर दिया। वह कोठरी पर आकर बहुत सी बातें करते रहे, अन्त में परेशान होकर चले गये।

शिनाख़्तें कराई गईं पुलिस को जितने आदमी मिल सके उतने आदमी लेकर शिनाख़्त कराई। भाग्यवश श्री ऐनुद्दीन साहब मुक़दमे के मजिस्ट्रेट मुकर्रर हुए, जी भर के पुलिस की मदद की। शिनाख़्तों में अभियुक्तों को साधारण मजिस्ट्रेटों की भांति भी सुविधायें न दीं। दिखाने के लिये काग़ज़ी कार्रवाई ख़ूब साफ़ रखी। ज़बान के बड़े मीठे थे। प्रत्येक अभियुक्त से बड़े प्रेम से मिलते थे। बड़ी मीठी मीठी बातें करते थे। सब समझते थे कि हम से सहानुभूति रखते हैं। कोई न समझ सका कि अन्दर ही अन्दर घाव कर रहे हैं। इतना चालाक अफ़सर शायद ही कोई दूसरा हो। जब तक मुक़दमा उनकी अदालत में रहा किसी को कोई शिकायत का मौक़ा ही न दिया। अगर कभी कोई बात भी हो जाती तो ऐसे ढंग से उसे टालने की कोशिश करता कि किसी को बुरा ही न लगता। बहुधा ऐसा भी हुआ कि खुली अदालत

में अभियुक्तों से क्षमा तक मांगने में संकोच न किया। किन्तु क़ाग़ज़ी कार्रवाई में इतना होशियार था कि जो कुछ लिखा सदैव अभियुक्तों के विरुद्ध। जब मामला सेशन सुपुर्द किया और आज्ञापत्र में युक्तियां दीं, तब सब की आंखें खुलीं कि कितना गहरा घाव मार दिया।

मुकदमा अदालत में न आया था; उसी समय रायबरेली में बनवारीलाल की गिरफ़्तारी हुई। मुझे हाल मालूम हुआ। मैंने पण्डित हरकरननाथ से कहा कि सब काम छोड़कर सीधे रायबरेली जावें और बनवारीलाल से मिलें, किन्तु उन्हों ने मेरा बातों पर कुछ भी ध्यान न दिया। मुझे बनवारीलाल पर पहले से ही सन्देह था, क्योंकि उसका रहन-सहन इस प्रकार का था कि जो ठीक न था। जब दूसरे सदस्यों के साथ रहता, तब उनसे कहा करता कि मैं जिला-संगठनकर्ता हूं मेरी गणना अधिकारियों में है। मेरी आज्ञा पालन किया करो। मेरे जूठे बर्तन मला करो। कुछ विलासिता-प्रिय भी था। प्रत्येक समय शीशा, कङ्घा तथा साबुन साथ रखता था। मुझे इस से भय था, किन्तु हमारे दल के एक खास आदमी का वह विश्वास-पात्र रह चुका था। उन्हों ने सैकड़ों रुपये दे कर उस की सहायता की थी। इसी कारण हम लोग भी अन्त तक उसे मासिक सहायता देते रहे थे। मैंने बहुत कुछ हाथ पैर मारे। पर कुछ भी न चली, और जिस का मैं भय करता था वही हुआ। भाड़े का टट्टू अधिक बोझ न सम्भाल सका, उस ने बयान दे ही दिये। जब तक यह गिरफ़्तार न हुआ था कुछ सदस्यों ने इस के पास जो अस्त्र थे वे मांगे। पर इस ने न दिये। जिला अफ़सर की शान में रहा। गिरफ़्तार होते ही सब शान मिट्टी में मिल गई।

बनवारीलाल के बयान दे देने से पुलिस का मुक़दमा मजबूती पकड़ गया। यदि वह अपना बयान न देता तो मुकदमा बहुत कमज़ोर था। सब लोग चारो ओर से एकत्रित कर के लखनऊ ज़िला जेल में रखे गये। थोड़े समय तक अलग अलग रहे, किन्तु अदालत में मुक़दमा आने से पहले ही एकत्रित कर दिये गये।

मुक़दमे में रुपये की जरूरत थी। अभियुक्तों के पास क्या था? उनके लिये धन-संग्रह करना कितना दुस्तर था न जाने किस प्रकार निर्वाह करते थे। अधिकतर अभियुक्तों का कोई सम्बन्धी पैरवी भी न कर सकता था। जिस किसी के कोई था भी वह बाल बच्चों तथा घर को संभालता था, इतने समय तक घर बार छोड़ कर मुकदमा करता। यदि चार अच्छे पैरवी करने वाले होते, तो पुलिसका तीन चौथाई मुकदमा टूट जाता। लखनऊ ऐसे जनाने शहर में मुकदमा हुआ, जहां अदालत में कोई भी शहर का आदमी न आता था। इतना भी तो न हुआ कि एक अच्छा प्रेस रिपोर्टर ही रहता, मुकदमे की सारी कार्यवाही को, जो कुछ अदालत में होता था, प्रेस में भेजता रहता। इण्डियन डेली टेलीग्राफ वालों ने कृपा की। यदि कोई अच्छा रिपोर्टर आ भी गया, और जो कुछ अदालत की कार्यवाही ठीक ठीक प्रकाशित हुई तो पुलिस वालो ने जज साहब से मिल कर तुरन्त उस रिपोर्टर को निकलवा दिया। जनता की कोई सहानुभूति नथी। जो पुलिस के जी में आया करती रही, इन सारी बातों को देख कर जज का साहस बढ़ गया। उसने जैसाजी चाहा सब कुछ किया। अभियुक्त चिल्लाये हाय! हाय! पर कुछ भी सुनवाई न हुई। और बातें तो दूर, श्रीयुत दामोदर स्वरूप सेठ को पुलिस ने जेल में सड़ा डाला। लगभग एक वर्ष तक आप जेल में तड़पते रहे। एक सौ पाउण्ड

से केवल ६६ पाउन्ड वज़न रह गया। कई बार जेलमें मरणासन्न हो गये। नित्य बेहोशी आ जाती थी। लगभग दस मास तक कुछ भी भोजन न कर सके। जो कुछ छटांक दो छटांक दूध किसी प्रकार पेट में पहुंच जाता था, उस से इस प्रकारकी विकट वेदना होती थी कि कोई आप के पास खड़े होकर उस छटपटानेके दृश्य को देख न सकता था। एक मेडिकल बोर्ड बनाया गया, जिसमें तीन डाक्टर थे। उन (बुद्धू)की कुछ समझमें न आया, तो कह दिया गया कि सेठ जी को कोई बीमारी ही नहीं है। जब से काकोरी षड्यन्त्र के अभियुक्त जेलमें एक साथ रहने लगे, तभी से उनमें एक अद्भुत परिवर्तन का समावेश हुआ, जिसका अवलोकन कर मेरे आश्चर्य की सीमा न रही। जेल में सब से बड़ी बात तो यह थी कि प्रत्येक आदमी अपनी नेतागीरी की दुहाई देता था। कोई भी बड़े छोटे का भेद न रहा। बड़े अनुभवी पुरुषों की बातों की अवहेलना होने लगी। डिसिप्लिन (अनुशासन) का नाम भी न रहा। बहुधा उलटे जबाव मिलने लगे। छोटी सी छोटी बातों पर मतभेद हो जाता। इस प्रकार का मतभेद कभी कभी वैमनस्य तक का रूप धारण कर लेता। आपस में झगड़ा भी हो जाता। खैर! जहां चार बर्तन रहते हैं वहां खटकाते ही हैं। ये लोग तो मनुष्य देहधारी थे। परन्तु लीडरी की धुन ने पार्टीबन्दी का ख्याल पैदा कर दिया। जो नवयुवक जेलके बाहर अपने से बड़ों की आज्ञा को वेद—वाक्य के समान मानते थे वे ही उन लोगों का तिरस्कार तक करने लगे। इसी प्रकार आपस का वादा विवाद कभी कभी भयङ्कर रूप धारण कर लिया करता। प्रान्तीय प्रश्न छिड़ जाता। बंगाली तथा संयुक्त-प्रान्त वासियोंके कार्यकी आलोचना होने लगती। इसमें कोई संदेह नहीं कि, बंगाल ने क्रान्तिकारी आन्दोलन में दूसरे प्रान्तों

से अधिक कार्य किया है; किन्तु बंगालियों की हालत यह है कि जिस किसी कार्यालय या दफ़्तर में एक भी बंगाली पहुंच जावेगा थोड़े ही दिनों में ही उस स्थान पर बंगाली ही बंगाली दिखाई देंगे। जिस शहर में बंगाली रहते हैं उनकी बस्ती अलग ही बसती है। बोली भी अलग। खान पान भी अलग। यही सब जेलमें अनुभव हुआ।

जिन महानुभावोंको मैं त्याग की मूर्ति समझता था, उनके अन्दर बंगाली पनेका भाव देखा। मैं ने जेल से बाहर कभी स्वप्न में भी यह विचार न किया था कि क्रान्तिकारी दल के सदस्यों में भी प्रान्तीय भावों का समावेश होगा। मैं तो यही समझता रहा कि क्रान्तिकारी जो समस्त भारतवर्षको स्वतन्त्र करने का प्रयत्न कर रहे हैं, उन्हें किसी प्रान्त विशेष से क्या सम्बन्ध। परन्तु साक्षात् अनुभव कर लिया कि प्रत्येक बंगाली के दिमाग में कविवर रवीन्द्रनाथ का गीत "आमार सोनार बांगला, आमितोमाके भालो वासी" (मेरे सोने का बंगाल मैं तुझ से मुहब्बत करता हूं) ठूंस ठूंस कर भरा था, जिस का उन के नैमित्तिक जीवन में पग पग पर प्रकाश होता था। अनेक प्रयत्न करने पर भी जेल के बाहर इस प्रकारका अनुभव कदापि न प्राप्त हो सकता था।

बड़ी भङ्कर से भयङ्कर आपत्ति में भी मेरे मुंह से आह न निकली, प्रिय सहोदर का देहान्त होने पर भी आंखसे आंसू न गिरा, किन्तु इस दल के कुछ व्यक्ति ऐसे थे जिनकी आज्ञा को मैं संसारमें सब से श्रेष्ठ मानता था, जिन की जरा सी कड़ी दृष्टि भी मैं सहन न कर सकता था, जिन के कटु वचनों के कारण मेरे हृदय पर चोट लगती थी, और अश्रुओं का श्रोत उबल पड़ता था। मेरी इस अवस्थाको देख कर दो चार मित्रों को

जो मेरी प्रकृति को जानते थे बड़ा आश्चर्य होता था। लिखते हुये हृदय कम्पित होता है कि उन्हीं सज्जनों में बंगाली तथा अबंगाली का भाव इस प्रकार भरा था, कि बङ्गालियोंकी बडी से बड़ी भूल, हठधर्मी तथा भीरुता की अवहेलना की गई। यह देखकर पुरुषों का साहस बढ़ता था, नित्य नई चालें चलीं जाती थीं। आपस में ही एक दूसरे के विरुद्ध षडयन्त्र रचे जाते थे। बंगालियों का न्याय अन्याय सब सहन कर लिया जाता था। इन सारी बातोंने मेरे हृदय को टूक, टूक कर डाला। सब कृत्योंको देख मैं मन ही मन घुटा करता।

एक बार विचार हुआ कि सरकार से समझौता कर लिया जावे। बैरिस्टर साहब ने खुफ़िया पुलिस के कप्तान से परामर्श आरम्भ किया। किन्तु यह सोच कर कि इससे क्रान्तिकारी दलकी निष्ठा न मिट जावे, यह विचार छोड़ दिया गया, युवक वृन्द की सम्मति हुई कि अनशन व्रत कर के सरकार से हवालाती की हालतमें ही मांगें पूरी करा ली जावें। क्योंकि लम्बी लम्बी सजायें होंगी। संयुक्त प्रान्त के जेळों में साधारण कैदियों का भोजन खाते हुए सजा काट कर जेल से जिन्दा निकलना कोई सरल कार्य नहीं। जितने राजनैतिक कैदी षड्यन्त्रों के सम्बन्ध में सजा पाकर इस प्रान्तके जेलोंमें रखे गये उनमें से पांच छ: महात्माओं ने इस प्रान्त के जेळोंके व्यवहार के कारण ही जेलोंमें प्राण त्याग किये।

इस विचार के अनुसार काकोरी के लगभग सब हवालातियों ने अनशन व्रत आरम्भ कर दिया। दूसरे ही दिन सब पृथक कर दिये गये। कुछ व्यक्ति डिस्ट्रिक्ट जेलमें रखे गये, कुछ सेंट्रल जेल भेजे गये। अनशन करते पन्द्रह दिवस व्यतीत हो गये, सरकार के कान पर जूं रेंगी। उधर सरकार का

काफी नुकसान हो रहा था। जज साहब तथा दूसरे कचहरीके कार्यकर्ताओं को घर बैठे का वेतन देना पड़ता था। सरकारको स्वयं चिन्ता थी कि किसी प्रकार अनशन छूटे। जेल अधिकारियों ने पहले आठ आने रोज तै किये। मैंने उस समझौते को अस्वीकार कर दिया और बड़ी कठिनतासे दस आने रोजपर ले आया। उस अनशन व्रत में पन्द्रह दिवस तक मैंने जल पी कर निर्वाह किया था। सोलहवें दिन नाकसे दूध पिलाया गया था। श्रीयुत रोशनसिंहजीने भी इसी प्रकार मेरा साथ दिया था। वे पन्द्रह दिन तक बराबर चलते फिरते रहे थे। स्नानादि करके अपने नैमित्तिक कर्म भी कर लिया करते थे। दस दिन तक तो मेरे मुंह को देखकर अनजान पुरुष यह अनुमान भी नहीं कर सकता था कि मैं अन्न नहीं खाता।

समझौते के जिन खुफिया पुलिस के अधिकारियों से मुख्य नेता महोदयका वार्तालाप बहुधा एकान्त में हुआ करता था, समझौते की बात खतम हो जानेपर भी आप उन लोगों से मिलते रहे। मैंने कुछ विशेष ध्यान न दिया। यदा कदा दो एक बात से पता चलता कि समझौते के अतिरिक्त कुछ दूसरी भी बातें होती हैं। मैंने इच्छा प्रकट की कि मैं भी एक समय सी० आई० डी० के कप्तान से मिलूं, क्योंकि मुझ से पुलिस बहुत असन्तुष्ट थी। मुझे पुलिस से न मिलने दिया गया। परिणाम स्वरूप सी० आई० डी० वाले मेरे पूरे दुश्मन हो गये। सब मेरे व्यवहार की ही शिकायत किया करते। पुलिस अधिकारियों से बात चीत करके मुख्य नेता महाशय को कुछ आशा बंध गई। आप का जेल से निकलनेका उत्साह जाता रहा। जेल से निकलने के उद्योग में जो उत्साह था, वह बहुत ढीला हो गया। नवयुवकों की श्रद्धाको मुझसे हटाने के लिये

अनेकों प्रकार की बातें की जाने लगीं। मुख्य नेता महोदय ने स्वयं कुछ कार्य कर्ताओं से मेरे सम्बन्ध में कहा कि ये कुछ रुपये खा गये। मैं ने एक एक पैसे का हिसाब रखा था। जैसे ही मैं ने इस प्रकार की बातें सुनी, मैं ने कार्य कारिणीके सदस्यों के सामने रख कर हिसाब देना चाहा, और अपने विरुद्ध आक्षेप करने वाले को दण्ड देने का प्रस्ताव उपस्थित किया। अब तो बंगालियों का साहस न हुआ कि मुझ से हिसाब समझें। मेरे आचरण पर भी आक्षेप किये गये।

जिस दिन सफाई की बहस में मैं ने समाप्त की, सरकारी वकील ने उठ कर मुक्त कण्ठ से मेरी बहस की प्रशंसा की कि सैकड़ों वकीलों से अच्छी बहस की। मैं ने नमस्ते कर उत्तर दिया कि आप के चरणों की कृपा है। क्योंकि इस मुकद्मे के पहले मैं ने किसी अदालत में समय न व्यतीत किया था, सर-कारी तथा सफाई के वकीलों की जिरह को सुन कर मैं ने भी साहस किया था। इस के बाद सब से पहले मुख्य नेता महा-शय के विषय में सरकारी वकील ने बहस करना शुरू की। खूब ही आड़े हाथों लिया। अब तो मुख्य नेता महाशय का बुरा हाल था। क्योंकि उन्हें आशा थी कि सम्भव है सबूत की कमी से वे छूट जावें या अधिक से अधिक पांच या दश वर्ष की सजा हो जावे। आख़िर चैन न पड़ा। सी० आई० डी० अफ़सरों को बुला कर जेल में उन से एकान्त में डेढ़ घण्टे तक बातें हुईं। युवक मण्डल को इस का पता चला। सब मिल कर मेरे पास आये। कहने लगे इस समय सी० आई० डी० अफसर से क्यों मुलाक़ात की जा रही है? मेरी जिज्ञासा पर उत्तर मिला कि सजा होने के बाद जेल में क्या व्यवहार होगा, इस सम्बन्ध में बात चीत कर रहे हैं। मुझे सन्तोष न हुआ।

दो या तीन दिन बाद मुख्य नेता महाशय एकान्त में बैठ कर कई घण्टा तक कुछ लिखते रहे । लिख कर कागज जेल में रख भोजन करने गये। मेरी अन्तरात्मा ने कहा 'उठ देख तो क्या हो रहा है?' मैं ने जेब से कागज निकाल कर पढ़े। पढ़ कर शोक तथा आश्चर्य की सीमा न रही। पुलिस द्वारा सरकार को क्षमा-प्रार्थना भेजी जारही थी। भविष्य के लिये किसी प्रकार के हिंसात्मक आन्दोलन या कार्य में भाग न लेने की प्रतिज्ञा की गई थी। (Undertaking) दी गई थी। मैं ने मुख्य कार्य कर्त्ताओं से सब विवरण कह कर इस सब का कारण पूछा कि क्या हम लोग इस योग्य भी नहीं रहे जो हम से किसी प्रकार का परामर्श किया जावे? तब तक उत्तर मिला कि व्यक्तिगत बात थी। मैं ने बड़े जोर के साथ विरोध किया कि कदापि व्यक्तिगत बात नहीं हो सकती। खूब फटकार बतलाई। मेरी बातों को सुन चारों ओर खलबली पड़ी मुझे बड़ा क्रोध आया कि कितनी धूर्तता से काम लिया गया। मुझे चारों ओर से चढ़ाकर लड़ने के लिये प्रस्तुत किया गया। मेरे विरुद्ध षड्यन्त्र रचे गये। मेरे ऊपर अनुचित आक्षेप किये। नवयुवकों के जीवनों का भार ले कर लीडरी की शान झाड़ी गई और थोड़ी सी आपत्ति पड़ने पर इस प्रकार बीस वर्ष के युवकों को बड़ी २ सजायें दिला, जेलमें सड़ने को डाल कर स्वयं बंधेज दे निकल जाने का प्रयत्न किया गया। धिक्कार है ऐसे जीवन को, किन्तु सोच समझ कर चुप रहा।

अभियोग।

काकोरी में रेलवे ट्रेन लुट जाने के बाद ही पुलिस का विशेष विभाग उक्त घटना का पता लगाने के लिये तैनात किया गया। एक विशेष व्यक्ति मि० हार्टन इस विभाग के निरीक्षक

थे। उन्हों ने घटनास्थल तथा रेलवे पुलिस की रिपोर्टों को देख कर अनुमान किया कि सम्भव है कि यह कार्य क्रान्तिकारियों का हो। प्रान्त के क्रान्तिकारियों की जाँच शुरू हुई। उसी समय शाहजहांपुर में रेलवे डकैती के तीन नोट मिळे। चोरी गये नोटों की संख्या सौ से अधिक थी जिनका मूल्य लगभग एक हजार रुपये के होगा। इन में से लगभग सात सौ या आठ सौ रुपये के मूल्य के नोट सीधे सरकार के ख़जाने में पहुंच गये। अतः सरकार नोटों के मामले को चुपचाप पी गई ये नोट लिस्ट प्रकाशित होने से पूर्व ही सरकारी ख़जाने में पहुंच चुके थे। पुलिस का लिस्ट प्रकाशित करना व्यर्थ हुआ। सरकारी ख़ज़ाने में से ही जनताके पास कुछ नोट लिस्ट प्रकाशित होने के पूर्व ही पहुंच गये थे, इस कारण वे जनता के पास निकल आये।

उन्हीं दिनों में ज़िला, खुफिया पुलिस को मालूम हुआ कि मैं ८, ६ तथा १० अगस्त सन १६२५ ई० को शाहजहांपुर में नहीं था। मेरी अधिक जांच होने लगी। इसी जांच पड़ताल में पुलिस को मालूम हुआ कि गवर्नमेंट स्कूल शाहजहांपुर के इन्दुभूषण मित्र नामी एक विद्यार्थी के पास मेरे क्रान्तिकारी दल सम्बन्धी पत्र आते हैं जो वह मुझे दे आता है। स्कूल के हेड मास्टर द्वारा इन्दुभूषण के पास आये हुये पत्रों की नकल करा के हार्टन साहब के पास भेजी जाती रही। इन्हीं पत्रों से हार्टन साहब को मालूम हुआ कि मेरठ में प्रान्त की क्रान्तिकारी समिति की बैठक होने वाली है। उन्हों ने एक सब–इन्स्पेक्टर को मेरठ अनाथालय में जहां पर मीटिंग होने का पता चला था, भेजा। उन्हीं दिनों हार्टन साहब को किसी विशेष सूत्र द्वारा मालूम हुआ कि शीघ्र ही कनखल में डाका डालने का प्रबन्ध क्रान्तिकारी समिति के सदस्य कर रहे हैं और सम्भव है कि किसी

बड़े शहर में डाकखाने की आमदनी भी लूटी जावे। हार्टन साहब को एक सूत्र से एक पत्र मिला जो मेरे हाथ का लिखा था। इस पत्र में सितम्बर में होने वाले श्राद्ध का जिक्र था जिस की १३ तारीख निश्चित की गई थी। पत्र में था कि दादा का श्राद्ध नं० १ पर १३ सितम्बर को होगा अवश्य पधारिये। मैं अनाथालय में मिलूंगा। पत्र पर 'रुद्र' के हस्ताक्षर थे।

आगामी डकैतियों को रोकने के लिये हार्टन साहब ने प्रान्त भर में २६ सितम्बर सन १६२५ ई० को लगभग तीस मनुष्यों को गिरफ्तार किया। उन्हीं दिनों में इन्दुभूषण के पास आये हुये पत्र से पता लगा कि कुछ वस्तुयें बनारस में किसी विद्यार्थी की कोठरी में बन्द हैं। अनुमान किया गया कि सम्भव है कि वे हथियार हों अनुसंधान करने से हिंदू विश्वविद्यालय के एक विद्यार्थी की कोठरी से दो रायफलें निकलीं। उस विद्यार्थी को कानपूरमें गिरफ्तार किया गया। इन्दुभूषण ने मेरी गिरफ्तारी की सूचना एक पत्र द्वारा बनारस को भेजी। जिसके पास पत्र भेजा था उसे पुलिस गिरफ्तार कर चुकी थी, क्योंकि उसी श्री० रामनाथ पांडेय के पते का पत्र मेरी गिरफ्तारी के समय मेरे मकान से पाया गया था। रामनाथ पांडेय के पत्र पुलिस के पास पहुंचे थे। अतः इन्दुभूषण का पत्र देख इन्दुभूषण को गिरफ्तार किया। इन्दुभूषण ने दूसरे दिन अपना बयान दे दिया। गिरफ्तार किये हुये व्यक्तियों में से कुछ से मिल मिला कर बनारसी लाल ने भी जो शाहजहांपुर के जेल में था, अपना बयान दे दिया और वह सरकारी गवाह बना लिया गया। यह कुछ अधिक जानता था। इस के बयान से क्रान्तिकारी पत्र के पार्सलों का पता चला। बनारस के डाकखाने से जिन जिन के पास पार्सल भेजे गये थे उन को पुलिस ने गिरफ्तार किया। कानपुर में गोपीनाथ

ने जिस के पास पारसल गया था गिरफ्तार होते ही पुलिस को बयान दे दिया और सरकारी गवाह बना लिया गया। इसी प्रकार रायबरेली में स्कूल के विद्यार्थी कुंवर बहादुरके पास पार्सल आया था, उसने भी गिरफ्तार होते ही बयान दे दिया और सरकारी गवाह बना लिया गया। इसके पास मनीआर्डर भी आया करते थे, क्योंकि यह बनवारीलाल का पोस्ट बक्स (डाक पाने वाला) था। इस ने बनवारीलाल के एक रिश्तेदार का पता बताया, जहां पर तलाशी लेनेसे बनवारी-लालका एक ट्रंक मिला। इस ट्रंक मे एक कारतूसी पिस्तौल, एक कारतूसी फौजी रिवालवर तथा कुछ कारतूस पुलिसके हाथ लगे। श्री बनवारीलाल की खोज हुई। बनवारीलाल भी पकड़ लिये गये। गिरफतारी के थोड़े दिनों बाद ही पुलिस वाले मिले, उल्टा सीधा सुझाया और बनवारीलाल ने भी अपना बयान दे दिया तथा वह इकबाली मुलजिम बनाये गये। श्रीयुत बनवारीलालने काकोरी डकैतीमें अपना सम्मिलित होना बताया था। उधर कलकत्ते में दक्षिणेश्वर में एक मकान में बम बनानेका सामान, एक बना हुआ बम, ७ रिवालवर, पिस्तौल तथा कुछ राजद्रोही साहित्य पकड़ा गया। इसी मकान में श्रीयुत राजेन्द्रनाथ लाहिरी बी० ए० जो इस मुकद्दमे में फरार थे, गिर-फ्तार हुए।

इन्द्रभूषण के गिरफ्तार हो जानेके बाद उसके हेडमास्टर को एक पत्र मध्यप्रान्त से मिला, जिसे उसने हार्टन साहब के पास वैसा ही भेज दिया। इस पत्रसे एक व्यक्ति 'मोहन-लाल खत्री,, का चन्दामें पता चला। वहांसे पुलिसने खोज लगा कर पूनामें श्रीयुत रामकृष्ण खत्रीको गिरफ्तार करके लखनऊ भेजा। बनारसमें भेजे हुये पार्सलों के सम्बन्धमें से

जबलपुर में श्रीयुत प्रणवेशकुमार चटर्जी को गिरफ़्तार कर के लखनऊ भेजा गया। कलकत्ता से श्रीयुत शचीन्द्रनाथ सान्याल जिन्हें बनारस षड्यन्त्र में आ जन्म कालेपानी की सजा हुई थी और जिन्हें बांकुरा में 'क्रान्तिकारी' पर्चे बांटनेके कारण दो वर्ष की सजा हुई थी, इस मुकद्दमे मे लखनऊ भेजे गये। श्रीयुत योगेश्चन्द्र चटर्जी बंगाल आर्डीनेन्स के कैदी हजारी बाग जेलसे भेजे गये। आप अक्तूबर सन् १९२४ ई० में कलकत्ता में गिरफ्तार हुये थे। आप के पास दो कागज पाये गये थे, जिन में संयुक्त प्रान्त के सब जिलों का नाम था, और लिखा था कि बाईस ज़िलों में समिति का कार्य हो रहा है। ये कागज इस षड्यन्त्र के सम्बन्ध के समझे गये। श्रीयुत राजेन्द्रनाथ लाहिरी दक्षिणेश्वर बम् केसमें दस वर्ष के द्वीपान्तर की सजा पाने के बाद, इस मुकद्दमे में लखनऊ भेजे गये। अब लगभग छत्तीस मनुष्य गिरफ्तार हुए थे। अट्ठाइस पर मजिस्ट्रेट की अदालत में मुकद्दमा चला। तीन व्यक्ति १ श्रीयुत शचीन्द्रनाथ बख़्शी २—श्रीयुत चन्द्रशेखर आज़ाद ३ श्रीयुत अशफाक उल्ला खां फरार रहे, बाकी मुकद्दमेंके अदालत में आनेसे पहले ही छोड़ दिये गये। अट्ठाइस में से दो पर से मजिस्ट्रेट की अदालत में मुकद्दमा उठा लिया गया। दो सरकारी गवाह बनाकर उन्हें माफी दी गई। अन्तमें मजिस्ट्रेट ने इक्कीस व्यक्तियों को सेशन सुपुर्द किया। सेशन में मुकद्दमा आने पर श्रीयुत सेठ दामोदर-स्वरूप बहुत बीमार हो गये। अदालत न आ सकते थे। अतः अन्त में बीस व्यक्ति रह गये। बीस में से दो व्यक्ति श्रीयुत शचीन्द्रनाथ विश्वास तथा श्रीयुत हरगोविन्द सेशनकी अदालतसे मुक्त हुए। बाक़ी अट्ठारह को सजाएं हुईं।

श्री० बनवारीलाल इक़बाली मुलज़िम हो गये। वे राय-बरेली जिला कांग्रेस कमेटीके मन्त्री भी रह चुके हैं। उन्होंने

असहयोग आन्दोलन में छः मास का कारावास भी भोगा था। इस पर भी पुलिस की धमकी से प्राण संकट में पड़ गये। आप ही हमारी समिति के ऐसे सदस्य थे कि जिनपर सबसे अधिक समिति का धन—व्यय किया गया। प्रत्येक मास आपको पर्याप्त धन भेजा जाता था। मर्यादा की रक्षा के लिये हम लोग यथा शक्ति बनवारीलाल को मासिक शुल्क दिया करते थे। अपने पेट काट कर इनको मासिक व्यय दिया गया। फिर भी इन्होंने अपने सहायकों की गर्दन पर छुरी चलाई। अधिक से अधिक दश वर्ष की सजा हो जाती। जिस प्रकार का सबूत इनके विरुद्ध था, वैसा ही, इसी प्रकारके दूसरे अभियुक्तों पर था, जिन्हें दस दस वर्ष की सजा हुई। यही नहीं पुलिस के बहकानेसे सेशन में बयान देते समय जो नई बातें इन्होंने जोड़ीं, उन में मेरे सम्बन्ध में कहा कि मालूम हुआ कि रामप्रसाद डकैतियों के रुपये से अपने परिवार का निर्वाह करता है। इस बात को सुन कर मुझे हँसी भी आई, पर हृदय पर बड़ा आघात लगा, कि जिनकी उदर-पूर्ति के लिये प्राणों को संकट में डाला, दिन को दिन और रात को रात न समझा, बुरी तरह से मार खाई, माता पिता का कुछ भी ख़्याल न किया, वही इस प्रकार आक्षेप करें।

तलवार ख़ूं में रंग लो, अरमान रह न जाये।
"बिस्मिल" के सर पै कोई अहसान रह न जाये॥

समितिके सदस्योंने इस प्रकार का व्यवहार किया। बाहर जो साधारण जीवन के सहयोगी थे, उन्होंने भी अद्भुत रूप धारण किया। एक ठाकुर साहब के पास काकोरी डकैतीका नोट मिल गया था। वह कहीं से शहर में पा गये थे। जब गिरफ़्तारी हुई, मजिस्ट्रेट के यहां से जमानत नामंजूर हुई, जज साहबने चार हजार की जमानत मांगी। कोई जमानती न मिलता था। आपके वृद्ध भाई मेरे पास आये। पैरों पर शिर रख कर

रोने लगे। मैं ने जमानत करानेका प्रयत्न किया। मेरे माता-पिता कचहरी जा कर खुले रूप से पैरवी करने को मना करते रहे कि पुलिस ख़िलाफ है, रिपोर्ट हो जावेगी, पर मैं ने एक न सुनी। कचहरी जा कर, कोशिश करके जमानत दाख़िल कराई। जेल मे उन्हें स्वयं जा कर छुडवा लाया। पर जब मैंने उक्त महाशय का नाम उक्त घटना की गवाही देनेके लिए सूचित किया, तब पुलिसने उन्हें धमकाया और उन्होंने पुलिसको तीन बार लिख कर दिया कि रामप्रसाद को जानते भी नहीं। हिन्दू मुसलिम झगड़े में जिनके घरों की रक्षा की थी, जिनके बाल बच्चे मेरे सहारे मुहल्ले में निर्भयता से निवास करते रहे, उन्होंने ही मेरे खिलाफ़ झूठी गवाहियां बनवाकर भेजीं। कुछ मित्रों के भरोसे पर उन का नाम गवाही में दिया कि जरूर गवाही देंगे, संसार लौट जावे पर वे नहीं डिग सकते। पर बचन दे चुकने पर भी जब पुलिसका दबाव पड़ा, वे भी गवाही देनेसे इनकार कर गये। जिनको अपना हृदय, सहोदर तथा मित्र समझ कर हर तरह की सेवा करने को तैयार रहता था, जिस प्रकार का आवश्यकता होती यथा शक्ति उसको पूर्ण करनेकी प्राणपण से चेष्टा करता था, उनसे इतना भी न हुआ कि कभी जेल पर आकर दर्शन दे जाते; फ़ांसी की कोठरी में ही आकर सन्तोष-दायक दो बातें कर जाते। एक दो सज्जनों ने इतनी कृपा तथा साहस किया कि दस मिनट के लिये अदालत में दूर खड़े हो कर दर्शन दे गये। यह सब इसलिये कि पुलिसका आतंक छाया हुआ था कि कहीं गिरफतार न कर लिये जावें। इस पर भी जिसने जो कुछ किया मैं उसीको अपना सौभाग्य समझता हूं, और उनका आभारी हूं—

> यह फूल चढ़ाते हैं तुर्बत भी दबी जाती है।
> माशूक़ के थोड़े से भी एहसान बहुत हैं॥

परमात्मा से यही प्रार्थना है कि सब प्रसन्न तथा सुखी रहें। मैंने तो सब बातों को जानकर ही इस मार्ग में पैर रखा था। मुकद्दमे के पहले संसार का कोई अनुभव हो न था। न कभी जेल देखा, न किसी अदालत का कोई तजुरबा था। जेल में जाकर मालूम हुआ कि किसी नई दुनिया में पहुंच गया। मुकद्दमे के पहले मैं यह भी न जानता था, कि कोई लेखन—कला—विज्ञान भी है, इसका भी कोई दक्ष (Hand-writing expert) भी होता है, जो लेखन शैली को देखकर लेखकों का निर्णय कर सकता है। यह भी नहीं पता था कि लेख किस प्रकार मिलाये जाते हैं, एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य के लेख में क्या भेद होता है, क्यों भेद होता है, लेखन कला का दक्ष हस्ताक्षर को प्रमाणित कर सकता है, तथा लेखक के वास्तविक लेख में तथा बनावटी लेख में भेद कर सकता है। इस प्रकारका कोई भी अनुभव तथा ज्ञान न रखते हुए भी एक प्रान्त की क्रान्तिकारी समिति का सम्पूर्ण भार लेकर उसका संचालन कर रहा था। बात यह है कि क्रान्तिकारी कार्य की शिक्षा देने के लिये कोई पाठशाला तो है ही नहीं। यही हो सकता था कि पुराने अनुभवी क्रान्तिकारियों से कुछ सीखा जावे। न जाने कितने व्यक्ति बङ्गाल तथा पंजाब में षड्यन्त्रों में गिरफ़्तार हुए, पर किसी ने भी यह उद्योग न किया कि एक इस प्रकार की पुस्तक लिखी जावे जिससे नवागन्तुकों को कुछ अनुभव की बातें मालूम होतीं।

लोगों को इस बात की बड़ी उत्कण्ठा होगी कि क्या यह पुलिस का भाग्य ही था, जो सब बना बनाया मामला हाथ आ गया! क्या पुलिस वाले परोक्ष ज्ञानी होते हैं? कैसे गुप्त बातों का पता चला लेते हैं? कहना पड़ता है कि यह इस देश का दुर्भाग्य! सरकार का सौभाग्य!! बंगाल पुलिस के सम्बन्ध

में तो अधिक कहा नहीं जा सकता, क्योंकि मेरा कुछ विशेषानुभव नहीं। इस प्रान्त की खुफिया पुलिस वाले तो महान मांदू होते हैं। जिन्हें साधारण ज्ञान भी नहीं होता। साधारण पुलिस से खुफिया में आते हैं साधारण पुलिस की दारोगाई करते हैं, मजे में लम्बी लम्बी घूस खा कर बड़े बड़े पेट बढ़ा आराम करते हैं। उनकी बला तकलीफ उठावे। यदि कोई एक दो चालाक हुए भी तो थोड़े दिन बड़े ओहदे की फ़िराक में काम दिखाया, दौड़ धूप की, कुछ पद वृद्धि होगई और सब काम बन्द। इस प्रान्त में कोई बाकायदा पुलिस का गुप्तचर विभाग नहीं, जिस को नियमित रूप से शिक्षा दी जाती हो। फिर काम करते करते अनुभव हो ही जाता है। मैनपुरी षडयन्त्र तथा इस षडयन्त्र में इसका पूरा पता लग गया, कि थोड़ी सी कुशलता से कार्य करने पर पुलिस के लिये पता पाना बड़ा कठिन है। वास्तव में उनके कुछ भाग्य ही अच्छे होते हैं। जब से इस मुकद्दमे की जांच शुरू हुई; पुलिस ने इस प्रान्त के सन्दिग्ध क्रान्तिकारी व्यक्तियों पर दृष्टि डाली, उनसे मिली, बातचीत की। एक दो को कुछ धमकी दी। 'चोर की दाढ़ी में तिनका' वाली जन-श्रुति के अनुसार एक महाशय से पुलिस को सारा भेद मालूम हो गया। हम सब के सब बड़े चक्कर में थे, कि इतनी जल्दी पुलिसने मामले का पता कैसे लगा लिया। उक्त महाशय की ओर तो ध्यान भी न जा सकता था। पर गिरफ्तारी के समय मुझ से तथा पुलिस के अफसर से जो बातें हुईं, उनमें पुलिस अफसर ने वे सब बातें मुझ से कहीं जिन को मेरे तथा उक्त महाशय के अतिरिक्त कोई भी दूसरा जान ही न सकता था। और भी बड़े पक्के तथा बुद्धि गम्य प्रमाण मिल गये, कि जिन बातों को उक्त महाशय जान सके थे, वे ही पुलिस जान सकी। जो बातें आप को मालूम न थीं, वे पुलिस को किसी प्रकार न मालूम हो सकीं।

उन बातों से यह निश्य हो गया कि यह काम उन्हीं महाशय का है। यदि ये महाशय पुलिस के हाथ न आते और भेद न खोल देते, तो पुलिस शिर पटक कर रह जाती, कुछ भी पता न चलता। बिना दृढ़ प्रमाणों के भयङ्कर से भयङ्कर व्यक्ति पर भी हाथ रखने का साहस नहीं होता, क्योंकि जनता में आन्दोलन फैलने से बदनामी हो जाती है। सरकार पर जवाब देही आती है। अधिक से अधिक दो चार मनुष्य पकड़े जाते, और अन्त में उन्हें भी छोड़ना पड़ता। परन्तु जब पुलिस को वास्तविक सूत्र हाथ आगया, उसने अपनी सत्यता को प्रमाणित करने के लिये लिखा हुआ प्रमाण पुलिस को दिया, उस अवस्था में भी यदि पुलिस गिरफ़्तारियां न करती, तो फिर कब करती? जो भी हुआ, परमात्मा उन का भी भला करे। अपना तो जीवन भर यही उसूल रहा—

सताये तुझ को जो कोई बे वफ़ा 'बिस्मिल'।
तो मुंह से कुछ न कहना आह! कर लेना॥
हम शहीदाने वफ़ा का दीनो ईमां और है।
सिजदा करते हैं हमेशा पांव पर जल्लाद के॥

मैं ने इस अभियोग में जो भाग लिया अथवा जिन को ज़िन्दगी की ज़िम्मेदारी मेरे शिर पर थी, उन में से सब से ज़्यादा हिस्सा श्रीयुत अशफ़ाक़उल्ला खां वारसी का है। मैं अपनी क़लम से उन के लिये भी अन्तिम समय में दो शब्द लिख देना अपना कर्तव्य समझता हूं।

अशफ़ाक़

मुझे भली भांति याद है, जब कि मैं बादशाही एलान के बाद शाहजहांपुर आया था, तो तुम से स्कूल में भेंट हुई थी

तुम्हारी मुझ से मिलने की बड़ी हार्दिक इच्छा थी। तुम ने मुझ से मैनपुरी षड्यंत्र के सम्बन्ध में कुछ बात चीत करनी चाही थी। मैं ने यह समझ कर कि एक स्कूल का मुसलमान विद्यार्थी मुझ से इस प्रकार की बातचीत क्यों करता है, तुम्हारी बातों का उत्तर उपेक्षा की दृष्टि से दिया था। तुम्हें उस समय बड़ा खेद हुआ था। तुम्हारे मुख से हार्दिक भावों का प्रकाश हो रहा था। तुम ने अपने इरादे को यों ही नहीं छोड़ दिया, अपने इरादे पर डटे रहे। जिस प्रकार हो सका कांग्रेस में बातचीत की। अपने इष्ट मित्रों द्वारा इस बात का विश्वास दिलाने की कोशिश की कि तुम बनावटी आदमी नहीं, तुम्हारे दिल में मुल्क की ख़िदमत करने की ख्वाहिश थी। अन्त में तुम्हारी विजय हुई। तुम्हारी कोशिशों ने मेरे दिल मे जगह पैदा कर ली। तुम्हारे बड़े भाई मेरे उर्दू मिडिल के सहपाठी तथा मित्र थे। यह जान कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। थोड़े दिनों में ही तुम मेरे छोटे भाई के समान हो गये थे, किन्तु छोटे भाई बन कर तुम्हें संतोष न हुआ। तुम समानता के अधिकार चाहते थे, तुम मित्र की श्रेणी में अपनी गणना चाहते थे। वही हुआ! तुम मेरे सच्चे मित्र थे। सब को आश्चर्य था कि एक कट्टर आर्य समाजी और मुसलमान का मेल कैसा! मैं मुसलमानों की शुद्धि करता था। आर्यसमाज मन्दिर में मेरा निवास था, किन्तु तुम इन बातों की किंचितमात्र चिन्ता न करते थे। मेरे कुछ साथी तुम्हें मुसलमान होने के कारण कुछ घृणा की दृष्टि से देखते थे, किन्तु तुम अपने निश्चय में दृढ़ थे। मेरे पास आर्यसमाज मन्दिर में आते-जाते थे। हिंदू मुसलिम झगड़ा होने पर तुम्हारे मुहल्ले के सब कोई तुम्हें खुल्लम खुल्ला गालियां देते थे, काफ़िर के नाम से पुकारते थे, पर तुम कभी भी उन के विचारों से सहमत न हुये। सदैव हिन्दू मुसलिम

ऐक्य के पक्षपाती रहे। तुम एक सच्चे मुसलमान तथा सच्चे स्वदेश भक्त थे। तुम्हें यदि जीवन में कोई विचार था, तो यही था कि मुसलमानों को खुदा अक़ल देता, कि वे हिन्दुओं के साथ मेल कर के हिन्दोस्तान की भलाई करते। जब मैं हिन्दी में कोई लेख या पुस्तक लिखता तो तुम सदैव यही अनुरोध करते कि उर्दू में क्यों नहीं लिखते; जो मुसलमान भी पढ़ सकें ? तुमने स्वदेश भक्ति के भावोंको भी भली भांति समझाने के लिये ही हिन्दी का अच्छा अध्ययन किया। अपने घर पर जब माता जी तथा भ्राता जी से बातचीत करते थे, तो तुम्हारे मुंह से हिन्दी शब्द निकल जाते थे, जिससे सबको बड़ा आश्चर्य होता था।

तुम्हारी इस प्रकार की प्रवृति देख कर बहुतों को संदेह होता था, कि कहीं इस्लाम- धर्म्म त्याग कर शुद्धि न करा लो। पर तुम्हारा हृदय तो किसी प्रकार अशुद्ध न था, फिर तुम शुद्धि किस वस्तु की कराते ? तुम्हारी इस प्रकार की प्रगति ने मेरे हृदय पर पूर्ण विजय पा ली। बहुधा मित्र मण्डली में बात छिडती कि कहीं मुसलमान पर विश्वास करके धोखा न खाना। तुम्हारी जीत हुई, मुझ में तुम में कोई भेद न था। बहुधा मैंने तुमने एक थाली में भोजन किये। मेरे हृदय से यह विचार ही जाता रहा कि हिन्दू मुसलमान में कोई भेद है। तुम मुझ पर अटल विश्वास तथा अगाध प्रीति रखते थे, हां ! तुम मेरा नाम लेकर नहीं पुकार सकते थे। तुम तो मुझे सदैव 'राम' कहा करते थे। एक समय जब तुम्हें हृदय—कम्प (Pulpitation of heart) का दौरा हुआ, तुम अचेत थे; तुम्हारे मुंह से बारम्बार 'राम' 'हाय राम' ! शब्द निकल रहे थे। पास खड़े हुए भाई बान्धवों को आश्चर्य था कि 'राम' 'राम' कहता है। कहते थे कि 'अल्लाह' 'अल्लाह' कहो, पर तुम्हारी 'राम—राम' की रट थी। उसी समय किसी मित्र का आगमन हुआ, जो 'राम' के भेद को

जानते थे। तुरन्त मैं बुलाया गया। मुझ से मिलने पर तुम्हें शान्ति हुई, तब सब लोग 'राम! राम!' के भेदको समझे।

अन्त में इस प्रेम, प्रीति तथा मित्रता का परिणाम क्या हुआ? मेरे विचारों के रङ्ग में तुम भी रङ्ग गये। तुम भी एक कट्टर क्रान्तिकारी बन गये। अब तो तुम्हारा दिन रात प्रयत्न यही था, कि जिस प्रकार हो सके मुसलमान नवयुवकों में भी क्रान्तिकारी भावोंका प्रवेश हो। वे भी क्रान्तिकारी आन्दोलन में योग दें। जितने तुम्हारे बन्धु तथा मित्र थे, सब पर तुम ने अपने विचारों का प्रभाव डालने का प्रयत्न किया। बहुधा क्रान्तिकारी सदस्यों को भी बड़ा आश्चर्य होता कि मैंने कैसे एक मुसलमान को क्रान्तिकारी दल का प्रतिष्ठित सदस्य बना लिया। मेरे साथ तुमने जो कार्य किये, वे सराहनीय हैं! तुम ने कभी भी मेरी आज्ञा की अवहेलना न की। एक आज्ञाकारी भक्तके समान मेरी आज्ञा पालन में तत्पर रहते थे। तुम्हारा हृदय बड़ा विशाल था। तुम्हारे भाव बड़े उच्च थे।

मुझे यदि शान्ति है तो यही कि तुमने संसार में मेरा मुंह उज्वल कर दिया। भारत के इतिहास में यह घटना भी उल्लेखनीय हो गई, कि अशफ़ाक़उल्ला ने क्रान्तिकारी आन्दोलन में योग दिया। अपने भाई बन्धु तथा सम्बन्धियों के समझाने पर कुछ भी ध्यान न दिया। गिरफ्तार हो जाने पर भी अपने विचारों में दृढ़ रहा! जैसे तुम शारीरिक बलशाली थे, वैसे ही मानसिक वीर तथा आत्मा से उच्च सिद्ध हुए। इन सबके परिणाम स्वरूप अदालत में तुमको मेरा सहकारी (लेफ्टीनेन्ट) ठहराया गया, और जज ने हमारे मुक़द्दमे का फैसला लिखते समय तुम्हारे गले में भी जयमाल [फाँसी की रस्सी] पहना दी।

प्यारे भाई, तुम्हें यह समझकर सन्तोष होगा कि जिसने अपने माता-पिता की धन-सम्पति को देश-सेवा मे अर्पण करके उन्हें भिखारी बना दिया, जिसने अपने सहोदर के भावी भाग्य को भी देश सेवा की भेंट कर दिया, जिसने अपना तन मन धन सर्वस्व मातृ सेवा में अर्पण करके अपना अन्तिम बलिदान भी दे दिया, उसने अपने प्रिय सखा अशफ़ाक़ को भी उसी मातृभूमि की भेंट चढ़ा दिया।

'असग़र' हरीम इश्क़ में हस्ती ही जुर्म है।
रखना कभी न पांव यहां सर लिये हुये॥

सहायक काकोरी षडयन्त्र का भी फैसला जज साहब की अदालत से हो गया। श्री अशफ़ाक़ उल्ला खां वारसी को तीन फांसी और दो काले पानी की आज्ञायें हुईं। श्रीयुत शचीन्द्रनाथ बख्शी को पांच काले पानी की आज्ञायें हुईं।

फांसी की कोठरी

अन्तिम समय निकट है। दो फांसी की सज़ायें शिर पर झूल रही हैं। पुलिस को साधारण जीवन में और समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं में खूब जी भर के कोसा है। खुली अदालत में जज साहब, खुफ़िया पुलिस के अफ़सर, मजिस्ट्रेट, सरकारी वकील तथा सरकार को खूब आड़े हाथों लिया है। हर एक के दिल में मेरी बातें चुभ रही हैं। कोई दोस्त आशना, अथवा यार मददगार नहीं, जिसका सहारा हो। एक परमपिता परमात्मा की याद है। गीताका पाठ करते हुए सन्तोष है कि

जो कुछ किया सो तैं किया, मैं कुछ कीन्हा नाहिं।
जहाँ कहीं कुछ मैं किया, तुम ही थे मुझ मांहि॥

ब्रह्मण्या धाय कर्माणि संगं त्यक्त्वा करोति यः ।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्र मिवाम्भसा ॥
भगवद्गीता । ५ । १०

"जो फल की इच्छा को त्यागकर के कर्मों को ब्रह्म में अर्पण करके कर्म करता है, वह पाप से लिप्त नहीं होता। जिस प्रकार जल में रहकर भी कमल पत्र जल में लिप्त नहीं होता।" जीवन पर्यन्त जो कुछ किया, स्वदेश की भलाई समझ कर किया। यदि शरीर की पालना की तो इसी विचार से, कि सुदृढ़ शरीर से भले प्रकार स्वदेश सेवा हो सके। बड़े प्रयत्नों से यह शुभ दिन प्राप्त हुआ। संयुक्त प्रान्त में इस तुच्छ शरीर का ही सौभाग्य होगा, जो सन् १८५७ के ग़दर की घटनाओं के पश्चात क्रान्तिकारी आन्दोलन के सम्बन्ध में इस प्रान्त के निवासी का पहला बलिदान मातृ वेदी पर होगा।

सरकार की इच्छा है कि मुझे घोट घोट कर मारे। इसी कारण से इस गरमी की ऋतु में साढ़े तीन महीने बाद अपील की तारीख़ नियत की गई। साढ़े तीन महीने तक फांसी की कोठरी में भूंजा गया। यह कोठरी पक्षी के पिंजरे से भी ख़राब है। गोरखपुर जेल की फांसी की कोठरी मैदान में बनी है। किसी प्रकार की छाया निकट नहीं। प्रातःकाल आठ बजे से रात्रि के आठ बजे तक सूर्य देवता की कृपा से तथा चारों ओर रेतीली ज़मीन होने से अग्नि वर्षा होता है। नौ फ़ीट लम्बी तथा नौ फ़ीट चौड़ी कोठरी में केवल एक छः फ़ीट लम्बा और दो फ़ीट चौड़ा द्वार है। पीछे की ओर ज़मीन से आठ या नौ फ़ीट की ऊंचाई पर, एक २ फ़ीट लम्बी १ फ़ीट चौड़ी खिड़की है। इसी कोठरी में भोजन, स्नान, मल मूत्र त्याग तथा शयनादि होता

है! मच्छड़ अपनी मधुरध्वनि रात भर सुनाया करते हैं! बड़े प्रयत्न से रात्रि में तीन या चार घंटे निद्रा आती है, किसी किसी दिन एक दो घण्टे ही सो कर निर्वाह करना पड़ता है। मिट्टी के पात्रों में भोजन दिया जाता है। ओढ़ने बिछाने को दो कम्बल मिले हैं। बड़े त्याग का जीवन है। साधना के सब साधन एकत्रित है। प्रत्येक क्षण शिक्षा दे रहा है—अन्तिम समय के लिये तैयार हो जाओ, परमात्मा का भजन करो!

मुझे तो इस कोठरी में बड़ा आनन्द आ रहा है। मेरी इच्छा थी कि किसी साधु की गुफा पर कुछ दिन निवास कर के योगाभ्यास किया जाता। अन्तिम समय वह इच्छा भी पूर्ण हो गई। साधु की गुफा न मिली तो क्या साधना की गुफा तो मिल गई, इसी कोठरी में यह सुयोग प्राप्त हो गया, कि अपनी कुछ अन्तिम बात लिख कर देश वासियों के अर्पण कर दूं। सम्भव है कि मेरे जीवन के अध्ययन से किसी आत्मा का भला हो जावे। बड़ी कठिनता से यह शुभ अवसर प्राप्त हुआ।

महसूस हो रहे हैं बादे फ़ना के झोंके।
खुलने लगे हैं मुझ पर इसरार ज़िन्दगी के॥
बारे अलम उठाया रंगे निशात देखा।
आये नहीं हैं यूं ही अन्दाज बे हिसी के॥

वफ़ा पर दिल को सद् के जान को नज़रे ज़फा करदे।
मुहब्बत में यह लाज़िम है कि जो कुछ हो फ़िदा कर दे॥

अब तो यही अच्छा है—

बहे बहरे फ़ना में जल्द यारब लाश 'बिस्मिल' की।
कि भूखी मछलियां हैं जौहरे शमशीर क़ातिल की॥

किन्तु

समझ कर फूंकना इस को ज़रा ऐ दाग़े नाकामी।
बहुत से घर भी हैं आबाद इस उजड़े हुये दिल से॥

परिणाम।

ग्यारह वर्ष पर्यन्त यथा शक्ति प्राण पण से चेष्टा करने पर भी हम अपने उद्देश्य में कहां तक सफल हुये? क्या लाभ हुआ? इस का विचार करने से कुछ अधिक प्रयोजन सिद्ध न होगा, क्योंकि हम ने लाभ हानि अथवा जय पराजय के विचार से क्रान्तिकारी दल मे योग नहीं दिया था। हम ने जो कुछ किया वह अपना कर्तव्य समझ कर किया। कर्तव्य निर्णय में हमने कहां तक बुद्धिमत्ता से काम लिया, इस का विवेचन करना उचित जान पड़ता है। राजनैतिक दृष्टि से हमारे कार्यों का इतना ही मूल्य है कि कतिपय होनहार नवयुवकों के जीवनों को कष्टमय बना कर नीरस कर दिया और उन्हीं में से कुछ ने व्यर्थ में जानें गँवाईं। कुछ धन भी खर्च किया। हिन्दू शास्त्र के अनुसार किसी की अकाल मृत्यु नहीं होती, जिस का जिस विधि से जो काल होता है, वह उसी विधि समय पर ही प्राण त्याग करता है। केवल निमित्त मात्र कारण उपस्थित हो जाते हैं। लाखों भारतवासी महामारी, हैज़ा, ताऊन इत्यादि अनेक प्रकार के रोगों में मर जाते हैं। करोड़ों दुर्भिक्ष में अन्न बिना प्राण त्यागते हैं तो उस का उत्तरदायित्व किस पर है? रह गया धन का व्यय, सो इतना धन तो भले आदमियों के विवाहोत्सवों में व्यय हो जाता है। भाग्यमान व्यक्तियों की तो केवल विलासिता की सामग्री का मासिक व्यय इतना होगा, जितना कि हम ने एक षड्यन्त्र के निर्माण में व्यय किया। हम लोगों को डाकू बता कर फांसी और काले पानी की सजायें दी गयी हैं। किन्तु हम समझते हैं कि

वकील और डाक्टर हम से कहीं बड़े डाकू हैं। वकील डाक्टर दिन दहाड़े बड़े बड़े तालुकेदारों की जायदादें लूट कर खा गये। वकीलों के चाटे हुये अवध के ताल्लुकेदारों को ढूंढ़े रास्ता भी नहीं दिखाई देता, और वकीलों की ऊंची अट्टालिकायें उन पर खिलखिला कर हंस रहीं हैं। इसी प्रकार लखनऊ में डाक्टरों के भी ऊँचे ऊँचे महल बन गये। किन्तु इस राज्य मे दिन के डाकुओं की प्रतिष्ठा हैं! अन्यथा रात के साधारण डाकुओं में और दिन के इन डाकुओं (वकीलों तथा डाक्टरों) में कोई भेद नहीं है। दोनों अपने अपने मतलब के लिये बुद्धि की कुशलता से प्रजा का धन लूटते हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से हम लोगों के कार्य का बहुत बड़ा मूल्य है। जिस प्रकार भी हो, यह तो मानना ही पड़ेगा कि इस गिरी हुई अवस्था में भी, भारतवासी युवकों के हृदय में स्वाधीन होने के भाव विराजमान हैं। वे यथा शक्ति स्वतंत्र होने की चेष्टा भी करते हैं। यदि परिस्थितियां अनुकूल होतीं तो यही इने गिने नवयुवक अपनी चेष्टाओं से संसार को चकित कर देते। उस समय भारतवासियों को भी फ़रासीसियों की भांति कहने का सौभाग्य प्राप्त होता, जो कि उस जाति के नवयुवकों ने फ्रांसीसी प्रजातंत्र की स्थापना करते हुए कहा था The monument so raised, may serve as a lesson to the oppressors and an instance to the oppressed. 'स्वाधीनता का जो स्मारक निर्माण किया गया है वह अत्याचारियों के लिये शिक्षा का कार्य करे और अत्याचार पीड़ितों के लिये उदाहरण बने ?"

ग़ाज़ी मुस्तफा कमालपाशा जिस समय तुर्की से भागे थे, उस समय केवल इक्कीस युवक आपके साथ थे कोई साज़ो-

सामान न था, मौत का वारंट पीछे पीछे घूम रहा था। पर स
ने ऐसा पलटा खाया कि उसी कमाल ने अपने कमाल से सं
को आश्चर्यान्वित कर दिया। वही क़ातिल कमालपाशा टर्की
भाग्य निर्माता बन गया। महात्मा लेनिन को एक दिन शराब
पीपों में छिप कर भागना पड़ा था, नहीं तो मृत्यु में कुछ दे
थी। वही महात्मा लेनिन रूसके भाग्य-विधाता बने। श्रीशिव
डाकू थे। लुटेरे समझे जाते थे। पर समय आया जब कि
जाति ने उन्हें अपना शिरमौर बना, गो ब्राह्मण-रक्षक छत्र
शिवाजी बना दिया। भारत सरकार को भी अपने स्वार्थ के
छत्रपति के स्मारक निर्माण कराने पड़े। श्री क्लाइव एक उद्द
विद्यार्थी था। जो अपने जीवन से निराश हो चुका था। स
के फेर ने उसी उद्दण्ड विद्यार्थी को अङ्गरेज़ जाति का राज्य स
पनकर्त्ता लार्ड क्लाइव बना दिया। श्री० सनयात सैन चीन
अराजकवादी पलातक (भागे हुए) थे। समय ने ही उसी पला
को चीनी प्रजातन्त्र का सभापति बना दिया। सफलता ही मनु
के भाग्य का निर्माण करती है। असफल होने पर उसी को ब
डाकू, अराजक, राजद्रोही तथा हत्यारे के नामों से विभू
किया जाता है। सफलता उन्हीं सब नामों को बदल कर दया
प्रजा पालक, न्यायकारी, प्रजातन्त्रवादी तथा महात्मा बना देती

भारतवर्ष के इतिहास में हमारे प्रयत्नों का उल्लेख कर
ही पड़ेगा। किन्तु इसमें भी कोई सन्देह नहीं है कि भारतवर्ष
राजनैतिक, धार्मिक तथा सामाजिक किसी प्रकार की परिस्थि
इस समय क्रान्तिकारी आन्दोलन के पक्ष में नहीं है। इ
का कारण यही है कि भारतवासियों में शिक्षा का अभ
है। वे साधारण सामाजिक उन्नति करने से भी असम
हैं। फिर राजनैतिक क्रान्ति की बात कौन कहे? राजनैति

श्रीयुत भाई रामप्रसाद "बिस्मिल" का शव चित्र

बिस्मिल को दिले आरज़ू "बिस्मिल" में रह गई ।
तलवार खिच के पंजए क़ातिल में रह गई ॥

क्रान्ति के लिये सर्व प्रथम क्रान्तिकारियों का संगठन ऐसा होना चाहिये कि अनेक विघ्न तथा बाधाओं के उपस्थित होने पर भी संघठन में किसी प्रकार की त्रुटि न आवे। सब कार्य यथावत् चलते रहें। कार्यकर्ता इतने योग्य तथा पर्याप्त संख्या में होने चाहिये कि एक की अनुपस्थिति में दूसरा स्थान-पूर्ती के लिये सदा उद्यत रहे। भारतवर्ष में कई बार कितने षड़यन्त्रों का संगठन हुआ। किन्तु थोड़ासा भेद खुलते ही, पूर्ण षड्यन्त्र का भण्डा फूट गया और सब किया कराया नाश को प्राप्त हो गया। जब क्रान्तकारी दळों की यह अवस्था है तो फिर क्रान्ति के लिये उद्योग कौन करे? देश वासी इतने शिक्षित हों कि वे वर्तमान सरकार की नीति को समझ कर अपने हानि-लाभ को जानने में समर्थ हो सकें। वे यह भा पूर्णतया समझते हों कि वर्तमान सरकार को हटाना आवश्यक है या नहीं। साथ ही साथ उन में इतनी बुद्धि भी होनी चाहिये कि किस रीति से सरकार को हटाया जा सकता है। क्रान्तिकारी दल क्या है? वह क्या करना चाहता है? क्यों करना चाहता है? इन सारी बातों को जनता की अधिक संख्या समझ सके, क्रान्तिकारियों के साथ जनता की पूर्ण सहानुभूति हो, तब कहीं क्रान्तिकारी दल को देश में पैर रखने का स्थान मिल सकता है। यह तो क्रान्तिकारी दल की स्थापना की प्रारम्भिक बातें हैं। रह गई क्रान्ति, सो तो बहुत दूर की बात है।

क्रान्ति का नाम ही बड़ा भयङ्कर है। प्रत्येक प्रकार की क्रान्ति विपक्षियों को भयभीत कर देती है। जहां पर रात्रि होती है तो दिन का आगमन जान निशिचरों को दुःख होता है। ठंडे जल वायुमें रहने वाळे पशु पक्षी गरमी के आने पर उस देश को भी त्याग देते हैं। फिर राजनैतिक क्रान्ति तो बड़ी भयावनी

होती है। मनुष्य अभ्यासों का समूह है। अभ्यासों के अनुसार ही उस की प्रकृति भी बन जाती है। उस के विपरीति जिस समय कोई बाधा उपस्थित होती है, तो उनको भय प्रतीत होता है, इस के अतिरिक्त प्रत्येक सरकार के सहायक अमीर और ज़मीदार होते हैं। ये लोग कभी नहीं चाहते कि उन के ऐशो-आराम में किसी प्रकार की बाधा पड़े। इस लिये वे हमेशा क्रान्तिकारी आन्दोलन को नष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। यदि किसी प्रकार दूसरे देशों की सहायता लेकर समय पाकर क्रान्तिकारी दल क्रान्ति के उद्योग में सफल हो जावे, देश में क्रान्ति हो जावे, तो भी योग्य नेता न होने से अराजकता फैल कर व्यर्थ की नर-हत्या होती है, और उस प्रयत्न में अनेकों सुयोग्य वीरों तथा विद्वानों का नाश हो जाता है। जिस ज्वलन्त उदाहरण सन् १८५७ ई० का ग़दर है। यदि फ्रांस तथा अमेरिका की भांति क्रान्ति द्वारा राजतंत्र को पलट कर प्रजा तंत्र स्थापित भी कर लिया जावे तो बड़े बड़े धनी पुरुष अपने धन-बल से सब प्रकारों के अधिकारों को दबा बैठते हैं। कार्य कारिणी समितियों में बड़े बड़े अधिकार धनियों को प्राप्त हो जाते हैं। देश के शासन में धनिकों का मत ही उच्च आदर पाता है। धन-बल से देश के समाचार पत्रों, कल-कारख़ानों तथा खानों पर उनका ही अधिकार होता है। मजबूरन जनता की अधिक संख्या धनियों का समर्थन करने को बाध्य हो जाती है। जो दिमाग़ वाले होते हैं, वे भी समय पाकर बुद्धिबल से जनता की खरी-कमाई से प्राप्त किये अधिकारों को हड़प बैठते हैं। स्वार्थ के वशीभूत श्रमजीवियों तथा कृषकों को उन्नति का अवसर नहीं देते। अन्त में ये लोग भी धनिकों के पक्षपाती हो कर राजतंत्र के स्थान में धनिक तंत्र की स्थापना करते हैं। रूसी क्रान्ति के पश्चात यही हुआ था। रूस के क्रान्तिकारी इस बात को पहले

से ही जानते थे। अतएव उन्होंने राज्यसत्ता के विरुद्ध युद्ध कर के राज तंत्र की समाप्ति की। इसके बाद जैसे ही धनी तथा बुद्धिमानों ने अड़ङ्गा लगाना चाहा कि उसी समय उन से भी युद्ध कर के उन्हों ने वास्तविक प्रजातंत्र की स्थापना की।

अब विचारने की बात यह कि भारतवर्ष में क्रान्तिकारी आन्दोलन के समर्थक कौन से साधन मौजूद हैं? गत पृष्ठों में मैं ने अपने अनुभवों का उल्लेख करके दिखला दिया है कि समिति के सदस्यों को उदर-पूर्ति तक के लिये कितना कष्ट उठाना पड़ा। प्राण-पण से चेष्टा करने पर भी असहयोग आन्दोलन के पश्चात कुछ थोड़े से ही गिने चुने युवक युक्त प्रान्त में ऐसे मिल सके, जो क्रान्तिकारी आन्दोलन का समर्थन करके सहायता देने को उद्यत हुए। इन गिने चुने व्यक्तियों में भी हार्दिक सहानुभूति रखने वाले, अपनी जान पर खेल जाने वाले कितने थे उस का कथन ही क्या है? कैसी बड़ी बड़ी आशायें बँधा कर इन व्यक्तियों को क्रान्तिकारी समिति का सदस्य बनाया गया था, और इस अवस्था में, जब कि असहयोगियों ने सरकार की ओर से घृणा उत्पन्न कराने में कोई कसर न छोड़ी थी, खुले रूप में राज्यद्रोही बातों का पूर्ण प्रचार किया गया था। इसपर भी बोलशेविक सहायता की आशायें बँधा बँधा कर तथा क्रान्तिकारियों के ऊंचे ऊंचे आदर्शों तथा बलिदानों का उदाहरण दे देकर प्रोत्साहन किया जाता था। नवयुवकों के हृदयमें क्रान्तिकारियों के प्रति बड़ा प्रेम तथा श्रद्धा होती है। उनकी अस्त्र शस्त्र रखने की स्वाभाविक इच्छा तथा रिवालवर या पिस्तौल से प्राकृतिक प्रेम उन्हें क्रान्तिकारी दल से सहानुभूति उत्पन्न करा देता है। मैं ने अपने क्रान्ति कारी जीवन में एक भी युवक ऐसा न देखा जो एक रिवालवर या पिस्तौल पास रखने की

इच्छा न रखता हो। जिस समय उन्हें रिवाल्वर के दर्शन होते हैं, वे समझते हैं कि इष्टदेव के दर्शन प्राप्त हुए, आधा जीवन सफल हो गया। उसी समय वे समझते हैं कि क्रान्तिकारी दल के पास इस प्रकार के सहस्रों अस्त्र होंगे, तभी तो इतनी बड़ी सरकार से युद्ध करने का प्रयत्न कर रहे हैं। सोचते हैं कि धन की भी कोई कमी न होगी। अब क्या, अब तो समिति के व्यय से देश भ्रमण का अवसर भी प्राप्त होगा, बड़े बड़े त्यागी महात्माओं के दर्शन होंगे सरकारी गुप्तचर विभाग का भी हाल मालूम हो सकेगा, सरकार द्वारा ज़ब्त किताबें कुछ तो पहले ही पढ़ा दी जाती हैं, रही सही को भी आशा रहती है कि बड़ा उच्च साहित्य देखने को मिलेगा, जो यों कभी प्राप्त नहीं हो सकता। साथ ही साथ ख़याल होता है कि क्रान्तिकारियों ने देश के राजा महाराजाओं को तो अपने पक्ष में कर ही लिया होगा। अब क्या थोड़े दिन की ही कसर है लौट दिया सरकार का राज्य! बम् बनाना सीख ही जायेंगे। अमर बूटी प्राप्त हो जावेगी, इत्यादि। परन्तु जैसे ही एक युवक क्रान्तिकारी दल का सदस्य बन कर हार्दिक प्रेम से समिति के कार्यों में योग देता है; थोड़े दिनों में ही उसे विशेष सदस्य होने के अधिकार प्राप्त होते हैं, वह ऐक्टिव (कार्यशील) मेम्बर बनता है, उसे संस्था का कुछ असली भेद मालूम होता है, तब समझ में आता है कि कैसे भीषण कार्य में उसने हस्तक्षेप किया है। फिर तो वही दशा हो जाती है, जो 'नकटा पंथ' के सदस्यों की थी। जब चारों ओर से असफलता तथा अविश्वास की घटायें दिखाई देती हैं, तब यही विचार होता है कि ऐसे दुर्गम पथ में ये परिणाम तो होते ही हैं। दूसरे देश के क्रान्तिकारियों के मार्ग में भी ऐसी ही बाधायें उपस्थित हुई होंगी। वीर वही कहलाता

जा अपने लक्ष्य सो नहीं छोड़ता, इसी प्रकार की बातों से मन को शान्त किया जाता है। भारत के जन साधारण की तो कोई बात ही नहीं। अधिकांश शिक्षित समुदाय भी यह नहीं जानता कि क्रान्तिकारी दल क्या पदार्थ है। फिर उन से सहानुभूति कौन रखे ? बिना देशवासियों की सहानुभूति के अथवा बिना जनता की आवाज़ के सरकार भी किसी बात की कुछ चिन्ता नहीं करती। दो चार पढ़े लिखे एक दो अङ्गरेजी अख़बार में दबे हुये शब्दों में यदि दो एक लेख लिख दें, तो वे अरण्य रोदन के समान कुछ भी प्रभाव नहीं रखते ! उन की ध्वनि व्यर्थ में ही आकाश में विलीन हो जाती है। तमाम बातों को देख कर अब तो मैं इस निर्णय पर पहुंचा हूं कि अच्छा हुआ जो मैं गिरफ़्तार हो गया और भागा नहीं। भागने को मुझे सुविधायें थीं। गिरफ्तारी से पहले ही मुझे अपनी गिरफ़्तारी का पूरा पता चल गया था। गिरफ्तारी के पूर्व भी यदि इच्छा करता तो पुलिस वालों को मेरी हवा भी न मिलती, किन्तु मुझे अपनी शक्ति की परीक्षा करनी थी। गिरफ़्तारी के बाद सड़क पर आध घण्टे तक बिना किसी बन्धन के घूमता रहा। पुलिस वाले शान्ति पूर्वक बैठे हुये थे। जब पुलिस कोतवाली में पहुंचा, दो पहर के समय पुलिस कोतवाली ने दफ़्तर में बिना किसी बन्धन के खुला हुआ बैठा था। केवल एक सिपाही निगरानी के लिये पास बैठा हुआ था, जो रात भर का जगा था। सब पुलिस अफ़सर भी रात भर के जगे थे, क्योंकि गिरफ़्तारियों में लगे रहे थे। सब आराम करने चले गये थे। निगरानी वाला सिपाही भी घोर निद्रा में सो गया। दफ़्तर में केवल एक मुन्शी लिखा पढ़ी कर रहे थे। यह श्रीयुत रोशनसिंह अभियुक्त के फूफीजात भाई थे। यदि मैं चाहता तो धीरे

से उठ कर चल देता। पर मैं ने विचारा कि मुन्शी जी महाशय बुरे फसेंगे। मैं ने मुन्शी जी को बुला कर कहा कि यदि भावी आपत्ति के लिये तैयार हो तो मैं जाऊँ। वे मुझे पहले से जानते थे। पैरों पड़ गये कि गिरफ़्तार हो जाऊंगा, बाल बच्चे भूखों मर जायेंगे। मुझे दया आ गई। एक घण्टा बाद श्री० अशफ़ाकउल्ला खां के मकान की तलाशी ले कर पुलिस वाले लौटे। श्री० अशफ़ाकउल्ला खां के भाई की करतूसी बन्दूक और कारतूसों की भरी हुई पेटी ला कर उन्हीं मुन्शी जी के पास रख दी गई, और मैं पास ही कुर्सी पर खुला हुआ बैठा था। केवल एक सिपाही खाली हाथ पास में खड़ा था। इच्छा हुई कि बन्दूक उठा कर कारतूसों की पेटी गले में डाल लूं, फिर कौन सामने आयगा। पर फिर सोचा कि मुन्शी जी पर आपत्ति आवेगी, विश्वासघात करना ठीक नहीं। उसी समय खुफिया पुलिस के डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट सामने छत पर आये। उन्होंने देखा कि मेरे एक ओर कारतूस तथा बन्दूक पड़ी है, दूसरी ओर श्रीयुत प्रेमकृष्ण का माउजर पिस्तौल तथा कारतूस रखे हैं, क्योंकि सब चीजें मुन्शी जी के पास आ कर जमा होती थीं। मैं बिना किसी बन्धन के बीच में खुला हुआ बैठा हूं। डि० सु० को तुरन्त सन्देह हुआ, उन्होंने बन्दूक तथा पिस्तौल वहां से हटवा कर मालखाने में बन्द करा दिये। सायंकाल को पुलिस की हवालात में बन्द किया गया। निश्चय किया कि अब भाग चलूं। पाखाने के बहाने से बाहर निकाला गया। एक सिपाही कोतवाली से बाहर दूसरे स्थान में शौच के निमित्त लिवा गया। दूसरे सिपाहियों ने उस से बहुत कुछ कहा कि रस्सी डाल लो। उस ने कहा मुझे विश्वास है यह भागेंगे नहीं। पाखाना नितान्त निर्जन स्थान में था। मुझे पाखाने में भेज कर वह सिपाही खड़े होकर सामने कुश्ती

देखने लगा। मैं ने दीवार पर पैर रखा और चढ़ कर देखा कि सिपाही महोदय कुश्ती देखने में मस्त हैं। हाथ बढ़ाते ही दीवार के ऊपर और एक क्षण में बाहर हो जाता, फिर मुझे कौन पाता? किन्तु तुरन्त विचार आया कि जिस सिपाही ने विश्वास कर के तुम्हें इतनी स्वतन्त्रता दी, उस के साथ विश्वासघात कर के भाग कर उस को जेल में डालोगे? क्या यह अच्छा होगा? उस के बाल बच्चे क्या कहेंगे? इस भाव ने हृदय पर एक ठोकर लगाई। एक ठंडी सांस भरी, दीवार से उतर कर बाहर आया और सिपाही महोदय को साथ ले कर कोतवाली की हवालात में आ कर बन्द हो गया।

लखनऊ जेल में काकोरी के अभियुक्तों को बड़ी भारी आज़ादी थी। राय साहब पं० चम्पालाल जेलर की कृपा से कभी यह भी न समझ सके कि हम लोग जेल में हैं या किसी रिश्तेदार के यहां महमानी कर रहे हैं। जैसे माता पिता से छोटे २ लड़के बात चीत पर बिगड़ जाते हैं, यही हमारा हाल था। हम लोग जेल वालों से बात बात पर ऐंठ जाते। पं० चम्पालाल जी का ऐसा हृदय था कि वे हम लोगों से अपनी सन्तान से अधिक प्रेम करते थे। हममें से किसी को ज़रा सा कष्ट होता था; तो उन्हें बड़ा दुःख होता था। हमारे ज़रा से कष्ट को भी वह स्वयं न देख सकते थे। और हम लोग ही क्यों, उन के जेल में किसी कैदी या सिपाही जमादार या मुन्शी - किसी को भी कोई कष्ट नहीं! सब बड़े प्रसन्न रहते हैं। इस के अतिरिक्त मेरी दिन चर्या तथा नियमों का पालन देख कर पहरे के सिपाही अपने गुरु से भी अधिक मेरा सम्मान करते थे। मैं यथा नियम जाड़ा गर्मी तथा बरसात प्रातःकाल तीन बजे से उठ कर सन्ध्यादि से निवृत्त हो नित्य हवन भी करता

था। प्रत्येक पहरे का सिपाही देवता के समान मेरा पूजन करता था। यदि किसी के बाल बच्चे को कष्ट होता था, तो वह हवनकी विभूति ले जाता था, और कोई जंत्र मांगता था। उनके विश्वास के कारण उन्हें आराम भी होता था तथा उन की और भी श्रद्धा बढ़ जाती थी। परिणाम स्वरूप जेल के प्रत्येक विभाग तथा स्थान का हाल मुझे मालूम रहता। मैं ने जेल से निकल जाने का पूरा प्रबन्ध कर लिया। जिस समय चाहता चुप चाप निकल जाता। एक रात्रि को तैयार हो कर उठ खड़ा हुआ। बैरेक के नम्बरदार तो मेरे सहारे पहरा देते थे। जब जी में आता सोते जब इच्छा होती बैठ जाते, क्यों कि वे जानते थे कि यदि सिपाही या जमादार सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल के सामने पेश करना चाहेंगे तो मैं बचा लूंगा। सिपाही तो कोई चिन्ता ही न करते थे। चारों ओर शान्ति थी। केवल इतना प्रयत्न करना था कि लोहे की कटी हुई सलाखों को उठा कर बाहर हो जाऊं। चार महीने पहले से लोहे की सलाखें काट ली थीं। काटकर उन्हें ऐसे ढङ्ग से जमा दी थीं कि सलाखें धोई गईं, रंगत लगवाई गई, तीसरे दिन झाड़ी जातीं, आठवें दिन हथोड़े से ठोंकी जाती और जेल के अधिकारी नित्य प्रति सायंकाल घूम कर सब ओर दृष्टि डाल जाते थे, पर किसी को कोई पता न चला। जैसे ही मैं जेल से भागने का विचार कर के उठा था, ध्यान आया कि जिन पं० चम्पालाल की कृपा से सब प्रकार के आनन्द भोग ने की जेल में स्वतन्त्रता प्राप्त हुई, उन के बुढ़ापे में जब कि थोड़ा सा समय ही उन की पैंशन के लिये बाक़ी है, क्या उन्हीं के साथ विश्वास घात कर के निकल भागूं ? सोचा जीवन भर किसी के साथ विश्वासघात न किया, अब भी विश्वासघात न करूंगा। उस समय मुझे यह भलीभांति मालूम हो चुका था कि मुझे फांसी की सज़ा होगी, पर उपरोक्त बात सोच कर भागना स्थगित ही

कर दिया। उपरोक्त सब बातें चाहे प्रलाप ही क्यों न मालूम हों किन्तु सब अक्षरशः सत्य हैं, सबके प्रमाण विद्यमान हैं।

मैं इस समय इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि यदि हम लोगों ने प्राणपणसे जनताको शिक्षित बनाने में पूर्ण प्रयत्न किया होता, तो हमारा उद्योग क्रान्तिकारी आन्दोलन से कहीं अधिक लाभदायक होता, जिसका परिणाम स्थायी होता। अति उत्तम होगा कि भारत की भावी सन्तान तथा नवयुवक वृन्द क्रान्तिकारी संगठन करनेकी अपेक्षा जनताकी प्रवृत्ति को देश सेवा की ओर लगानेका प्रयत्न करें, और श्रमजीवियों तथा कृषकों का संगठन कर के उन को ज़मींदारों तथा रईसों के अत्याचारों से बचावें। भारतवर्ष के रईस तथा जमींदार सरकार के पक्षपाती हैं। मध्य श्रेणीके लोग किसी न किसी प्रकार इन्हीं तीनों के आश्रित है। कोई तो नौकर पेशा हैं और जो कोई व्यवसाय भी करते हैं उन्हें भी इन्हीं के मुंह की ओर ताकना पड़ता है। रह गये श्रमजीवी तथा कृषक - सो उनको उदर—पूर्तिके उद्योगसे ही समय नहीं मिलता; जो धर्म्म, समाज तथा राजनीति की ओर कुछ ध्यान दे सकें। मद्यपानादि दुर्व्यसनों के कारण उन का आचारण भी ठीक नहीं रह सकता। व्यभिचार, सन्तान - वृद्धि, अल्पायु में मृत्यु तथा अनेक प्रकार के रोगोंसे जीवन भर उनकी मुक्ति नहीं हो सकती। कृषकों में उद्योग का तो नाम भी नहीं पाया जाता। यदि एक किसान को जमींदारकी मजदूरी करने या हल चलाने की नौकरी करने पर ग्राम में आज से बीस वर्ष पूर्व दो आने रोज या चार रुपये मासिक मिलते थे, तो आज भी वही वेतन बंधा चला आ रहा है। बीस वर्ष पूर्व वह अकेला था, अब उसकी स्त्री तथा चार सन्तान भी हैं। पर उसी वेतन में उसे निर्वाह करना पड़ता है। उसे उसीपर सन्तोष करना पड़ता है। सारे दिन जेठ की लू तथा धूप में

गन्नेके खेत में पानी देते देते उसको रतौंधी आने लगती
अंधेरा होते ही आँख से दिखाई नहीं देता, पर उसके उप
में आध सेर सड़े हुए शीरे का शरबत या आध सेर चना
छः पैसे रोज मजदूरी मिलती है, जिसमें ही उसे अपने परिवा
पेट पालना पड़ता है!

जिस के हृदय में भारतवर्ष की सेवा के भाव उपस्
हों, या जो भारतभूमिको स्वतन्त्र देखने या स्वाधीन बनाने
इच्छा रखता हो, उसको उचित है कि ग्रामीण सङ्गठन कर
कृषकों की दशा सुधार कर, उन के हृदय से भाग्य-निर्भरता
हटा कर उद्योगी बनने की शिक्षा दे। कल, कारखाने, रे
जहाज तथा खानों में जहां कहीं श्रमजीवी हों, उन की दशा
सुधारने के लिये श्रमजीवियों के सङ्घ की स्थापना की
ताकि उनको उनकी अवस्था का ज्ञान हो सके और कारखा
मालिक मन-माने अत्याचार न कर सकें और अछूतों को, जि
संख्या इस देश में लगभग छः करोड़ है, पर्याप्त शिक्षा प्र
कराने का प्रबन्ध हो, उनको सामाजिक अधिकारों में समा
हो। जिस देशमें छः करोड़ मनुष्य अछूत समझे जाते हों,
देशवासियोंको स्वाधीन बनने का अधिकार ही क्या है?
के साथ ही साथ स्त्रियों की दशा भी इतनी सुधारी जावे
अपने आप को मनुष्य जाति का अङ्ग समझने लगे। वे पैर
जूती तथा घरकी गुड़ियां न समझी जावें। इतने काय
जाने के बाद जब भारतकी जनता का अधिकांश शि
हो जावेगा, वे अपनी भलाई-बुराई समझने के योग्य हो जा
उस समय प्रत्येक आन्दोलन, जिस का शिक्षित जनता स
करेगी, अवश्य सफल होगा। संसारकी बड़ी से बड़ी
भी उस के दबाने में समर्थ न हो सकेगी। रूस में जब

किसान संगठन नहीं हुआ, रूस सरकार की ओर से देशसेवकों पर मनमाने अत्याचार होते रहे। जिस समय से 'केथोराइन' ने ग्रामीण—सङ्गठन का कार्य अपने हाथ में लिया, स्थान स्थान पर कृषक—सुधारक सङ्घों की स्थापना की, घूम घूम कर रूसके युवक तथा युवतियों ने जारशाहीके विरुद्ध प्रचार आरम्भ किया। फिर किसानों को अपनी वास्तविक अवस्थाका ज्ञान होने लगा। वे अपने मित्र तथा शत्रुको समझने लगे, उसी समयसे जारशाही की नींव हिलने लगी। श्रमजीवियोंके सङ्घ भी स्थापित हुए। रूस में हड़तालों का आरम्भ हुआ। उसी समय से जनता की प्रवृति को देखकर मदान्धोंके नेत्र खुल गये।

भारतवर्ष में सब से बड़ा कमी यही है कि इस देश के युवकों में शहरी जीवन व्यतीत करने की बान पड़ गई है। युवक—वृन्द साफ़—सुथरे कपड़े पहनने, पक्की सड़कों पर चलने मीठा, खट्टा तथा चटपटा भोजन करने, विदेशी सामग्री से सुसज्जित बाजारों में घूमने, मेज़—कुर्सीपर बैठने तथा विलासिता में फंसे रहने के आदी हो गये हैं। ग्रामीण—जीवन को वे नितान्त नीरस तथा शुष्क समझते हैं। उनकी समझ में ग्रामों में अर्ध सभ्य या जंगली लोग निवास करते हैं। यदि कभी किसी अंग्रेजी स्कूल या काळेजमें पढ़ने बाला विद्यार्थी किसी कार्यवश अपने किसी सम्बन्धी के यहाँ ग्राम में पहुंच जाता है, तो उसे वहां दो—चार दिन काटना बड़ा कठिन हो जाता है। वे या तो कोई उपन्यास साथ ले जाते हैं, जिसे अलग बैठे पढ़ा करते हैं, या पड़े पड़े सोया करते हैं। किसी ग्राम- वासी से बात -चीत करने से उन का दिमाग थक जाता है, या उन से बात-चीत करना अपनी शान के खिलाफ़ समझते है। ग्रामवासी जमींदार या रईस जो अपने लड़कों को अंग्रेजी पढ़ाते हैं, उन की भी यही

इच्छा रहती है कि जिस प्रकार हो सके उनके लड़के कोई
सरकारी नौकरी पा जाएं। ग्रामीण बालक जिस समय शहर में
पहुंच कर शहरी शान को देखते हैं, इतनी बुरी तरह से उनपर
फ़ैशन का भूत सवार होता है कि उन के समान फ़ैशन बनाने
की चिन्ता किसी को भी नहीं रहती। थोड़े दिनों में उनके आच-
रण पर भी इस का प्रभाव पड़ता है और वे स्कूल के गन्दे लड़कों
के हाथ में पड़ कर बड़ी बुरी बुरी कुटेवों के घर बन जाते हैं।
उनसे जीवन पर्यन्त अपना ही सुधार नहीं हो पाता, फिर वे
ग्रामवासियों का सुधार क्या खाक कर सकेंगे?

असहयोग आन्दोलन में कार्य कर्ताओं की इतनी
अधिक संख्या होने पर भी सब के सब शहर के प्लेटफार्मों
पर ळेक्चरबाजी करना ही अपना कर्तव्य समझते थे।
ऐसे बहुत थोड़े कार्यकर्ता थे, जिन्हों ने ग्रामों में कुछ
कार्य किया। उन में भी अधिकतर ऐसे थे जो केवल
हुल्लड़ कराने में ही देशोद्धार समझते थे। परिणाम यह हुआ
कि आन्दोलन में थोड़ी सी शिथिलता आते ही सब कार्य
अस्त-व्यस्त हो गया। इसी कारण महामना देशबन्धु चितरञ्जन
दास ने अन्तिम समय ग्राम सङ्गठन ही अपने जीवन का
ध्येय बनाया था। मेरे विचार से ग्राम-संगठन का सब से
सुगम रीति यही हो सकती है कि युवकों में शहरी जीवन
छोड़ कर ग्रामीण जीवन से प्रीति उत्पन्न हो। जो युवक
मिडिल, इंट्रेन्स, एफ० ए०, बी० ए० पास करने में हजारों
रुपये नष्ट कर के दस, पन्द्रह, बीस या तीस रुपयेकी नौकरी
के लिए ठोकरें खाते फिरते हैं, उन्हें नौकरी का आसरा छोड़कर
कोई उद्योग जैसे-बढ़ईगीरी, लुहारगीरी, दर्जीका काम, धोबी
का काम, जूते बनाना, कपड़ा बुनना, मकान बनाना, राजगीरी का

राइन ने इसी प्रकार कार्य किया था। उदर पूर्ति के निमित्त केथो
राइन के अनुयायी ग्रामों में जाकर कपड़े सीते या जूते बना
और रात्रि के समय किसानों को उपदेश देते थे। जिस सम
से मैंने केथोराइन की जीवनी (The grand mother of th
Russian revolution) का अङ्गरेजी भाषा में अध्ययन किय
मुझ पर उस का बहुत प्रभाव हुआ। मैं ने तुरन्त उस की जीव
'केथोराइन' नाम से हिन्दी में प्रकाशित कराई। मैं भी उ
प्रकार काम करना चाहता था, पर बीच ही में क्रान्तिकारी दल
फँस गया। मेरा तो अब यह दृढ़ निश्चय हो गया है कि अ
पचास वर्ष तक क्रान्तिकारी दल को भारतवर्ष में सफलता न
हो सकती, क्योंकि यहां की स्थति उस के उपयुक्त नहीं
अतएव क्रान्तिकारी दल का सङ्गठन कर के व्यर्थ में नवयुवक
के जीवन को नष्ट करना और शक्ति का दुरुपयोग करना ब
भारी भूल है। इससे लाभ के स्थान में हानि की सम्भावना बहु
अधिक है। नवयुवकों को मेरा अन्तिम सन्देश यही है कि
रिवालवर या पिस्तौल को अपने पास रखने की इच्छा को त्य
कर सच्चे देशसेवक बनें। पूर्ण स्वाधीनता उन का ध्येय हो औ
वे वास्तविक साम्यवादी बनने का प्रयत्न करते रहें। फल
इच्छा छोड़ कर सच्चे प्रेम से कार्य करें; परमात्मा सदैव उन
भला ही करेगा।

> यदि देश हित मरना पड़े मुझ को सहस्रों बार भी।
> तो भी न मैं इस कष्टको निज ध्यान में लाऊं कभी॥
> हे ईश भारतवर्ष में शत बार मेरा जन्म हो।
> कारण सदा ही मृत्यु का देशोपकारक कर्म हो॥

जातियों के बालकों को शिक्षा दे सकते हैं। श्रमजीवी संघ स्थापित करने में शहरी जीवन तो व्यतीत हो सकता है किन्तु इसके लिये उनके साथ अधिक समय रहकर व्यतीत करना पड़ेगा जिस समय वे अपने अपने काम से छुट्टी पाकर आराम करते हैं, उस समय उनके साथ वार्तालाप करके मनोहर उपदेशों द्वारा उनको उनकी दशा का दिग्दर्शन कराने का अवसर मिल सकता है। इन लोगों के पास समय बहुत कम होता है, इस कारण से अति उत्तम हो यदि चित्ताकर्षक साधनों द्वारा कोई उपदेश करने की रीतिसे, जैसे मैजिक लालटेन द्वारा तस्वीरें दिखाकर या किसी दूसरे उपाय से उनको एक स्थान पर एकत्रित किया (जैसे गाना बजाना वगैरा) जा सके, तथा रात्रि पाठशालायें खोल कर उन्हें तथा उनके बच्चे को शिक्षा देनेका भी प्रवन्ध किया जावे। जितने युवक उच्च शिक्षा प्राप्त करके व्यर्थ में धन व्यय करने की इच्छा रखते हैं, उनको उचित है कि अधिक से अधिक अङ्गरेज़ी के दसवें दर्जे तक की योग्यता प्राप्त करके किसी कला-कौशल के सीखने का प्रयत्न करें और उस कलाकौशल द्वारा ही वह अपना जीवन व्यतीत करें।

जो धनी मानी स्वदेश सेवार्थ बड़े बड़े विद्यालयों तथा पाठशालाओं की स्थापना करते हैं, उनको उचित है कि विद्या-पीठों के साथ साथ उद्योगपीठ, शिल्पविद्यालय तथा कलाकौशल भवनों की स्थापना भी करें। इन विद्यालयों के विद्यार्थियों को नेतागीरी के लोभ से बचाया जावे। विद्यार्थियों का जीवन सादा हो और विचार उच्च हों। इन्हीं विद्यालयों में एक एक उपदेशक विभाग भी हो, जिस मे विद्यार्थी प्रचार करने का ढंग सीख सकें। जिन युवकों के हृदय में स्वदेश सेवा के भाव हों उनको कष्ट सहन करने की आदत डालकर सुसंगठित रूप से ऐसा कार्य करना चाहिये, जिसका परिणाम स्थायी हो। कैथो-

यक होता है। ग्राम में कौन ऐसा पुरुष है जिसका लुहार, बढ़ई, धोबी, दर्ज़ी, कुम्हार या वैद्य से काम नहीं पड़ता। मेरा पूर्ण अनुभव है कि इन लोगों की भले भले ग्रामवासी खुशामद करते रहते हैं।

रोज़ाना काम पड़ते रहने से और सम्बन्ध होने से यदि थोड़ी सी चेष्टा की जावे और ग्रामवासियों को थोड़ा सा उपदेश दे कर उनकी दशा सुधारने का प्रयत्न किया जावे तो बड़ी जल्दी काम बने। थोड़े से समय में ही वे सच्चे स्वदेश भक्त खद्दरधारी बन जावें, यदि उनमें एक दो शिक्षित हो तो उत्साहित करके उसके पास एक समाचार-पत्र मंगाने का प्रबन्ध कर दिया जावे। देश की दशा का भी उन्हें कुछ कुछ ज्ञान होता रहे। इसी तरह सरल सरल पुस्तकों की कथायें सुनाकर उनमें से कुप्रथाओं को भी छुड़ाया जा सकता है। कभी कभी स्वयं रामायण या भागवत् की कथा भी सुनाया करे। यदि नियमित रूप से भागवत् की कथा कहें तो पर्याप्त धन भी चढ़ावे में आ सकता है, जिससे एक पुस्तकालय स्थापित कर दें। कथा कहने के अवसर पर बीच बीच में चाहे कितनी राजनीति का समावेश कर जावें, कोई खुफिया पुलिस का रिपोर्टर नहीं बैठा जो रिपोर्ट करे। वैसे यदि कोई खद्दरधारी ग्राम में पहुंचकर उपदेश करना चाहे तो तुरन्त ही ज़मींदार पुलिस में खबर करदे और यदि क़स्बे के वैद्य, लड़के पढ़ाने वाले, कथा कहनेवाले पण्डित कोई बात कहें तो सब चुप-चाप सुनकर उस पर अमल करने की कोशिश करते हैं और उन्हें कोई पूछता भी नहीं। इस प्रकार अनेक-सुविधायें मिल सकती हैं, जिनके सहारे ग्रामीणों की सामाजिक दशा सुधारी जा सकती है। रात्रि पाठशालायें खोलकर निर्धन तथा अछूत

इत्यादि सीख लेना चाहिये। यदि ज़रा साफ़ सुथरे रहना हो तो वैद्यक सीखे। किसी बड़े ग्राम या क़स्बे में जाकर काम शुरू करे। उपरोक्त कामों में से कोई काम भी ऐसा नहीं है, जिस में चार या पांच घण्टा मेहनत करके तीस रुपये मासिक की आय न हो जावे। ग्राम में तीस रुपये मासिक शहर के साठ रुपये से अधिक है। क्योंकि ग्राम में लकडी या कपडा का मूल्य बहुत कम होता है और यदि किसी ज़मींदार की कृपा हो गई तो एक सूखा हुआ वृक्ष कटवा दिया तो छः महीने के लिए ईंधन की छुट्टी हो गई। शुद्ध घी, दूध सस्ते दामों में मिल जाता है और यदि स्वयं एक या दो गाय या भैंस पाल ली, तब तो आम के आम गुठलियों के दाम ही मिल गये। चारा सस्ता मिलता है। घी दूध बाल बच्चे खाते हैं। कण्डों का ईंधन होता है। और यदि किसी की कृपा हो गई तो फसल पर एक दो भुस की गाड़ी बिना मूल्य ही मिल जाती है। अधिकतर काम काजियों को गांव में चारा लकड़ी के लिये पैसा ख़र्च नहीं करना पड़ता। हजारों अच्छे अच्छे ग्राम हैं, जिनमें वैद्य, दर्ज़ी, धोबी निवास ही नहीं करते। उन ग्रामों के लोगों को दस, बीस कोस दूर दौड़ना पड़ता है। वे इतने दुःखी होते हैं कि जिस का अनुमान करना बड़ा कठिन है। विवाह आदि अवसरों पर यथा समय कपड़े नहीं मिलते। काष्ठादिक औषधियां बड़े बड़े क़स्बों में नहीं मिलतीं। यदि मामूली अत्तार बनकर ही कस्बे में बैठ जावे; और दो चार किताबें देखकर ही औषधि दिया करे तो भी तीस, चालीस रुपये मासिक की आय तो कहीं गई ही नहीं है। इस प्रकार उदर-निर्वाह तथा परिवार का प्रबन्ध हो जाता है। ग्रामों की अधिक जन-संख्या से परिचय हो जाता है। परिचय ही नहीं, जिसका एक समय आवश्यकता पर कार्य निकल गया, वह आभारी हो जाता है। उसकी आंख नीची रहती है। ज़रूरत पड़ने पर तुरन्त सहा·

अन्तिम समय की बातें ।

सर फरोशाने वतन फिर देखलो मक़तल में है।
मुल्क पर .कुर्बान हो जाने के अरमां दिल में हैं॥
तेग़ है जालिम की यारो' और गला मजलूम का।
देख लेंगे हौसला कितना दिले .कातिल में हैं॥
सोरे महशर बावपा है मार का है धूम का।
बलबले जोशे शहादत हर रगे "बिस्मिल" में है॥

आज १६ दिसम्बर १६२७ ई० को निम्नलिखित पंक्तियों का उल्लेख कर रहा हूं, जब कि १६ दिसम्बर १६२७ ई० सोमवार (पौष कृष्ण ११ सम्वत् १६८४) को ६॥ बजे प्रातःकाल इस शरीर को फांसी पर लटका देने की तिथि निश्चित हो चुकी हैं। अतएव नियत समय पर यह लीला संवरण करनी होगी ही। यह सब सर्व शक्तिमान प्रभु की लीला है। सब कार्य उसके इच्छानुसार ही होते हैं। यह परम पिता परमात्मा के नियमों का परिणाम है कि किस प्रकार किस को शरीर त्यागना होता हैं। मृत्यु के सकल उपक्रम निमित्त मात्र हैं। जब तक कर्म क्षय नहीं होता, आत्मा को जन्म-मरण के बन्धन में पड़ना ही होता है, यह शास्त्रों का निश्चय है। यद्यपि यह, वह परब्रह्म ही जानता है कि किन कर्मों के परिणाम स्वरूप कौन सा शरीर इस आत्मा को ग्रहण करना होगा, किन्तु अपने लिये यह मेरा दृढ़ निश्चय है कि मैं उत्तम शरीर धारण कर नवीन शक्तियों सहित अति शीघ्र ही पुनः भारतवर्ष में ही किसी निकटवर्ती सम्बन्धी या इष्ट मित्र के गृह में जन्म ग्रहण करूंगा, क्योंकि मेरा जन्म जन्मान्तर यही उद्देश्य रहेगा कि मनुष्य मात्र को सभी प्राकृतिक पदार्थों पर समानाधिकार प्राप्त हो। कोई किसी पर हुकूमत न करे। सारे संसार में जन तन्त्र की स्थापना हो। वर्तमान समय में भारतवर्ष की बड़ी शोच-

नीय अवस्था है। अतएव लगातार कई जन्म इसी देश में ग्रहण करने होंगे और जब तक कि भारतवर्ष के नर-नारी पूर्णतया सर्व रूपेण स्वतन्त्र न हो जावेंगे, परमात्मा से मेरी यही प्रार्थना होगी कि वह मुझे इसी देश में जन्म दे; ताकि मैं उसकी पवित्र वाणी 'वेद वाणी' का अनुपम घोष मनुष्यमात्र के कानों तक पहुंचाने में समर्थ हो सकूं। सम्भव है कि मैं मार्ग-निर्धारण में भूल करूं, पर इसमें मेरा कोई विशेष दोष नहीं, क्योंकि मैं भी तो अल्पज्ञ जीव मात्र ही हूं। भूल न करना केवल सर्वज्ञसे ही सम्भव है। हमें परिस्थियों के अनुसार ही सब कार्य करने पड़े और करने होंगे। परमात्मा अगले जन्म में सुबुद्धि प्रदान करे कि मैं जिस मार्ग का अनुसरण करूं, वह त्रुटि रहित ही हो।

अब मैं उन बातों का भी उल्लेख कर देना उचित समझता हूं जो काकोरी षड्यन्त्र के अभियुक्तों के सम्बन्ध में सेशन-जज के फ़ैसला सुनाने के पश्चात् घटित हुईं। ६ अप्रैल सन् २७ ई० को सेशन जज ने फ़ैसला सुनाया था। १८ जुलाई सन् २७ ई० को अवध चीफ कोर्ट में अपील हुई। इसमें कुछ की सजायें बढ़ीं और एकाध की कम भी हुईं। अपील होने की तारीख़ से पहले मैं ने संयुक्त प्रान्त के गवर्नर की सेवा में एक मेमोरियल भेजा था, जिसमें प्रतिज्ञा की थी कि अब भविष्य में क्रान्तिकारी दल से कोई सम्बन्ध न रखूंगा। इस मेमोरियल का जिक्र मैंने अपनी अन्तिम दया-प्रार्थना पत्र में जो मैं ने चीफकोर्ट के जजों को दिया था, उसमें कर दिया था; किन्तु चीफ कोर्ट के जजों ने मेरी किसी प्रकार की प्रार्थना न स्वीकार की। मैंने स्वयं ही जेल से अपने मुक्दमे की बहस लिखकर भेजी, जो छापी गई। जब यह बहस चीफ कोर्ट के जजों ने सुनी, तो उन्हें बड़ा सन्देह हुआ कि वह बहस मेरी लिखी हुई न थी। इन तमाम बातों का

यह नतीजा निकला कि चीफ़ कोर्ट अवध से मुझे महा भयंकर षड्यन्त्रकारी की पदवी दी गई। मेरे पश्चाताप पर जजों को विश्वास न हुआ और उन्होंने अपनी धारणा का प्रकाश इस प्रकार किया कि यदि यह (रामप्रसाद) छूट गया तो फिर वही कार्य करेगा। बुद्धि की प्रखरता तथा समझ पर कुछ प्रकाश डालते हुए 'निर्दयी हत्यारे' के नाम से विभूषित किया गया। लेखनी उनके हाथ में थी, जो चाहे सो लिखते, किन्तु काकोरी षड्यन्त्र का चीफ कोर्ट का आद्योपान्त फ़ैसला पढ़ने से भली भांति विदित होता है कि मुझे मृत्युदण्ड किस ख्याल से दिया गया! यह निश्चय किया गया कि रामप्रसाद ने सेशन जज के विरुद्ध अपशब्द कहे हैं, खुफिया विभाग के कार्यकर्ताओं पर लांछन लगाये हैं अर्थात् अभियोग के समय जो अन्याय होता था, उसके विरुद्ध आवाज़ उठाई है, अतएव रामप्रसाद सबसे बड़ा गुस्ताख़ मुलज़िम है। अब माफी चाहे वह किसी भी रूप में मांगे, नहीं दी जा सकती।

चीफ़ कोर्ट से अपील ख़ारिज हो जाने के बाद यथानियम प्रान्तीय गवर्नर तथा फिर वाइसराय के पास दया प्रार्थना की गई। रामप्रसाद 'बिस्मिल', राजेन्द्रनाथ लहरी, रोशनसिंह तथा अशफ़ाक उल्ला खां के मृत्यु-दण्ड को बदलकर अन्य दूसरी सज़ा देने की सिफ़ारिश करते हुए संयुक्तप्रांत की कौंसिल के लगभग सभी निर्वाचित हुए मेम्बरों ने हस्ताक्षर करके निवेदन पत्र दिया। मेरे पिता ने ढाई सौ रईस, आनरेरी मजिस्ट्रेट तथा ज़मींदारों के हस्ताक्षर से एक अलग प्रार्थना पत्र भेजा, किन्तु श्रीमान् सर विलियम मेरिस की सरकार ने एक भी न सुनी। उसी समय लेजिसलेटिव एसेम्बली तथा कौंसिल आफ स्टेट के ७८ सदस्यों ने भी हस्ताक्षर करके वाइसराय के पास प्रार्थना पत्र भेजा कि 'काकोरी षडयन्त्रके मृत्यु दण्ड पाये हुओं को मृत्युदण्ड

को सज़ा बदलकर दूसरी सज़ा करदी जावे, क्योंकि दौरा जज ने सिफ़ारिश की है कि यदि यह लोग पश्चाताप करें तो सरकार दण्ड कम करदे। चारों अभियुक्तों ने पश्चाताप प्रकट कर दिया है।' किन्तु वाइसराय महोदय ने भी एक न सुनी।

इस विषय में माननीय पं० मदनमोहन मालवीय जी ने तथा अन्य एमेम्बरों के कुछ सदस्यों ने वाइसराय से मिलकर भी प्रयत्न किया था कि मृत्यु दण्ड न दिया जावे। इतना होने पर सबको आशा थी कि वायसराय महोदय अवश्यमेव मृत्यु दण्ड की आज्ञा रद्द कर देंगे। इसी हालत में चुपचाप विजया दशमी से दो दिन पहले जेलों को तार भेज दिये गये, कि दया नहीं होगी सब को फांसी की तारीख़ मुकर्रर होगई। जब मुझे सुपरिन्टेन्डेन्ट जेल ने तार सुनाया, मैंने भी कह दिया कि आप अपना कार्य कीजिये। किन्तु सुपरिन्टेन्डेन्ट जेल के अधिक कहने पर कि एक तार दया-प्रार्थना का सम्राट के पास भेज दो, क्योंकि यह उन्होंने एक नियम सा बना रक्खा है कि प्रत्येक फांसी के क़ैदी की ओर से जिसकी दया भिक्षा की अर्ज़ी वाइसराय के यहां से ख़ारिज हो जाती है, वह एक तार सम्राट के नाम से प्रान्तीय सरकार के पास अवश्य भेजते हैं। कोई दूसरा जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट ऐसा नहीं करता। उपरोक्त तार लिखते समय मेरा कुछ विचार हुआ कि प्रीवी कौंसिल इङ्गलैण्ड में अपील की जावे। मैंने श्रीयुत मोहनलाल सक्सेना वकील लखनऊ को सूचना दी। बाहर किसी को वाइसराय की अपील ख़ारिज होने की बात पर विश्वास भी न हुआ। जैसे तैसे करके श्रीयुत मोहनलाल द्वारा प्रीवी कौंसिल में अपील कराई गई। नतीजा तो पहले से ही मालूम था। वहां से भी अपील ख़ारिज हुई। यह जानते हुए कि अङ्गरेज सरकार कुछ भी न सुनेगी, मैंने सरकार को प्रतिज्ञा पत्र क्यों लिखा? क्यों अपीलों पर अपीलें तथा दया प्रार्थनायें कीं? इस प्रकार

के प्रश्न उठते हैं, मेरी समझ में सदैव यही आया है कि राजनीति एक शतरंज के खेल के समान है। शतरंज के खेलने वाले भली-भांति जानते हैं कि आवश्यकता होने पर किस प्रकार अपने मोहरे भी मरवा देना पड़ते हैं। बंगाल आर्डिनैंस के कैदियों के छोड़ने या उन पर खुली अदालत में मुकदमा चलानेके प्रस्ताव जब एसेम्बली में पेश किये गये, तो सरकार की ओर से बड़े जोरदार शब्दों में कहा गया कि, सरकार के पास पूरा सबूत मौजूद है। खुली अदालत में अभियोग चलानेसे गवाहों पर आपत्ति आ सकती है। यदि आर्डिनेन्सके कैदी लेखबद्ध प्रतिज्ञा पत्र दाखिल कर दें कि वे भविष्य में क्रान्तिकारी आन्दोलन से कोई सम्बन्ध न रखेंगे, तो सरकार उन्हें रिहाई देनेके विषय में विचार कर सकती है। बंगाल में दक्षिणेश्वर तथा सोवा बाज़ार बम-केस आर्डिनेन्स के बाद चले। खुफिया विभाग के डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट के कत्ल का मुकदमा भी खुली अदालतमें हुआ, और भी कुछ हथियारों के मुकदमें खुली अदालतमें चलाये गये किन्तु कोई एक भी दुर्घटना या हत्या की सूचना पुलिस न दे सकी काकोरी षडयन्त्र-केस पूरे डेढ़ साल तक खुली अदालतों में चलता रहा। सबूत की ओर से लगभग तीन सौ गवाह पेश किये गये। कई मुखबिर तथा इकबाली खुली तौरसे घूमते रहे, पर कहीं कोई दुर्घटना या किसी को धमकी देनेकी पुलिसने कोई सूचना न दी। सरकारकी इन बातोंकी पोल खोलने की गरजसे ही मैंने लेखबद्ध बंधेज सरकार को दिया। सरकारके कथनानुसार जिस प्रकार बंगाल आर्डिनेन्स के कैदियों के सम्बन्ध में सरकारके पास पूरा सबूत था और सरकार उन में से अनेकों को भयंकर षडयन्त्रकारी दल का सदस्य तथा हत्याओं का जिम्मेदार समझती तथा कहती थी, तो इसी प्रकार काकोरी के षडयन्त्रकारियों के लेखबद्ध प्रतिज्ञा करने पर कोई ग़ौर क्यों न

किया ? बात यह है कि जबरा मारे रोने न देय। मुझे तो भली भांति मालूम था कि संयुक्त प्रान्तमें जितने राजनैतिक अभियोग चलाये जाते हैं, उनके फैसले खुफ़िया पुलिसके इच्छानुसार लिखे जाते हैं। बरेली पुलिस कान्स्टेबिलों की हत्या के अभियोग में नितान्त निर्दोष नवयुवकों को फंसाया गया और सी० आई० डी० वालों ने अपनी डायरी दिखला कर फैसला लिखाया। काकोरी षड्यन्त्र में भी अन्तमें ऐसा ही हुआ। सरकार की सब चालों को जानते हुए भी मैं ने सब कार्य उस की लम्बी लम्बी बातों की पोल खोलने के लिये ही किये। काकोरी के मृत्यु-दण्ड पाये हुओं की दया प्रार्थना न स्वीकार करने का कोई विशेष कारण सरकार के पास नहीं। सरकार ने बंगाल आर्डिनेन्स के कैदियों के सम्बन्धमें जो कुछ कहा था, सो काकोरी वालों ने किया। मृत्यु-दण्ड को रद्द कर देने से देशमें किसी प्रकार की शांति भंग होने अथवा किसी विप्लव हो जाने की सम्भावना न थी। विशेषतया जब कि देश भरके सब प्रकार के हिन्दू मुसलमान एसेम्बली के सदस्यों ने इस की सिफारिश की थी। षड्यन्त्रकारियों की इतनी बड़ी सिफारिश इस से पहले कभी नहीं हुई। किन्तु सरकार तो अपना पासा सीधा रखना चाहती है। उसे अपने वज्र पर विश्वास है। सर विलियम मेरिस ने ही स्वयं शाहजहांपुर तथा इलाहाबाद के हिन्दू-मुस्लिम दंगेके अभियुक्तों के मृत्यु-दण्ड रद्द किये हैं, जिन को कि इलाहाबाद हाईकोर्ट से मृत्यु-दण्ड ही देना उचित समझा गया था और उन लोगों पर दिन दहाड़े हत्या करनेके सीधे सबूत मौजूद थे। ये सजायें ऐसे समय माफ़ की गईं थी, जब कि नित्य नये हिन्दू-मुसलिम दंगे बढ़ते हो जाते हैं। यदि काकोरी के क़ैदियों को मृत्यु-दण्ड माफ़ कर के, दूसरी सजा देनेसे दूसरों का उत्साह बढ़ता तो क्या इसी प्रकार मज़हबी दंगोंके सम्बन्ध में भी नहीं हो

सकता था? मगर वहां तो मामला कुछ और ही है; जो अब भारतवासियों के नरम से नरम दलके नेताओं के भी शाही कमीशनके मुकर्रर होने और उस में एक भी भारतवासीके न चुने जाने, पार्लमेंटमें भारत सचिव लार्ड बर्कनहेडके तथा अन्य मज़दूर दल के नेताओं के भाषणों से भलीभांति समझ में आया है कि किस प्रकार भारतवर्षको गुलामी की ज़न्जीरों में जकड़े रहने की चालें चली जा रहीं हैं।

मुझे प्राण त्यागते समय निराश हो जाना नहीं पड़ रहा है कि हम लोगों के बलिदान व्यर्थ गये। मेरा तो विश्वास है कि हम लोगों की छिपी हुई आहों का ही यह नतीजा हुआ कि लार्ड बर्कनहेड के दिमाग़ में परमात्माने एक विचार उपस्थित किया कि हिन्दुस्तान के हिंदू-मुसलिम झगड़ों का लाभ उठाओ और भारतवर्ष की जंजीरें और कस दो। गये थे रोजा छोड़ने नमाज़ गले पड़ गई। भारतवर्ष के प्रत्येक विख्यात राजनैतिक-दल ने और हिन्दुओं के तो लगभग सभी तथा मुसलमानों के भी अधिकार नेताओं ने एक स्वर हो कर रायल कमीशन की नियुक्ति तथा उस के सदस्यों के विरुद्ध घोर विरोध किया हैं, और अगली कांग्रेस [मद्रास] पर सब राजनैतिक दल के नेता तथा हिंदू मुसलमान एक होने जा रहे हैं। वायसरायने जब हम काकोरी के मृत्युदण्ड वालों की दया-प्रार्थना अस्वीकार की थी, उसी समय मैंने श्रीयुत मोहनलाल जी को पत्र लिखा था कि हिन्दुस्तानी नेताओं को तथा हिन्दू-मुसलमानों को अग्रिम कांग्रेस पर एकत्रित हो हम लोगों की याद मनाना चाहिये। सरकार ने अशफ़ाक उल्ला को रामप्रसाद का दाहिना हाथ करार दिया। अशफाक उल्ला कट्टर मुसलमान हो कर पक्के आर्य-समाजी रामप्रसाद का क्रान्तिकारी दलके सम्बन्ध में यदि दाहना हाथ बन सकते हैं, तब क्या भारतवर्षकी स्वतन्त्रता के नामपर

हिन्दू मुसलमान अपने निजी छोटे छोटे फायदों का ख्याल न करके आपस में एक नहीं हो सकते ?

परमात्मा ने मेरी पुकार सुन ली और मेरी इच्छा पूरी होती दिखाई देती है। मैं तो अपना कार्य कर चुका। मैंने मुसलमानों में से एक नवयुवक निकाल कर भारतवासियोंको दिखला दिया, जो सब परीक्षाओं में पूर्णतया उत्तीर्ण हुआ। अब किसी को यह कहने का साहस न होना चाहिये कि मुसलमानों पर विश्वास न करना चाहिये। पहला तजर्बा था जो पूरी तौर से कामयाब हुआ। अब देशवासियों से यही प्रार्थना है कि यदि वे हम लोगों के फांसी पर चढ़ने से जरा भी दुःखित हुए हों, तो उन्हें यही शिक्षा लेनी चाहिये कि हिंदू—मुसलमान तथा सब राजनैतिक दल एक हो कर कांग्रेस को अपना प्रतिनिधि मानें। जो कांग्रेस तय करे, उसे सब पूरी तौर से मानें और उस पर अमल करें। ऐसा करने के बाद वह दिन बहुत दूर न होगा जब कि अंग्रेजी सरकारको भारतवासियों की मांग के सामने शिर झुकाना पड़े, और यदि ऐसा करेंगे तब तो स्वराज्य कुछ दूर नहीं। क्योंकि फिर तो भारतवासियों को काम करने का पूरा मौका मिल जावेगा। हिंदू—मुस्लिम एकता ही हम लोगों की यादगार तथा अन्तिम इच्छा है, चाहे वह कितनी कठिनतासे क्यों न हो। जो मैं कह रहा हूं वही श्री० अशफाक उल्ला खां वारसी का भी मत है, क्योंकि अपील के समय हम दोनों लखनऊ जेल में फांसी की कोठरियों में आमने सामने कई दिन तक रहे थे। आपस में हर तरह की बातें हुई थीं। गिरफ़्तारीके बाद से हम लोगों की सजा पड़ने तक श्री० अशफाक उल्ला खां की बड़ी भारी उत्कट इच्छा यही थी, कि वह एक बार मुझसे मिल लेते, जो परमात्मा ने पूरी कर दी।

श्री० अशफ़ाक उल्ला खां तो अङ्गरेज़ सरकार से दया—प्रार्थना करने पर राज़ी ही न थे। उन का तो अटल विश्वास यही था कि खुदाबन्द करीम के अलावा किसी दूसरे से दया की प्रार्थना न करना चाहिये, परन्तु मेरे विशेष आग्रह से ही उन्हों ने सरकार से दया प्रार्थना की थी। इस का दोषी मैं ही हूं, जो मैं ने अपने प्रेम के पवित्र अधिकारों का उपयोग कर के श्री० अशफ़ाक़उल्ला खां को उन के दृढ़ निश्चय से विचलित किया। मैं ने एक पत्र द्वारा अपनी भूल स्वीकार करते हुये भ्रातृ द्वितीया के अवसर पर गोरखपुर जेल से श्री० अशफ़ाक़ को पत्र लिख कर क्षमा प्रार्थना की थी। परमात्मा जाने कि वह पत्र उनके हाथों तक पहुंचा भी या नहीं। खैर! परमात्मा की ऐसी ही इच्छा थी कि हम लोगों को फांसी दी जावे, भारत वासियों के जले हुये दिलों पर नमक पड़े, वे विलबिला उठें और हमारी आत्मायें उन के कार्य को देख कर सुखी हों। जब हम नवीन शरीर धारण कर के देश सेवा में योग देने को उद्यत हों, उस समय तक भारतवर्ष की राजनैतिक स्थिति पूर्णतया सुधरी हुई हो। जन साधारण का अधिक भाग सुशिक्षित हो जावे। ग्रामीण लोग भी अपने कर्त्तव्य समझने लग जावें।

प्रीवी कौंसिल में अपील भिजवा कर मैं ने जो व्यर्थ का अपव्यय करवाया उस का भी एक विशेष अर्थ था। सब अपीलों का तात्पर्य यह था कि मृत्यु दण्ड उपयुक्त दण्ड नहीं। क्योंकि न जाने किस की गोली से आदमी मारा गया। अगर डकैती डालने की जिम्मेवारी के खयाल से मृत्यु दण्ड दिया गया तो चीफ कोर्ट के फैसले के अनुसार भी मैं ही डकैतियों का जिम्मेदार तथा नेता था, और प्रान्त का नेता भी मैं ही था।

अतएव मृत्यु दण्ड तो अकेला मुझे ही मिलना चाहिए था
अन्य तीन को फांसी नहीं देना चाहिये था। इसके अतिरि
दूसरी सज़ायें सब स्वीकार होतीं। पर ऐसा क्यों होने लगा
मैं विलायती न्यायालय की भी परीक्षा कर के स्वदेश वासिय
के लिए उदाहरण छोड़ना चाहता था, कि यदि कोई राजनैति
अभियोग चले तो वे कभी भूल कर के भी किसी अंग्रेजी अद
लत का विश्वास न करें। तबियत आये तो ज़ोरदार बयान दे
अन्यथा मेरी तो यही राय है कि अंग्रेजी अदालत के सा
न तो कभी कोई बयान दें और न कोई सफाई पेश करें। काक
षड्यन्त्र के अभियोग से शिक्षा प्राप्त कर लें। इस अभियोग
सब प्रकार के उदाहरण मौजूद हैं। प्रीवी कौंसिल में अप
दाखिल कराने का एक विशेष अर्थ यह भी था कि मैं कुछ स
तक फाँसी की तारीख हटवा कर यह परीक्षा करना चा
था कि नवयुवकों में कितना दम है, और देशवासी कि
सहायता दे सकते है। इस में मुझे बड़ी निराशा पूर्ण असफ
हुई। अन्त में मैं ने निश्चय किया था कि यदि हो
तो जेल से निकल भागूं। ऐसा हो जाने से सरकार को
तीनों फांसी वालोंकी फांसी की सज़ा माफ कर देनी पड़ेगी,
यदि न करते तो मैं करा लेता। मैं ने जेल से भाग
अनेकों प्रयत्न किए, किन्तु बाहर से कोई सहायता न मिल
यही तो हृदय पर आघात लगता है कि जिस देश में मैं ने
बड़ा क्रान्तिकारी आन्दोलन तथा षडयन्त्रकारी दल खड़ा
था, वहां से मुझे प्राण रक्षा के लिये एक रिवालवर तक न
सका। एक नवयुवक भी सहायता को न आ सका। अ
फाँसी पा रहा हूं। फांसी पाने का मुझे कोई भी शोक नहीं
मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं, कि परमात्मा को यही मंज़ूर
मगर मैं नवयुवकों से भी नम्र निवेदन करता हूं कि जबतक

वासियों की अधिक संख्या सुशिक्षित न हो जावे, जब तक उन्हें कर्त्तव्य–अकर्तव्य * का ज्ञान न हो जावे, तब तक वे भूल कर भी किसी प्रकार के क्रान्तिकारी षड्यन्त्रों में भाग न लें। यदि देश सेवा की इच्छा हो तो खुले आन्दोलनों द्वारा यथा शक्ति

---

(१) * भिन्न भिन्न भाषाओं का पूर्ण ज्ञान।

(२) ज्ञान-शास्त्र के स्फुट और आवश्यक सिद्धान्तों का अध्ययन।

(३) किसी एक मानव-समाज के उत्कृष्ट उपासक के साथ रह कर अपने मानसिक तथा आध्यात्मिक विचारोंका सम्यक विकाश

(४) संयम शील।

(५) दृढ़ प्रतिज्ञ।

(६) संकेतात्मक शब्दों को समझने की शक्ति तथा व्युत्पन्न होने की नितान्त आवश्यकता है।

(७) आज्ञाकारिता। किसी तरह की आज्ञा क्यों न हो, चाहे व्यक्तित्व तथा सत्य का भी खून करना पड़े, उस वक्त अपने नियम से कदापि नहीं विचिलत हो !

(८) एकान्त-जीवन, यानी अपने विचारों का विज्ञापन वाणी द्वारा कदापि न करे। किसी से यों कहना—मैं ऐसा करूंगा, यहां पर उसका पतन होता है।

(९) कला विद्। वस्तु-निर्माण, चित्र--निर्माण, शस्त्र–निर्माण में कुशल होना चाहिये।

(१०) गायक और कवि होना चाहिये। भारतीय-षड्यंत्रों के भंडाफोर होने का एक मात्र कारण यही हो सकता है तो भिन्न भिन्न सद्गुणो की अपूर्णता।

कार्य करें अन्यथा उनका बलिदान उपयोगी न होगा। दूसरे प्रकार से इस से अधिक देश सेवा हो सकती है, जो अधिक उपयोगी सिद्ध होगी। परिस्थिति अनुकूल न होने से ऐसे आन्दोलनों से अधिकतर परिश्रम व्यर्थ जाता है। जिनकी भलाई के लिये करो, वही बुरे बुरे नाम धरते हैं, और अन्त में मन ही मन कुढ़ कुढ़ कर प्राण त्यागने पड़ते हैं।

देशवासियों से यही अन्तिम विनय है कि जो कुछ करें, सब मिल कर करें, और सब देश की भलाई के लिये करें। इसी से सब का भला होगा। बस!

भरते 'बिस्मिल' 'रोशन' 'लहरी' 'अशफाक़' अत्याचार से।
होंगे पैदा सैकड़ों इन के रुधिर की धार से॥

रामप्रसाद 'बिस्मिल' गोरखपुर डिस्ट्रिक्ट जेल

चन्द राष्ट्रीय अशआर और कवितायें

मेरी यह इच्छा हो रही है कि मैं उन कविताओं में से भी चन्द का यहां उल्लेख कर दूं, जो कि मुझे प्रिय मालूम होती हैं और मैं ने यथा समय कंठस्थ की थीं।

—रामप्रसाद 'बिस्मिल'

(१)

भूखे प्राण, तजैं भले, केहरि खरु नहिं खाहिं।
चातक प्यासे ही रहैं, विन स्वांती न अघाहिं॥
विन स्वांती न अघाहिं हंस मोती ही खावे।
सती नारि पतिव्रता नेक नाह चित्त डिगावे॥
तिमि 'प्रताप' नहिं डिगे होहिं चहें सब किन रूखे।
अरि सन्मुख नहिं नवें फिरें चहें बन २ भूखे॥

(२)

चाह नहीं है सुर बाला के गहनों में गूंथा जाऊं।
चाह नहीं है प्यारी के गल पडूं हार मैं ललचाऊं॥
चाह नहीं है राजाओं के शव पर मैं डाला जाऊं।
चाह नहीं है देवों के शिर चढ़ूं भाग्य पर इतराऊं॥
मुझे तोड़ कर हे वनमाली उस पथ में तू देना फेंक।
मातृभूमि हितशीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक॥

(२)

भारत जननि तेरी जय हो विजय हो।
तू शुद्ध और बुद्ध ज्ञान की आगार,
तेरी विजय सूर्य माता उदय हो॥
हों ज्ञान सम्पन्न जीवन सुफल होवे,
सन्तान तेरी अखिल प्रेममय हो॥

आयें पुनः कृष्ण देखें दशा तेरी,
सरिता सरों में भी बहता प्रणय हो ॥
सावर के संकल्प पूरण करें ईश,
विघ्न और बाधा सभी का प्रलय हो ॥
गांधी रहें और तिलक फिर यहां आवें,
अरविंद, लाला महेन्द्र की जय हो ॥
तेरे लिये जेल हो स्वर्ग का द्वार,
बेडी की झन झन बीणा की लय हो ॥
कहता खलल आज हिन्दू—मुसलमान,
सब मिल के गावो जननि तेरी जय हो ॥

[४]

कोउ न सुख सोया कर के प्रीति।
सुन्दर कली सेमर की देखी; सुअनाने मन मोहा। कर के प्रीति० ।
मारी चोंच भुआ जब देखा पटक पटक शिर रोया। करके प्रीति०॥
सुन्दर कली कमल की देखी,भँवरा का मन मोहा। करके प्रीति० ।
सारी रैन सम्पुट में बीती, तड़प तड़प जी खोया। करके प्रीति० ॥

[५]

तू वह मयं खूबी है अय जलवये जानाना ।
हर गुल है तेरा बुलबुल हर शमा है परवाना ॥
सर मस्ती में भी अपना साक़ी के क़दम पर हो ।
इतना तो करम करना अय लग़ज़िशे मस्ताना ॥
यारब इन्हीं हाथों से पीते रहें मस्ताना ।
यारब वही साक़ी हो यारब वही पैमाना ॥
आंखें हैं तो उसकी हैं क़िस्मत है तो उसकी है ।
जिसने तुझे देखा है अय जलवये जानाना ॥
छेड़ो न फ़िरिश्ते तुम ज़िक्र ग़मे जानाना ।

क्यों याद दिलाते हो भूला हुआ अफ़साना ॥
यह चश्मे हक़ीक़ी भी क्या तेरे सिवा देखें ।
सिजदे से हमें मतलब काबा हो या बुतख़ाना ॥
साक़ी को दिखा देंगे अन्दाज़ फ़क़ीराना ।
टूटी हुई बोतल है टूटा हुआ पैमाना ॥

[६]

मुर्गे दिल मत रो यहां आंसू बहाना है मना ।
अंदलीबों को क़फ़स में चहचहाना है मना ॥
हाय जल्लादी तो देखो कह रहा सय्याद यह ।
वक्त ज़िबहा बुलबुलों को तड़फड़ाना है मना ॥
वक्त ज़िबहा जानवर को देते हैं पानी पिला ।
हज़रते इन्सान को पानी पिलाना है मना ॥
मेरे खूं से हाथ रंग कर बोले क्या अच्छा है रंग ।
अब हमें तो उम्र भर मेंहदी लगाना है मना ॥
अय मेरे ज़ख्मे जिगर नासूर बनना है तो बन ।
क्या करूं इस ज़ख़्म पर मरहम लगाना है मना ॥
खूने दिल पीते हैं असग़र खाते हैं लख्ते जिगर ।
इस क़फ़स में कैदियों को आबो दाना है मना ॥

(७)

अरूजे काम याबी पर कभी तो हिन्दुस्तां होगा ।
रिहा सैय्याद के हाथों से अपना आशियां होगा ॥
चखायेंगे मजा बरबादिये गुलशन का गुलचो को ।
बहार आयेगी उस दिन जब अपना बागवां होगा ॥
वतनकी आबरू का पास देखें कौन करता है ।
सुना है आज मक़तल में हमारा इम्तहां होगा ।
जुदा मत हो मेरे पहलू से ऐ दर्दे वतन हरगिज ।

न जाने बाद मुर्दन मैं कहां और तू कहां होगा ॥

यह आये दिन की छेड़ अच्छी नहीं ऐ ! खंजरे कातिल !

बता कब फैसला उन के हमारे दर्मियां होगा ॥

शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले।

वतन पर मरने वालों का यही बाकी निशा होगा ॥

इलाही वह भी दिन होगा जब अपना राज्य देखेंगे।

जब अपनी ही जमीं होगी और अपना आसमां होगा ॥

(८)

इम्तहां सब का कर लिया हम ने,
सारे आलम को आजमा देखा।
नजर आया न कोई यार ज़मानेमें अज़ीज़,
आंख जिस की तरफ़ उठा देखा ॥
कोई अपना न निकला महरमे राज़,
जिस को देखा सो बेवफ़ा देखा ॥
अलग़रज़ सब को इस ज़माने में,
अपने मतलब का आशना देखा ॥

अलीपुर बम्ब केस के अभियुक्त

(श्री ओमप्रकाशजी के काले पानी जाते समय के उद्गार जिनको श्री रामप्रसाद बिस्मिल काल कोठरी के अन्दर गाया करते थे)

हैफ़ जिसपै कि हम तैय्यार थे मर जाने को।
यकायक हम से छुड़ाया उसी काशाने को ॥
आस्मां क्या यही बाक़ी था ग़ज़ब ढाने को।
लाके मुर्बत में जो रक्खा हमें तड़फाने को ॥
क्या कोई और बहाना न था तरसाने को ॥ १ ॥

फिर न गुलशन में हमें लायेगा सय्याद कभी ।
क्यों सुनेगा तू हमारी कोई फरियाद कभी ॥
याद आवेगा किसे यह दिले नाशाद कभी ।
हम भी इस बाग़ में थे कैद से आज़ाद कभी ॥
अब तो काहे को मिलेगी यह हवा खाने को ॥ २ ॥
दिल फिदा करते हैं कुर्बान जिगर करते हैं ।
पास जो कुछ है वह माता की नज़र करते हैं ॥
ख़ाने वीरान कहां देखिये घर करते हैं ।
खुश रहो अहले वतन हम तो सफ़र करते हैं ॥
जाके आबाद करेंगे किसी वीराने को ॥ ३ ॥
देखिये कब यह असीराने मुसीबत छूटें ।
मादरेहिन्द के अब भाग खुलें या फूटें ॥
देश सेवक सभी अब जेल में मूंजें कूटें ।
आप यहां ऐश से दिन रात बहारें लूटें ॥
क्यों न तरजीह दें इस जीने से मर जाने को ॥ ४ ॥
कोई माता की उम्मीदों पे न डाले पानी ।
जिन्दगी भर को हमें भेजदे कालेपानी ॥
मुंह में जल्लाद हुए जाते हैं छाले पानी ॥
आबे खंजर का पिला करके दुआले पानी ॥
मर न क्यों जांय हम इस उम्र के पैमाने को ॥ ५ ॥
हम भी आराम उठा सकते थे घर पर रहकर ।
हमको भी पाला था मां बाप ने दुख सह सह कर ॥
वक्ते रुख़सत उन्हें इतना भी न आये कहकर ।
गोद में आंसू कभी टपके जो रुख से बहकर ॥
तिफ़्ल उनको ही समझ लेना जो बहलाने को ॥ ६ ॥
देश सेवा का ही बहता है लहू नस नस में ।
अब तो खा बैठे हैं चित्तौड़ के गढ़ की कसमें ॥

सरफरोशी की अदा होती हैं योंही रसमें।
भाई ख़ंजर से गले मिलते हैं सब आपस में॥
बहिनें तैयार चिताओं में हैं जल जाने को ॥ ७ ॥
नौजवानों जो तबियत में तुम्हारी खटके।
याद कर लेना कभी हमको भी भूले भटके॥
आप के आज बदन होवें जुदा कट कट के।
और सद चाक हो माताका कलेजा फटके॥
पर न माथे पे शिकन आयें क़सम खाने को ॥८॥
अपनी क़िस्मत में अज़ल से ही सितम रक्खा था।
रंज रक्खा था महिन रक्खा था ग़म रक्खा था॥
किसको परवाह थी और किसमे यह दम रक्खा था।
हमने जब वादिये गुरबत में क़दम रक्खा था॥
दूर तक यादं वतन आई थी समझाने को ॥९॥
अपना कुछ ग़म नहीं लेकिन यह ख्याल आता है।
मादरे हिन्द पे कब तक जवाल आता है॥
हरदयाल आता है योरुप से न अजीत आता है।
कौम अपनी पै तो रो रो के मलाल आता है॥
मुन्तजिर रहते हैं हम खाक में मिल जानेको ॥१०॥
मैकदा किसका है यह जाने सबू किस का है।
वार किसका है मेरी जां यह गुलू किसका है॥
जो बहे कौम की खातिर वह लहू किस का है॥
आसमां साफ़ बता दे तू उदू किस का है।
क्यों नये रंग बदलता है यह तड़फाने को ॥११॥
दर्द मन्दों से मुसीबत की हवालत पूछो।
मरने वालों से ज़रा लुत्फ़ शहादत पूछो॥
चश्मे मुश्ताक से कुछ दीद की हसरत पूछो।
सोज़ कहते हैं किसे पूछो तो परवाने को ॥१२॥

बात तो जब है कि इस बात की जिद्दें ठाने।
देश के वास्ते कुर्बान करें सब जाने॥
लाख समझायें कोई एक न उसकी माने।
कहता है खून से मल अपना गरेबां साने॥
नासहा आग लगे तेरे इस समझाने को॥१३॥
न मयस्सर हुआ राहत में कभी मेल हमें।
जान पर खेल के भाया न कोई खेल हमें॥
एक दिन को भी न मंजूर हुई बेल हमें।
याद आयेगा बहुत लखनऊ का जेल हमें।
लोग तो भूल हो जायेंगे इस अफसाने को॥१४॥
अब तो हम डाल चुके अपने गळे में झोली।
एक होती है फ़कीरों की हमेशा बोली॥
खून से फाग रचायेंगी हमारी टोली।
जब से बंगाल में खेले हैं कन्हैया होली॥
कोई उस दिन से नहीं पूछता बरसाने को॥१५॥
नौजवानों यही मौक़ा है उठो खुल खेलो।
ख़िद्‌मते कौम में जो आवे बला तुम झेलो॥
देश के सदक में माता को जवानी देदो।
फिर मिलेगी न ये माता की दुआयें लेलो॥
देखें कौन आता है इरशाद बजा लाने को॥१६॥

(१०)

न किसी की आंख का नूर हूं न किसी के दिल का क़रार हूं।
जो किसी के काम न आ सकूं वह मैं एक मुश्ते गुबार हूं॥
न दवाये दर्दे जिगर हूं मैं न किसी की मीठी नज़र हूं मैं।
न इधर हूं मैं न उधर हूं मैं न शकेब हूं न क़रार हूं॥
मैं नहीं हूं नग़मये जां फ़िज़ां मेरा सुन के कोई करेगा क्या।

मैं बड़े वियोग की हूं सदा ओ बड़े दुखी की पुकार हूं ॥
न मैं किसी का हूं दिलरुबा न किसी के दिल में बसा हुआ।
मैं ज़मीं की पीठ का बोझ हूं औ फलक के दिल का गुबार हूं ॥
मेरा बख़्त मुझ से बिछड़ गया मेरा रंग रूप बिगड़ गया।
जो चमन ख़िज़ा से उजड़ गया मैं उसी की फसले बहार हूं ॥
पये फ़ातिहा कोई आये क्यों कोई शमा लाके जलाये क्यों।
कोई चार फूल चढ़ाये क्योंकि मैं बेकसो का मज़ार हूं ॥
न अख़्तर से अपना हबीब हूं न अख़्तरों का रक़ीब हूं।
जो बिगड़ गया वह नसीब हूं जो उजड़ गया वह दयार हूं ॥

अच्छे दिन आने वाले हैं ॥१६॥

ऐ मादरे हिन्द न हो गमगीन अच्छे दिन आने वाले हैं।
आज़ादी का पैगाम तुझे हम जल्द सुनाने वाले हैं ॥
मां तुझको जिन जल्लादों ने दी हैं तकलीफ जईफी में।
मायूस न हो मगरूरों को हम मज़ा चखाने वाले हैं ॥
कमज़ोर हैं और मुफलिस हैं हम, गो कुंज क़फसमें बेबस हैं
बेबस हैं लाख मगर माता, हम आफत के परकाले हैं ॥
हिन्दु और मुसलमा मिल करके, चाहे जो कर सकते हैं।
ऐ चर्ख़ कुहन हुशियार हो तू, पुरशोर हमारे नाले हैं ॥
मेरी रूह को करना कैद क़फस इनकाम से बाहर है उनके।
आज़ाद हैं अपना दिल शैदा, गो लाख ज़ुबां पर ताले हैं ॥
मगलूब जो हैं होंगे गालिब-महकूम जो हैं होंगे हाकिम।
सदा एक सा वक्त रहा किसका, कुदरत के तौर निराले हैं ॥
आज़ादी के मतवालों ने यह कैसा मन्त्र चलाया है।
लरज़ा है जिस से अर्श समां, सरकार की जानके लाले हैं ॥

हसरते दिल १२

देखना है किस कदर दम खंजरे कातिल में है।
अब भी यह अरमान यह हसरत दिले बिस्मिलमें है॥
गैर के आने न पूछो इस में है एक खास राज।
फिर बता देंगे तुम्हें जो कुछ हमारे दिल में है॥
खींच कर लाई है सबको क़त्ल होने की उमीद।
आशिकों का आज जमघट कूचये कातिल में है॥
फ़िरते हो क्यों हाथ में चारों तरफ़ खंजर लिये।
आज है यह क्या इरादा आज यह क्या दिलमें है॥
एक से करता नहीं क्यों दूसरा कुछ बातचीत।
देखता हूं मैं जिसे वह चुप तेरी महफिल में है॥
उन पर आफत आयगी एक रोज़ मर ही जायंगे।
वह तो दुनिया में नहीं जो कूचये कातिल में है॥
एक जानिब है मसीहा एक जानिब है कज़ा।
किस कशामश में पड़ी है जान किस मुश्किलमें है॥
जख्म खाकर भी उसे है जख्म खाने की हवश।
हौसिला कितना तड़फने का तेरे बिस्मिल में है॥

(१३)

आओ आओ भाईयो दिल खोल कर मातम करें।
हम शहीदाने वतन की बेकसी का ग़म करें॥
साथ वालों ने खुशी से जान देदी मुल्क पर।
रहे गये इस फ़िक्र में, बैठे हुये हम क्या करें॥
राहे हक़ में जो मरे ज़िन्दा हैं वह ग़म उनका क्या ?
जीते जी हम मर गये जीने का अपना ग़म करें॥
मानने की जो न हो वह बात क्योंकर मानलें।
ग़ैर मुमकिन हम उदू के सामने सर खम करें॥

आप ही खिल्वत में काटें अपने भाई का गला।
आप ही फिर बैठ कर अहबाब में मातम करें॥
जब यह हालत हो हमारे, मुल्क के इफ़राद की।
जुल्म से अग़ियार के फ़िर चश्म क्या पुरनम करें॥
बहुत रोये अब तो 'बिस्मिल' रोने से होता क्या?
काम इन कैसा करें अब आहोनाला कम करें॥

(१४)

मुहब्बाने वतन होंगे हज़ारों वे वतन पहिले।
फलेगा इण्डिया पीछे भरेगा एण्डमन पहिले॥
मुसीबत आ कयामत आ यहां जंजीरो ज़िन्दा हैं।
यहां तैयार बैठे हैं ग़रीवाने वतन पहिले॥
जमीने हिन्द भी फूले फलेगी एक दिन लेकिन।
मिलेंगे ख़ाक में लाखों हमारे गुल बदन पहिले॥

(१५)

हर्फ़ शिक्वा आशिकी में लब पै लाना है मना।
सामने बेदर्द के आंसू बहाना है मना॥
क़ातिले सफफाक का मक़तल में हुक्मे आम है।
आशिके जांबाज को सरका हिलाना है मना॥
है यह बुलबुल को हिदायत गुल की अज़रूये अदब।
शाखे गुल पर बैठ कर सर का हिलाना है मना॥
बद नसीबी देखिये मुझ आशिके नाकाम की।
उसके कूचे से गुज़र कर मेरा जाना है मना॥
जब हँसी आई मुझे तो यह भी फ़रमाने लगे।
आशिकों को इश्क़ में हंसना हंसाना है मना॥

(१६)

देश हित पैदा हुए हैं देशपर मर जायेंगे !
मरते मरते देशको ज़िन्दा मगर कर जायेंगे ॥
हमको पीसेगा फ़लक चक्की में अपनी कब तलक ।
खाक बनकर आंख में उसकी बसर हो जायेंगे ॥
कर वही बर्गे खिज़ा को बादे सर सर दूर क्यों ।
पेशवाए फ़स्ले गुल है खुद समर कर जायेंगे ॥
खाक में हम को मिलाने का तमाशा देखना ।
तुख्मरेजी से नये पैदा शजर कर जायेंगे ॥
नौ नौ आंसू जो रुलाते हैं हमें उनके लिये ।
अश्क के सैलाब से बरपा हशर कर जायेंगे ॥
गर्दिशे गरदाब में डूबे तो परवा नहीं ।
बहरे हस्ती में नई पैदा लहर कर जायेंगे ॥
क्या कुचलते हैं समझ कर वह हमें बर्गे हिना ।
अपने खूं से हाथ उनके तर बतर कर जायें ॥
नक़शे पा हैं क्या मिटाता तू हमें पारे फ़लक ।
रहबरी का काम देंगे जो गुज़र कर जायेंगे ॥

(१७)

उरियानी न हैरानी न थे पाव में छाले ।
हम भी थे कभी आह बड़े नाजों के पाले ॥
जुल खाया मिटे उड़ गई आजादी ओ राहत ।
अल्ला यह दिन अपने तो दुश्मन पै भी न डाले ॥
मारा है मिटाया है हमें आह उन्हीं ने ।
कर बैठे थे हम जानो जिगर जिनके हवाले ॥
हम ने तो हमेशा तेरी खुशनूदी ही चाही ।
खुद बिगड़े मगर काम तेरे सारे सम्भाले ॥

उसका यह सिला हमको मिला उफरी मुहब्बत ।
बर्बाद किया डाल दिये जान के लाले ॥
बेबस हुए जलील हुए मिट तो चुके हम ।
अब और क़यामत भी जो ढाना हो सो ढाले ॥
सौगन्ध हैं तुझको तेरे उस जोरो जफा की ।
जी भर के हमें जितना सताना हो सता ले ॥
क़िस्मत का कभी अपने भी चमकेगा सितारा ।
हम भी कभी देखेंगे आजादी के उजाले ॥
बदलेगी लहर तब तेरे सिर चढ़ के कहेगी ।
था जहर पैं केंचुल से यह लाचार थे काले ॥

(१८)

पूछते क्या हो कि क्या अरमां हमारे दिल में है ।
कुछ वतन की याद में आहे दमें 'बिसमिल' में है ॥
साकियाने बाग़ आलम सब रिहाई पा चुके ।
एक हमी आफत के मारे कैद की मुशकिल में हैं ॥
देश वालो दामने हिम्मत कभी छोड़ो नहीं ।
इम्तहाने इश्क़ को हम पहिली ही मंजिल में हैं ॥
आही पहुचेगी किनारे किश्तीए भारत कभी ।
कोई दममें देखना हम दामने साहिल में हैं ॥

(१९)

मिट गया जब मिटने वाला फिर सलाम आया तो क्या ?
दिलकी बरबादी के बाद उनका पयाम आया तो क्या ?
काश अपनी जिन्दगी में हम यह मञर देखते ।
यूं सरे तुरबत कोई महशर खराम आया तो क्या ?
मिट गईं सारी उम्मीदें मिट गये सारे ख़याल ।
उस घड़ी गर नामावर ले कर पयाम आया तो क्या ?

ऐ! दिले नाकाम मिट जा अब तू कूचे यार में।
फिर मेरी नाकामियों के बाद काम आया तो क्या?
आखिरी शबदीद से काबिल थी 'बिस्मिल' की तड़प।
सुबह दम गर कोई बालाये बाम आया तो क्या?

[२०]

गैर हालत है मेरी देखने आये कोई।
कौन है किस्स यह ग़म जिस को सुनाये कोई॥
रोके हर एक से कहती है यें भारत माता।
मुझ को कमजोर समझ कर न सताये कोई॥
दूध बचपन में सपूतों को पिलाया मैं ने।
अब ज़ईफ़ी मे दवा आके पिलाये कोई॥
बाप को बेटे से है भाई को भाई से मलाल।
रंज आपस के जो हैं इनको मिटाये कोई॥
ख्वाब ग़फ़लत में पड़े सोते हैं जो अहले वतन।
होश में लाये कोई इनको जगाये कोई॥
क्या गिनाने कोई अनफ़ास है तेंतीस करोड़।
काम एक मेरी मुसीबत में तो आये कोई॥

यह ज़माने की है खूबी यह मुकद्दर की है बात।
चैन से सोये कोई चैन न पाये कोई॥
फिरन बिस्मिल रहे दुनियामें कोई ऐ! "बिस्मिल"।
फिर न आज़ार ज़माने के उठाये कोई॥

[२१]

मानस हौं तो वही रसखान बसौं ब्रज गोकुल गांव के ग्वारन।
जो पशु हो तो कहा बस मेरो चरो नित नन्द की धेनु मँझारन॥
पाहन हो तो वही गिरि को जो भयो ब्रज छत्र पुरन्दर कारन।

जो खग हौं तो बसेरो करौं उन कालिन्दी कूल कदम्बको डारन ॥

+ + + + + +

या लकुटी अरु कामरिया पर राज्य तिहुं पुर को तजि डारों ।
आठहु सिद्धि नवौ निधि को सुख नन्द को धेनु चराय बिसारों ॥
रसखानि सदा इन नैनन सों ब्रज के बन बाग तड़ाग निहारों ।
कोटिन हू कलधौत के धाम करील के कुञ्जन ऊपर वारों ॥

विशेष-परिचय।

श्री रामप्रसाद "बिस्मिल"
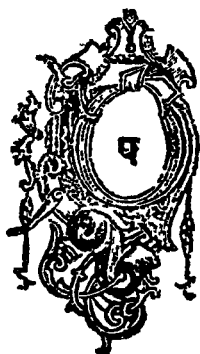
राधीनता के इस युगमें दिव्य आलोक को धारण कर न जाने वे कहां से आये, अपने कल्पना राज्य में स्वर्गलोक की वीथियों का निर्माण किया और अन्त में विश्व को आभा की एक झलक दिखा कर आप ने प्यारे मालिकके पास चले गये उस दिन विश्व ने विमुग्ध नेत्रों से उनकी ओर देखा, श्रद्धा और भक्ति के फूल भी चढ़ाये। उस दिन जब उस मोहिनी मूर्ति की मद भरी आंखें सदा के लिये बन्द हो गई थीं, तो उनकी एक झलक मात्र के लिये जन समूह पागल सा हो उठा था। धनिकों ने रुपये लुटाये; मेवे वालों ने मेवा से सत्कार किया, माता और बहिनों ने छतों पर से फूलों की वर्षा की और जनता ने 'वन्दे मातरम्' के उच्च निनाद के साथ उसका स्वागत किया, उस प्यारे के उस दिन वाले निराले वेश को देख कर मातायें रो पड़ीं, वृद्ध सिसकियां लेने लगे, युवकों के तरुण हृदय प्रति हिंसा की आग से जल उठे और बालक झुक झुक कर प्रणाम करने लगे।

मैनपुरी जिले के किसी गांव में संवत् १९५४ के लगभग आप का जन्म हुआ था, किन्तु बाद में आप के पिता मुरलीधर सपरिवार शाहजहांपुर में आकर रहने लगे और अन्त तक यही स्थान हमारे चरित्र बालक का लीला क्षेत्र रहा। अस्तु उर्दू की शिक्षा पाने के बाद माता पिताने स्थानीय अङ्गरेजी स्कूलमें

भर्ती करा दिया था। उन दिनों आपका जीवन कुछ विशेष अच्छा न था, किन्तु इसी बीच में आर्य समाजके प्रसिद्ध स्वामी सोमदेव से आपका परिचय हो गया। बस यहीं से जीवन ने पलटा खाया और वे स्वामीजी के साथ साथ आर्यसमाज के भी भक्त बन गए। आप स्वामीजीको गुरूजी कहा करते थे। यह भी कहा था कि देश सेवाके भाव पहले-पहल आपको स्वामीजी से ही मिले थे। अस्तु, सन् १९१५ के विराट विप्लवायोजनमें विफल हो जानेके बाद भी क्रान्तिकारी लोग एक दम निराश न हुए, वरन उन्होंने मैनपुरी में केन्द्र बनाकर फिर से कार्य आरम्भ कर दिया। श्री० गेंदालाल दीक्षित की अध्यक्षता मे बहुत दिनों तक काम होते रहनेके बाद अन्तको इसका भी भेद खुल गया और फिर गिरफ्तारियों का बाजार गर्म हो उठा। दलके बहुतसे लोगों के पकड़े जानेपर भी मुख्य कार्यकर्ताओं मे से कोई भी हाथ न आ सका। उस समय आप अङ्गरेजी की दसवी कक्षामें थे, जोरोंसे धरपकड़ होते देख अपनी गिरफ्तारीका हाल सुनकर आप फ़रार हो गये।

मैनपुरी विप्लव दलके नेता श्री० गेंदालाल के ग्वालियर में गिरफ्तार हो जानेपर, उन्हें जेलसे छुडाने के विचारसे आपने १९ वर्ष की अवस्थामें अपने साथके पन्द्रह और विद्यार्थियोंको लेकर पहली डकैती की थी। इस पहले ही प्रयास में उन्होंने जिस दृढ़ता तथा साहस से काम लिया था, उसे देख कर यह कहना पड़ता है कि वे स्वभाव से ही मनुष्योंके नेता थे।

प्रायः सभी अनुभवी सदस्य पकड़े जा चुके थे। अस्तु स्कूल के पन्द्रह विद्यार्थियों को लेकर ही आप अपने निश्चय पर चल दिये, पिता से कहा "मेरे एक मित्र की शादी है, वे गाड़ी ले

जाना चाहते हैं। गाड़ीवान उन्हीं का रहेगा और मुझे भी उसमें जाना पड़ेगा।"

सरल स्वभाव पिता ने गाड़ी दे दी। उन्हें क्या पता कि यह कैसी शादी है। सन्ध्या समय प्रस्थान कर कुछ रात बीतने पर एक स्थान पर गाड़ी रोक दी गई। निश्चित स्थान वहां से १० मील की दूरी पर था। एक आदमी को गाड़ी पर छोड़कर, शेष सभी ही साथी पैदल ही चल दिये। किन्तु उस दिन अंधेरे में मार्ग भूल जाने से वह गाँव न मिला। निराश हो सब के सब गाड़ी के पास वापस आए, दूसरे दिन थोड़े ही प्रयास के बाद वह स्थान मिल गया। अंधेरी रात में चारों ओर निस्तब्धता का राज्य था। निद्रा के मोहक जाल में सारा संसार बेसुध सोया पड़ा था, तीन लड़कों को मकान की छत पर चढ़ने की आज्ञा हुई। लाड़ प्यार से पाळे गये स्कूल के उन लड़कों ने काहे को अभी ऐसे भयानक कार्य में भाग लिया था देर करते देख कप्तान ने जोरसे कहा—"यदि ऐसा ही था तो चले ही क्यों थे।" इस बार साहसकर वे लोक मकानका छतपर चढ़ गये आज्ञा हुई अन्दर कूद कर दरवाजा खोल दो।" किन्तु यह काम और भी कठिन था। कप्तान ने फिर कहा—"जल्दी करो देर करने से विपद की सम्भावना है" इसी प्रकार तीन बार करने पर भी कोई नीचे न उतर सका। वे लोग इधर उधर देख ही रहे थे कि एक जोर की आवाज के साथ बन्दूक की गोली से एक का साफा नीचे आ गिरा। इस बार तीनों विना कुछ सोचे विचारे मकान में कूद पड़े और अन्दर से मकान का दरवाजा खोल दिया। सब लोगों को यथा स्थान खड़ा कर स्वयं छत पर आदेश देने लगे। डकैती समाप्त भी न हो पाई थी कि गांव में खबर हो गई और चारो ओर से ईंटे चलने लगी। यह देख कर लड़के घबड़ा गए। आप ने पुकार कर कहा

'तुम लोग अपना काम करते रहो, यदि कोई भी काम से हटा तो मेरी गोली का निशाना बनेगा।' इस में एक ने नीचे से पुकार कर कहा—"कप्तान ईंटों के कारण कुछ करते नहीं बनता।" आप ने जिस ओर से ईंटें आ रही थीं, उधर जाकर कहा - ईंटें बन्द करदो वरना गोलीसे मारे जाओगे। इतनेमें एक ईंट आंखपर आकर लगी, देखते देखते कपड़े खूनसे तर हो गए उस समय उस साहसी वीरने आंखकी कुछ परवा न कर गोली चलाना शुरू कर दिया,फायरों के बाद ईंटें बन्द हो गईं। इधर डकैती भी खत्म हो चुकी थी। अस्तु, सब लोग वापस चल दिये। पहले दिन के थके तो थे ही, आधी दूर चलकर ही प्रायः सब लोग बैठने लगे। बहुत कुछ साहस बांधने पर उठकर चले ही थे कि एक विद्यार्थी बेहोश होकर गिर गया। कुछ देर बाद होश आनेके बाद उसने कहा—मुझ में अब चलने की शक्ति नहीं है तुम लोग मेरे लिये अपने आपको संकट में क्यों फंसाते हो। मेरा सर काट कर लेते जाओ। अभी कुछ रात बाकी है तुम लोग आसानी से पहुंच सकते हो। सर-काट लेने पर मुझे कोई भी पहचान न सकेगा और इस प्रकार सब लोग बच सकोगे। साथी की इस बात से सबकी आंखों में आँसू आ गये। चोट लगने के कारण उस समय हमारे नायक की आंख से काफी खून निकल चुका था, किन्तु फिर भी और लोगों से आगे चलने को कहकर आपने उसे अपनी पीठ पर उठाया और ज्यों त्यों कर चल दिये। जिस स्थान पर गाड़ी खड़ी थी, उसके थोड़ी दूर रह जाने पर आपने विद्यार्थी को एक पेड़ के नीचे लिटा दिया और स्वयं गाड़ी के पास जाकर जो एक आदमी उसकी निगरानी के लिये रह गया था उसे साथी को लेने के लिये भेजा मकान पर पिता के पूछने पर कह दिया बैल बिगड़ गये, गाड़ी उलट गई और मेरे चोट आ गई। जिस समय फरार होकर आप एक स्थान से दूसरे स्थान पर भागते फिर रहे थे, उस समय की

कथा भी बड़ी करुणाजनक है। उस बीच में कई बार आपको मौत का सामना करना पड़ा था। उस दिन तो पास में पैसा न रह जाने के कारण आपने घास तथा पत्तियां खाकर ही अपने जीवन का निर्वाह किया था नेपाल, आगरा तथा राजपूताना आदि स्थानों में घूमते रहने के बाद एक दिन अखबार में देखा के (Royal Proclamation) सरकारी ऐलान में आप:पर से भी वारण्ट हटा लिया गया था, बस फिर आप घर वापस आ गए और रेशम के सूतका कारखाना खोलकर कुछ दिन तक आप घर का काम काज देखते रहे। किन्तु जिस हृदय में एक बार आग लग चुकी, उसे फिर चैन कहां अस्तु—फिरसे दल का सङ्गठन प्रारम्भ कर दिया।

"एक बार किसी स्टेशन पर जारहे थे। कुली बक्स लेकर पीछे २ चलरहा था ठोकर खाकेर गिर पड़ा। बहुत सी कारतूसों के साथ कई एक रिवालवर बक्स मे से निकल कर प्लेटफारम पर गिर पड़े कुली पर एक सूट-बूट धारी साहब बहादुर द्वारा बुरी तौर मार पड़ती देख कर, पास खड़े हुए दारोगा साहब को दया आगई। कुली को क्षमा करने की प्रार्थना कर; बेचारे स्वयं ही सारा सामान बक्स के अन्दर भरने लगे। उस दिन यदि आप तनिक भी डर जाते और इस बुद्धिमानी से काम न लेते तो निश्चय ही गिरफ्तार हो गये थे।:-

उनमें असाधारण शारीरिक बल था। घोड़ा चढ़ने, साइकिल चलाने और तैरने में वे पूरे पण्डित थे। थकना किसे कहते हैं, सो तो वे जानते ही न थे। साठ साठ मील बराबर चल कर भी आगे चलने की हिम्मत रखते थे। व्यायाम और प्राणायाम वे इतना करते थे कि देखने वाले दंग रह जाते थे। हिन्दी और उर्दू के अतिरिक्त वे अंग्रेजी तथा बंगला भी जानते

थे। उन्होंने कई किताबें भी हिन्दी में लिखीं तथा 'प्रभा' आदि मासिक पत्रों में 'अज्ञात' के नामसे इनके कई लेख भी निकले। इन्होंने मैनपुरी षड्यन्त्र के सम्बन्धमें एक पुस्तक लिखी थी, परन्तु कुछ कारणोंसे वह पुस्तक प्रकाशित होनेके पहिले ही जला दी गई। लिखने की अपेक्षा इन में व्याख्यान देनेकी शक्ति और भी अधिक अच्छी थी। इनका व्याख्यान बड़ा जोशीला और प्रभावोत्पादक होता था। असहयोग के जमानेमें श्री अशफ़ाक के साथ हरदोई, शाहजहांपुर, बरेली और पीलीभीत ज़िलेमें घूम घूम कर इन्होंने पचासों जगह व्याख्यान दिये थे। क्रान्तिकारी आन्दोलन एक प्रकारसे इनके जीवनका आधार था। हवालातके समय अगर कोई व्यक्ति बाहर से मिलने आता तो ये अक्सर पूछ बैठते, 'क्यों जी, क्रान्तिकारी आन्दोलन जोरों पर है या नहीं? क्रान्तिकारी कार्य उन्हें कितना प्रिय था, उसमें कितनी दिलचस्पी थी, वह इससे भी अनुमान किया जा सकता है, ये यों रोज नियमित रूपसे हवन अवश्य करते थे, और कामों के कारण उनके हवन-कार्यमें कभी व्यतिक्रम नहीं होने पाता, परन्तु क्रान्तिकारी कामों के सामने गायत्री और हवन तकको वे झट छोड़ देते थे। श्री रामप्रसादजी को यों गुस्सा कम आता था, पर जब वे क्रोधित होते, तो इनका क्रोध प्रलयानलका रूप धारण कर लेता! अभागे खुफिया के चर ही अधिकतर इनके क्रोध के शिकार होते थे। एक दफे, तो इन्हों ने एक खुफिया को इतना पीटा कि वह बेचारा बहुत दिनों तक बिछावनसे उठ नहीं सका। एक बार एक दूसरे खुफिया की डण्डेसे ऐसी मरम्मत की कि वह नोकरीसे इस्तीफा देकर चला गया।

माताओं के लिये भी उस भावुक हृदय में कम श्रद्धा न थी। उनके तनिक भी अपमान को देख कर वह पागल सा हो उठता था। एक समय की बात है। पेशेवर डाकुओं के एक सरदार ने

श्रीयुत शचीन्द्रनाथ "बख्शी"
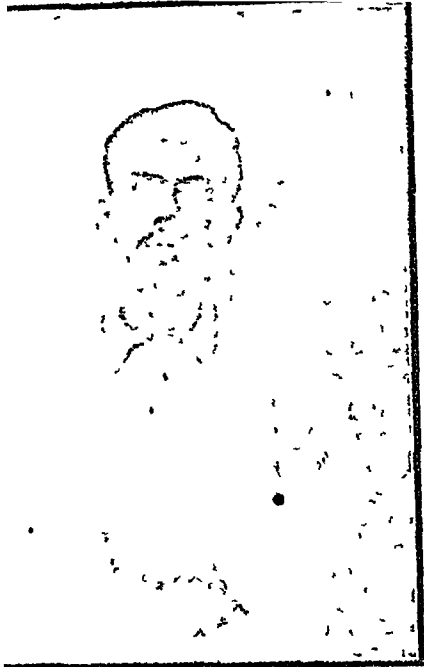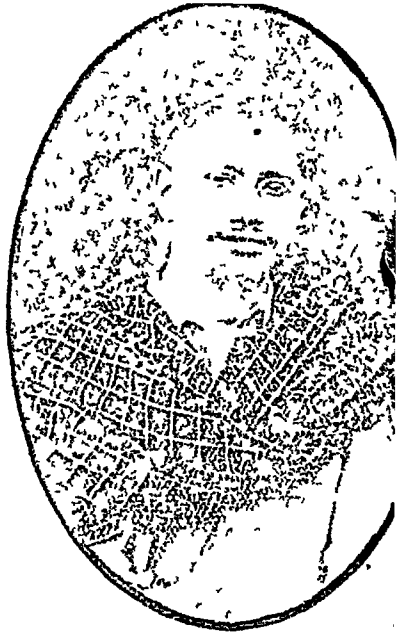
श्रीयुत भाई सुरेशचन्द्र "भट्टाचार्य"
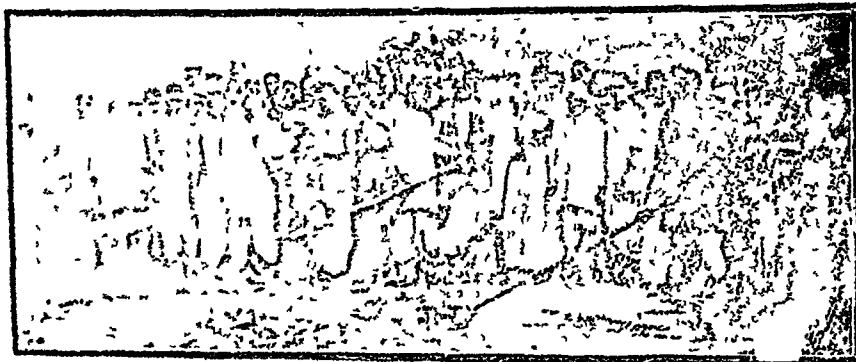
श्रीयुत भाई रामप्रसाद जी के अग्नि संस्कार का अन्तिम दृश्य।

आपके पास आकर अपने आपको क्रान्तिकारी दल का सदस्य बतलाया और उसके द्वारा की जाने वाली डकैतियों में सहयोग देने की प्रार्थना की। निश्चय हुआ कि पहली डकैती में हमारे नायक केवल दर्शक की भांति रहेंगे और उनके कार्य सञ्चालन का ढङ्ग देख कर उसी के अनुसार अपना निश्चय करेंगे। स्थान और दिन नियत होने पर डकैती वाले गांव में पहुंचे। मकान देख कर आपने कहा– "इस झोंपड़ी में क्या मिलेगा आप लोग व्यर्थ ही इन लोगों को नंग करने आये हैं" यह सुन सब लोग हंस पड़े। एक ने कहा "आप शहर के रहने वाले हैं, गांव का हाल क्या जाने यहां ऐसे ही मकानों में रुपया रहता है" खैर!

अन्दर घुसने पर सब लोग अपनी मन मानी करने लगे। मकान में उस समय पुरुष न थे। उन लोगों ने स्त्रियों को बुरी तरह तंग करना शुरू कर दिया। मना करने पर फिर वही जवाब मिला "तुम क्या जानो" अधिक अत्याचार देख, आपने एक से थोड़ी देर के लिये बन्दूक तथा कुछ कारतूस मांग लिये और, कूद कर छत पर आगये। वहां से पुकार कर कहा "खबरदार, यदि किसी ने भी स्त्रियों की ओर आंखें उठाईं तो गोली का निशाना बनेगा। कुछ देर तो काम ठीक तौर से होता रहा किन्तु बाद में एक दुष्ट ने फिर किसी स्त्री का हाथ पकड़ कर रुपया पूछने के बहाने कोठरी की ओर खींचा! इस बार नायक ने जबान से कुछ भी न कहा उस पर फायर कर दिया। छर्रों के पैर में लगते ही वह तो रोता चिल्लाता अलग जा गिरा और बाकी लोगों के होश बन्द हो गये। आपने ऊंची आवाज से कहा जो कुछ मिला हो उसे लेकर बाहर आओ" कोई मिठाई की थैली लटका लाकर और कोई घी का बर्तन हाथमें लटकाए बाहर निकला। जिसे कुछ भी न मिला उसने फटेपुराने कपड़े ही बांध लिए, यह तमाशा देखकर उनसौम्य

सुन्दर मूर्तिने उस समय जो उग्र रूप धारण किया था उसका वर्णन करना मेरी लेखनीकी शक्तिके परे है। बन्दूक सीधी कर सब सामान वहीं पर रखवा दिया और सरदार की ओर देखकर कहा "पामार" यदि भविष्य में तूने फिर कभी अपनी स्वार्थ-सिद्धिके नामपर क्रान्तिकारियोंको कलङ्कित करनेका साहस किया तो अच्छा न होगा, जा आज तुझे क्षमा करता हूं।" उस समय सरदार सहित दल के सभी लोग डरकर कांप रहे थे। इस डकैती में केवल साढ़े चौदह आने पैसे इन लोगों के हाथ लगे थे। "डकैती जैसे भीषण कार्यमें सम्मिलित होने पर भी रामप्रसाद का हृदय कितना भावुक कितना पवित्र कितना महान था-यह बात इस वक्त की घटना से स्पष्ट है"।

एक दिन ६ अगस्त, सन् १९२५ ई० को सन्ध्याके आठ बजे ८ नौम्बर को गाड़ी हरदोईसे लखनऊ जारही थी एकाएक काकोरी तथा आलम नगरके बीच ७/२ नम्बरके खम्भे के पास गाड़ी खड़ी हो गई। कुछ लोगोंने पुकार कर मुसाफिरों से कह दिया कि हम केवल सरकारी खजाना लूटने आये हैं। गार्डसे चाबी लेकर तिजोरी बाहर निकाली गई। इसी बीचमें एक व्यक्ति नीचे उतरा और गोली से घायल होकर गिर गया। लगभग पौन घण्टा के बाद लूटने वाले चले गये। इस बार करीब दस हजार रुपया इन लोगों के हाथ लगा। २५ सितम्बर से गिर-फ़्तारियाँ प्रारम्भ हो गई और उसीमें हमारे नायक भी पकड़े गये। डेढ़ सालतक अभियोग चलनेके बाद आपको फांसी की सजा हुई। बहुत कुछ प्रयत्न किया गया, किन्तु फांसी की सज़ा कम न हुई और १९ दिसम्बर सन् १९२७ को गोरखपुरमें आपको फांसी की रस्सी से लटका दिया गया।

इन पंक्तियों के लेखकने उन्हें तथा अन्तिम बार मृत्यु के केवल

एक दिन पहले फांसीकी कोठरीमें देखा था और उनका यह सब हाल जाना था। उस सौम्य मूर्तिकी मस्तानी अदा आज भी भूली नहीं है:—जब कभी किसीको उनका नाम लेते सुनता हूं तो एक दम उस प्यारेका वही स्वरूप आँखोंके सामने नाचने लगता है। लोगोंको उन्हें गालियां देते देख, हृदय कह उठता है, क्या वह डाकू का स्वरूप था" अन्तस्तल में छिपकर न जाने कौन बार बार यही प्रश्न करने लगता है:—क्या वे हत्यारे की आंखे थी "भाई दुनियां के सभ्य लोग कुछ भी क्यों न कहें किन्तु मैं तो उसी दिनसे उनका पुजारी हूं ! दास हूं !! भक्त हूं !!!

उस दिन माँको देखकर उस भक्त पुजारीकी आंखोंमें आंसू आ गए। उस समय उस जननीके हृदयको पत्थरसे दबाकर जो उत्तर दिया था, वह भी भूलना नहीं है। वह एक स्वर्गीय दृश्य था और उसे देखकर जेल कर्मचारी भी दङ्ग रह गये थे। माताने कहा:—मैं तो समझती थी तुमने अपने पर विजय पाई है किन्तु, यहां तो तुम्हारी कुछ और ही दशा है। जीवन-पर्यन्त देशके लिये आंसू बहाकर अब अन्तिम समय तुम मेरे लिये रोने बैठे हो:—इस कायरता से अब क्या होगा तुम्हें वीर की भांति हंसते हुए प्राण देते देखकर मैं अपने आपको धन्य समझूंगी। मुझे गर्व है कि इस गए बीते ज़मानेमे मेरा पुत्र देशकी वेदी पर प्राण दे रहा है। मेरा काम तुम्हें पालकर बड़ा करना था, इसके बाद तुम देशकी चीज थे, और उसीके काम आ गए। मुझे इसमें तनिक भी दुःख नहीं है। उत्तर में उसने कहा मां, तुम तो मेरे हृदय को भलीभांति जानती हो। क्या तुम समझती हो कि मैं तुम्हारे लिये रो रहा हूं अथवा इसलिये रो रहा हूं कि मुझे कल फांसी हो जायेगी यदि ऐसा है तो मैं कहूंगा कि तुमने जननी होकर भी मुझे समझ न पाया, मुझे अपनी मृत्युका तनिक

भी दुःख नहीं है। हां, यदि घीको आगके पास लाया जायेगा तो उसका पिघलना स्वाभाविक है। बस उसी प्राकृतिक सम्बन्धसे दो चार आंसू आ गए। आपको मैं विश्वास दिलाता हूं कि मैं अपनी मृत्युसे बहुत सन्तुष्ट हूं।

"प्रातःकाल नित्य कर्म, सन्ध्या वन्दन आदि से निवृत हो, माता को एक पत्र लिखा जिस में देशवासियों के नाम सन्देश भेजा और फिर फाँसी की प्रतीक्षा में बैठ गये। जब फांसीके तख्ते पर ले जाने वाले आये तो 'वन्दे मातरम्' और 'भारत माता की जय' कहते हुए तुरन्त उठ कर चल दिये। चलते समय उन्हों ने यह कहा:—

मालिक तेरी रजा रहे और तू ही तू रहे,
बाकी न मैं रहूं न मेरी आरज़ू रहे।
जब तक कि तन में जान रगों में लहू रहे,
तेरा ही जिक्र या, तेरी ही जुस्तजू रहे॥

फांसी के दरवाजे पर पहुंच कर उन्होंने कहा'—I wish the down-fall of British Empire (मैं ब्रिटिश साम्राज्य का नाश चाहता हूं।) इस के बाद तख्ते पर खड़े हो कर प्रार्थना के बाद 'विश्वानि देव सवितुर्दुरितानि...... आदि मन्त्र का जाप करते हुए (गोरखपुर के जेल में) वे फन्दे में झूल गये।

फाँसी के वक्त जेल के चारों ओर बहुत बड़ा पहरा था। गोरखपुर की जनता ने उनके शव को लेकर आदर के साथ शहर में घुमाया। बाजार में अर्थी पर इत्र तथा फूल बरसाये गए, और पैसे लुटाये गए। बड़ी धूमधाम से उन की अन्त्येष्टि क्रिया की गई। उनकी इच्छा के अनुसार सब संस्कार वैदिक ढंग से किये गये थे।

अपनी माता के द्वारा जो सन्देशा उन्हों ने देशवासियों के नाम भेजा है, उससे उत्तेजित युवक समुदाय को शांत करते हुए यह कहा कि 'यदि किसी के हृदय में, जोश, उमंग तथा उत्तेजना उत्पन्न हुई है तो उन्हें उचित है कि अति शीघ्र ग्रामों में जा कर कृषकों की दशा सुधारें, श्रम-जीवियों की उन्नति की चेष्टा करें, जहां तक हो सके साधारण जन समूह को शिक्षा दें, कांग्रेस के लिये कार्य करें और यथा साध्य दलितोद्धार के लिए प्रयत्न करें। मेरी यही विनती है कि किसीको भी घृणा तथा उपेक्षा की दृष्टि से न देखा जावे, किन्तु सब के साथ करुणा सहित प्रेम भाव का वर्ताव किया जावे।"

"मैं एक ओर बैठकर विमुग्ध नेत्रों से उस छविका स्वाद ले रहा था कि किसीने कहा—समय हो गया। बाहर आकर दूसरे दिन सुना कि उन्हें फांसी दे दी गई। उसी समय यह भी सुना कि तख्ते पर खड़े होकर उस प्रेम-पुजारीने अपने आपको गिरधारी के चरणोंमें समर्पित करते हुए यह कहा था:—मैं बृटिश साम्राज्य का विनाश चाहता हू" 'जान देना सहज है! युद्धमे वीर जान देते ही हैं और दुनिया उनका आदर करती ही हैं। लोग बुरे काम में भी जान देते हैं, रंडीके लिये भी जान देते हैं और लेते भी हैं। भाइको संपत्ति से वंचित करनेके लिये जान ली और दी जाती है। पर एक ऐसे कामके लिये जिस मे अपना कोई स्वार्थ भी न हो दो सालके करीब जेलमें सड़कर भारतकी आज़ादीके लिये वह वीर हंसते हंसते फांसीके फन्देमें झूल गया। भाई रामप्रसाद यह तुम्हारा ही काम था, सत्य धर्मका मर्म तुमने ही जान पाया था।

वह वीर जहांसे आया था वहीं को चला गया।

प्यारे 'बिस्मिल" की प्यारी बातें

यह वारागर उलफत गाफ़िल नज़र आता है।

बीमार का बच जाना मुश्किल नज़र आता है ॥
है दर्द बड़ी नयामत देता है जिसे खालिक ।
जो दरदे मुहब्बत के क़ाबिल नज़र आता है ॥
जिस दिलमें उतर जाये उस दिल को मिटा डाले ।
हर तीर तेरा ज़ालिम क़ातिल नज़र आता है ॥
मजरूह न थी जब तक दिल दिल ही न था मेरा ।
सड़के तेरे तीरों का "बिस्मिल" नज़र आता है॥

अदालत में जज से ।

"जज साहब" हम जानते हैं कि आप हमें क्या सज़ा देंगे । हम जानते हैं कि आप हमें फांसी की सज़ा देंगे, और हम जानते हैं कि यह ओंठ जो अब बोल रहे हैं वह कुछ दिनों बाद बन्द हो जायेंगे । हमारा बोलना, सांस लेना और काम करना यहां तक कि हिलना और जीना भी इस सरकार के स्वार्थ के विरुद्ध है । न्याय के नाम पर शीघ्र ही मेरा गला घूंट दिया जायेगा । मैं जानता हूं कि मैं मरूंगा मरने से नहीं घबराता । किन्तु क्या जनाब इससे सरकार का उद्देश्य पूर्ण हो जायगा ? क्या इसी तरह हमेशा भारत मां के वक्षस्थल पर विदेशियों का तांडव नृत्य होता रहेगा ? कदापि नहीं, इतिहास इसका प्रमाण है । मैं मरूंगा किन्तु क़ब्र से फिर निकल आऊंगा और मातृ भूमि का उद्धार करूंगा । ...."

एक दिन वह सहसा बोल पड़े:—

उदय काल के सूर्य का सौन्दर्य डूबते हुए सूर्य की छटा को कभी नहीं पा सकता है । और:—

प्रेम का पंथ कितना कठिन है संसार की सारी आपत्तियां मानों प्रेमी ही के लिये बनी हों ।

उफ़! कैसा व्यापार है कि हम सब कुछ देदें और हमें......
कुछ नहीं। लेकिन फिर भी हम मानें नहीं—,

फांसी के कुछ दिन पहिले उन्होंने अपने एक मित्र के पास एक पत्र भेजा था। उसमें उन्होंने लिखा था:

१६ तारीख को जो कुछ होने वाला है उसके लिये मैं अच्छी तरह तैयार हूं। यह है ही क्या? केवल शरीर का बदलना मात्र है। मुझे विश्वास है कि मेरी आत्मा मातृभूमि तथा उसकी दीन सन्तति के लिए नये उत्साह और ओज के साथ काम करने के लिए शीघ्र ही फिर लौट आयेगी।

यदि देश हित मरना पड़े मुझको सहस्रों बार भी,
तो भी न मैं इस कष्ट को निज ध्यान में लाऊं कभी।
हे ईश, भारतवर्ष में शत बार मेरा जन्म हो,
कारण सदा ही मृत्यु का देशोपकारक कर्म हो॥
मरते 'बिसमिल' रोशन, लहरी, अशफ़ाक, अत्याचार से,
होंगे पैदा सैकड़ों उनके रुधिर की धार से,
उनके प्रबल उद्योग से उद्धार होगा देश का,
तब नाश होगा सर्वथा दुख शोक के लवलेश का॥

सब से मेरा नमस्ते कहिये। कृपा करके इतना कष्ट और उठाइये कि मेरा अन्तिम नमस्कार पूजनीय पं० जगतनारायण मुल्ला की सेवा तक भी पहुंचा दीजिये। उन्हें हमारी क़ुर्बानी और ख़ून से सने हुए रुपये की कमाई से सुख की नींद आवे। बुढ़ापे में भगवान पं० जगतनारायण को शान्ति प्रदान करें।

फांसी

(१)

उमड़ आए आंखों में प्राण, श्वांस मे आई अन्तिम वायु ।
धूल में मिलने अब चली, फूल सम खिलकर मेरी आयु ॥

(२)

उठा था मन मै मेरे भाव, वसूंगा मृत्व वधू के द्वार ।
और निज रक्त रंग से साज, शत्रु को दूंगा कुछ उपहार ॥

(३)

बधिक ! धिक् अधिक करे मत, देर खींच तख्तेको रस्सी डार ॥
चलूं इस जीवन के उस पार, चखा दे मृत्व वधू का प्यार ॥

श्री अशफ़ाक़ उल्ला खां

अशफ़ाक़ उल्ला खां पहिले मुसलमान हैं, जिन्हें षड्यंत्र के मामले में फांसी हुई है। बीस पच्चीस वर्ष के इतिहास में, जब से राजनैतिक षडयन्त्रों की चर्चा सुनने में आई, अनेक आत्मायें फांसी और गोली का शिकार बना दी गयीं। परन्तु आज तक किसी मुसलमान को यह शिकार बनते हुए नहीं सुना गया। इससे जनतामें यह धारणा बैठ गई थी कि मुसलमान लोग षड्यन्त्रों में भाग नहीं ले सकते। किन्तु श्री अशफ़ाक़ उल्ला खां ने इस धारणा को मिथ्या साबित कर दिया। उनका हृदय बड़ा विशाल और विचार बड़े उदार थे। अन्य मुसलमानों की भांति 'मैं मुसलमान वह काफिर' आदि के संकीर्ण भाव उनके हृदय में घुसने ही नहीं पाये। सब के साथ सम व्यवहार करना उनका सहज स्वभाव था निर्द्वन्द्वता, लगन, दृढ़ता, प्रसन्नता, उनके स्वभाव के विशेष गुण थे। वे कविता भी करते थे। उन्होंने बहुत ही अच्छी अच्छी कवितायें, जो स्वदेशानुराग से शराबोर हैं, बनाई हैं। कविता में वे अपना उपनाम 'हसरत' लिखते थे। वे अपनी कविताओं को प्रकाशित करानेकी चेष्टा नहीं करते थे। कहते-हमें नाम पैदा करना तोहै नहीं। अगर नाम पैदा करना होता तो क्रान्तिकारी काम छोड़ 'लीडरी' न करता? आपकी बनाई हुई कविताएं; अदालत आतेजाते अक्सर, काकोरी के अभियुक्त गाया करते थे।

श्री अशफाक उल्ला खां वारसी 'हसरत', शाहजहांपुर के रहने वाले थे। इनके ख़ानदान के सभी लोगों का शुमार वहां के रईसों में है। बचपन में इनका मन पढ़ने लिखने में न लगता था।

'सनौत' में तैरने, घोड़े की सवारी करने और भाई की बन्दूक लेकर शिकार करने में इन्हें बड़ा आनन्द आता था। बड़े सुडौल, सुन्दर और स्वस्थ जवान थे। चेहरा हमेशा खिला हुआ और बोली प्रेम में सनी हुई बोलते थे। ऐसे हट्टे कट्टे सुन्दर नौजवान बहुत कम देख पड़ते हैं। बचपन से ही उनमें स्वदेशानुराग था। देश की भलाई के लिये किये जाने वाले आन्दोलनों की कथायें वे बड़ी रुचि से पढ़ते थे। धीरे धीरे उनमें क्रान्तिकारी भाव पैदा हुए। उनको बड़ी उत्सुकता हुई कि किसी ऐसे आदमी से भेंट हो जाय जो क्रान्तिकारी दल का सदस्य हो। उस समय मैनपुरी षड्यन्त्र का मामला चल रहा था। वे शाहजहांपुर मे स्कूल में शिक्षा पाते थे। मैनपुरी षड्यन्त्रमें शाहजहांपुर के ही रहने वाले एक नवयुवक के नाम भी वारन्ट निकला था। वह नवयुवक और कोई न था, श्री रामप्रसाद 'विस्मिल' थे। श्री अशफाक को यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि उनके शहर में ही एक आदमी ऐसा है जैसा कि वे चाहते हैं। किन्तु मामलेसे बचने के लिये श्री रामप्रसाद भगे हुए थे। जब शाही ऐलान द्वारा सब राजनैतिक कैदी छोड़ दिये गये, तब श्री रामप्रसाद शाहजहाँपुर आये। श्री अशफाकको यह बात मालूम हुई। उन्होंने मिलने की कोशिश की। मिलकर षड्यन्त्र के सम्बन्ध में बातचीत करनी चाही। पहले तो श्री रामप्रसाद ने टालमटूल करदी। परन्तु फिर उनके (श्री अशफाक के) व्यवहार और बर्ताव से वे इतने प्रसन्न हुए कि उनको अपना बहुत ही घनिष्ट मित्र बना लिया। इस प्रकार वे क्रान्तिकारी जीवन में आये। क्रान्तिकारी जीवन में पदार्पण करने के बाद से वे सदा प्रयत्न करते रहे कि उनकी भांति और मुसलमान नवयुवक भी क्रान्तिकारी दल के सदस्य बनें। हिन्दू-मुसलिम एकता के वे बड़े कट्टर हामी थे।

उनके निकट मंदिर और मसजिद एक समान थे एक बार जब

शाहजहांपुर में हिन्दू और मुसलमानों में झगड़ा हुआ और शहर में मारपीट शुरू होगई उस समय आप बिस्मिल जी के साथ आर्य समाज मन्दिर में बैठे हुए थे। कुछ मुसलमान मन्दिर के पास आगए और आक्रमण करने के वास्ते तय्यार हो गए आपने अपना पिस्तौल फ़ौरन निकाल लिया। और समाज मन्दिर से बाहर आकर मुसलमानों से कहने लगे कि मैं कट्टर मुसलमान हूं परन्तु इस मन्दिर की एक २ ईंट मुझे प्राणों से प्यारी है। मेरे नज़दीक मन्दिर और मसजिद प्रतिष्ठा बराबर हैं अगर किसी ने इस मन्दिर की ओर निगाह उठाई तो गोली का निशाना बनेगा। अगर तुमको लड़ना है तो बाहर सड़क पर चले जाओ और खूब दिल खोल कर लड़लो। उनकी इस सिंह गर्जना को सुन कर सब के होश हवास गुम हो गए। और किसी का साहस न हुआ जो समाज मन्दिर पर आक्रमण कर सारे के सारे इधर उधर खिसक गए। यह तो उनका सार्वजनिक प्रेम था। इस से भी अधिक आपको बिस्मिल जी से प्रेम था॥

एक समय की बात है। आप को बीमारी के कारण दौरा आ गया। उस समय आप राम २ कर के पुकारने लगे। माता पिता ने बहुतेरा कहा कि तुम मुसलमान हो खुदा २ कहो, परन्तु उस प्रेम के सच्चे पुजारी के कान में यह आवाज़ ही नहीं पहुंची और यह बराबर राम २ कहता रहा। माता पिता तथा अन्य सम्बन्धियों की समझ में यह बात न आई। उसी समय एक अन्य व्यक्ति ने आकर उन के सम्बन्धियों से कहा कि यह राम-प्रसाद बिस्मिल को याद कर रहे हैं। यह एक दूसरे को राम और कृष्ण कहते हैं। अतः एक आदमी जाकर रामप्रसाद जी को बुला लाया उन को देख कर आपने कहा "राम तुम आ गए" थोड़ी देर में दौरा समाप्त हो गया। उस समय उन के घर वालों को राम का पता चला।

उनके इन आचरणों से उनके सम्बन्धी कहते थे कि वे काफ़िर हो गये हैं। किन्तु वे इन बातों की कभी परवाह न करते और सदैव एकाग्र चित्त से अपने व्रत पर अटल रहते। जब काकोरी का मामला शुरू हुआ, उन पर भी वारन्ट निकला और उन्हें मालूम हुआ, तो वे पुलिस की आंख बचाकर भाग निकले। बहुत दिनों तक वे फ़रार रहे। कहते हैं उनसे कहा गया कि रूस या किसी और देश में चले जाओ। किन्तु वे हमेशा यह कहकर टालते गये कि मैं सजा के डर से फ़रार नहीं हुआ हूं, मुझे काम करने का शौक़ है, इसीलिये मैं गिरफ़्तार नहीं हुआ हूं; रूस में मेरा काम नहीं, मेरा काम यहीं है, और मैं यहीं रहूंगा—पर अन्ततः ८ सितम्बर १९२६ को वे दिल्ली में पकड़ लिये गये। स्पेशल मैजिस्ट्रेट ने अपने फ़ैसले में लिखा था कि वे उस समय अफ़ग़ान दूत से मिलकर पासपोर्ट लेकर बाहर निकल जाने की कोशिश कर रहे थे। वे गिरफ्तार कर के लखनऊ लाये गये और श्री शचीन्द्रनाथ बख़्शी के साथ उन का अलग से मामला चलाया गया। अदालत में पहुंचने पर पहिले ही दिन स्पेशल मजिस्ट्रेट सैयद अईनुद्दीन से पूछा—आप ने मुझे कभी देखा है? मैं तो आपको बहुत दिनों से देख रहा हूं। जब से काकोरी का मुक़द्दमा आप की अदालत में चल रहा है तब से मैं कई बार यहां आ कर देख गया। जब पूछा गया कि कहां बैठा करते थे तो उन्हों ने बतलाया कि वे मामूली दर्शकों के साथ एक राजपूत के भेष में बैठा करते थे। लखनऊ में एक दिन पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट ख़ां बहादुर साहब इनसे मिले। ख़ां बहादुर ने इन से कहा, "देखो अशफ़ाक़ तुम मुसलमान हो, हम भी मुसलमान हैं। हमें तुम्हारी गिरफ्तारी से बहुत रंज है। रामप्रसाद वगैरह हिन्दू हैं। इनका उद्देश्य हिन्दू सल्तनत क़ायम करना है। तुम पढ़े लिखे ख़ानदानी मुसलमान हो। तुम कैसे इन काफ़िरों के चक्कर में आगये?"

यह सुनते ही श्री अशफ़ाक़ की आंखें लाल हो गईं और झल्ला कर उन्हों ने कहा "बहुत हुआ! ख़बरदार, ऐसी बात फिर कभी न कहियेगा। अव्वल तो पंडित जी (श्री रामप्रसाद) वग़ैरह सच्चे हिन्दुस्तानी हैं, उन्हें हिन्दू सल्तनत, सिक्ख राज्य या किसी भी फिर्क़ान सल्तनत से सख़्त नफ़रत है। और आप जैसा कहते हैं, अगर वह सत्य भी हो तो मैं अंगरेज़ों के राज्यसे हिन्दू राज्य ज्यादा पसन्द करूंगा। आपने जो उनको काफ़िर बतलाया, उसके लिये मैं आपको इस शर्त पर मुआफ़ी देता हूं कि आप इसी वक्त मेरे सामने से चले जायं।" बिचारे ख़ाँ बहादुर की सिट्टी पिट्टी गुम होगई और अपना सा मुंह लिये वहां से खिसक पड़े। मामले में उनका व्यवहार बड़ा मस्ताना था। अदालत के दर्शक और कर्मचारी उनके निर्द्वन्दता पूर्ण व्यवहार को देखकर दंग थे। फांसी की तख़्ती सर पर झूल रही थी परन्तु उन्हें बिलकुल परवाह न थी। अन्त में फैसला सुनाया गया। उन पर ५ अभियोग लगाये गये थे। जिन में से तीन में फांसी और दो में काले पानी की सजायें हुई थीं। अदालत में उन्हें श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल' का लेफ़्टीनेण्ट कहा गया था।

इन के बाद अपीलें और दया प्रार्थनाओं आदि के व्यर्थ जाने पर फांसी देना तय पाया। उन्हे इस परिणाम से किंचित् मात्र भी क्लेश नहीं हुआ। जेल में वे कुछ दुबले पड़ गये थे उन के कुछ मित्रों ने उन से इसका कारण पूछा तो उन्हों ने उत्तर दिया कि तुम समझते होगे कि काल कोठरियों ने मुझे दुबला कर दिया है मगर बात ऐसी नहीं है। मैं आज कल बहुत कम खाता हूं और इबादत में (ईश्वर-भजन) में ज्यादा समय गुजारता हूं। कम खाने से इबादत में मन खूब लगता है। वे बड़ी मस्त तबियत के आदमी थे। फांसीके एक दिन पहिले कुछ मित्र उन से मिलने गये। उस दिन उन्हें अपने पुराने कपड़े मिल गये

थे, जिन्हें धोकर उन्होंने पहना था। पैरों में जूता भी था। उस दिन उवटन लगाकर उन्होंने स्नान किया, और बालोंको, जिन्हें जेल में उन्होंने बढ़ा रखा था, साफ़ किया। काफ़ी ज़र्क वर्क होकर मित्रों से मिले। बड़े खुश थे, फांसी की कोई चिन्ता ही न थी। मित्रों से बोले आज मेरी शादी है! उसके दूसरे ही दिन सुबह साढ़े छः बजे उन्हें फांसी हुई। मुक़दमा समाप्त हो जानेके बाद वे फैजाबाद जेल भेज दिये गये थे। वहीं पर उन्हें फांसी हुई। वे बहुत हंसी खुशीके साथ, कुरान शरीफ़का बस्ता कंधेमें टांगे हाजियोंकी भांति 'लवेक' कहते और कलमा पढ़ते, फांसीके तख्ते के पास गये। तख्तेको उन्होंने बोसा (चुम्बन) दिया और उपस्थित जनता से कहा कि..."मेरे हाथ इन्सानी खून से कभी नहीं रंगे, मेरे ऊपर जो इल्जाम लगाया गया, वह गलत है, खुदा के यहां मेरा इन्साफ होगा।" इसके बाद उनके गले में फन्दा पड़ा और खुदा का नाम लेते हुए वे इस दुनियासे कूच कर गये। उनके रिश्तेदार उनकी लाश शाहजहांपुर ले जाना चाहते थे। इसके लिये उनको अधिकारियोंसे बहुत मिन्नत-आरज़ू करनी पड़ी, तब कहीं इजाजत मिली। शाहजहांपुर ले जाते समय जब इन की लाश लखनऊ स्टेशन पर उतारी गयी तब कुछ लोगोंको देखनेका मौक़ा मिला। उस समय एक अंग्रेजी अखबारके सम्पादने लिखा था:..."लखनऊकी जनता अपने प्यारे अशफ़ाकके अन्तिम पुण्य, दर्शनोंके लिये बेचैन हो कर उमड़ आई थी। वृद्ध लोग तो इस प्रकार रोते थे मानो उनका अपना ही पुत्र खो गया हो।" चेहरे पर, १० घण्टे के बाद भी, बड़ी शान्ति और मधुरता थी। बस, केवल आंखोंके नीचे कुछ पीलापन था। बाक़ी चेहरा तो ऐसा सजीव था कि मालूम होता था कि अभी अभी नींद आ गई है। यह नींद अनन्त थी। मृत्यु के कुछ समय पहले वे इन शेरोंकी रचना भी कर गये थे:—

फ़ना है सब के लिए हम पै कुछ नहीं मौक़ूफ़,
बक़ा है एक फ़क़त ज़ाति किब्रिया के लिए।

(नाश तो सब का है, एक हमारा ही क्या, अविनाशी तो केवल परमात्मा ही है।)

× × ×

तंग आकर हम भी उनके जुल्म से बेदाद से
चल दिये सूये अदम ज़िन्दाने फ़ैज़ाबाद से

उनकी अन्य कुछ कविताओं का नमूना यह है:—

× × ×

तनहाइए गुरबत से मायूस न हो 'हसरत'
कब तक न ख़बर लेंगे याराने 'वतन तेरी।

× × ×

ब जुर्में आरज़ू पै जिस क़दर चाहे सज़ा दे लें,
मुझे खुद ख़्वाहिशे ताज़ार है मुल्ज़िम हूं इकरारी।

फांसीके कुछ घण्टे पहले उन्होंने ये कविताये लिखी थीं—

(१)

अफसोस! क्यों नहीं है वह रूह अब वतन में?
जिस ने हिला दिया था दुनियां को एक पल में॥
पे पुख़्ताकार-उल्फ़त हुशियार डिग न जाना,
मराज़ आशकां हैं इस दार और रसन में॥
मौत और ज़िन्दगी है दुनियां का सब तमाशा,
फ़रमान कृष्ण का था, अर्जुन को बीच रण में।
कुछ आरज़ू नहीं हैं, है आरज़ू तो यह है,
रख दे कोई ज़रा सी ख़ाके वतन कफ़न में।
सैयाद जुल्म पेशा आया है जब से 'हसरत,
है बुलबुलें क़फ़स में ज़ाग़ोज़ग़न चमन में।

(२)

बुजदिलों ही को सदा मौत से डरते देखा,
गो कि सौ बार उन्हें रोज़ ही मरते देखा।
मौत से वीर को हम ने नहीं डरते देखा,
तख्तये मौत पे भी खेल ही करते देखा।
मौत एक वार जब आना है तो डरना क्या है,
हम सदा खेल ही समझा किये, मरना क्या है।
वतन हमेशा रहे शाद काम और आज़ाद,
हमारा क्या है, अगर हम रहे, रहे न रहे।

(३)

न कोई इङ्गलिश न कोई जर्मन न कोई रशियन न कोई तुर्की।
मिटानेवाळे हैं अपने हिन्दी जो आज हमको मिटा रहे हैं॥
जिसे फना वह समझ रहे हैं बका का है राज इसीमें मजमिर।
नहीं मिटाने से मिट सकेंगे वो लाख हमको मिटा रहे हैं॥
खामोश हसरत! खमोश हसरत!! अगर है जजबा वतनका दिलमें।
सजा को पहुंचेंगे अपनी बेशक जो आज हमको सता रहे हैं॥

(४)

पहिनाने वाले अगर बेड़ियां पहनाएंगे।
खुशी से क़ैद के गोशे को हम बसाएंगे॥
जो सन्तरी वीर जिन्दा के सो भी जाएंगे।
यह राग गाके उन्हें नींद से जगाएंगे॥
तलब फजूल है कांटे को फूल के बदले।
न ले बहिश्त भी हम होमरूल के बदले॥
सन्तरी देख कर इस जोशको शरमाएंगे।
राग जंजीर की झन्कार में हम गाएंगे॥

श्रीयुत भाई अशफ़ाकउल्लाखां का शव चित्र

वतन हमेशा शाद और क़ाम आज़ाद रहे।
हमारा क्या है हम रहे रहे न रहे॥

(५)

सितमगर अब यह आलम है तेरे बीमारे फुरकत का।
लबों पर दम है दिल में वलवला शौके शहादत का॥
मेरी दीवानगी पर चारागर हैरां न हो इतना।
यही अन्जाम होना चाहिये नाकाम उलफ़त का॥
बुताने संग दिल सुनते नहीं फरियाद बेकस की।
निराला ढंग है उन खुदपरस्तों की हकूमत का॥
मिटा कर जानों दिल अपना किसी जालिम जफ़ाजूपर।
तमाशा अपनी आंखों देखता हूं अपनी किस्मत का॥
हविस हूरों की हो जिस में दिलाये याद गिल्मां की।
जनाबे शेख मैं कायल नहीं ऐसी रियाज़त का॥
बर आएं हसरतें हासिल सकूने कल्ब मुज़्तर हो।
कहां ऐसा मुकद्दर हाय मुझ बरगश्ता किस्मत का॥
मज़ा जब है कि वह कह उठें 'अशफाक' उनका क्या कहना।
गज़ल है या मुरक्का है तेरे वक्ते मुसीबत का॥

(६)

बहार आई है शोरिश है जनूने फितना सामां की।
इलाही खैर रखना तू मेरे जेबो—गिरेबां की॥
सही जजबाते उलफत भी कहीं मिटने से मिटते हैं।
अबस है धमकियां दारो - रसन की और ज़िन्दां की॥
यह गुलशन जो कभी आज़ाद था गुज़रे ज़माने में।
मैं शाखे खुश्क हूं हां! हां!! इसी उजड़े गुलिस्तां की॥
नहीं तुमसे शिकायत हम शफीराने चमन मुझको।
मेरी तक़दीर ही में था क़फस और क़ैद ज़िंदा की॥
जमीं दुश्मन जमा दुश्मन जो अपने थे पराये हैं।
सुनोगे दास्तां क्या तुम मेरे हाले परेशां की॥

यही लिक्खा था क़िस्मत में चमन पैराये आलम ने।
कि फ़स्ले गुल में गुलशन छूट कर है क़ैद ज़िंदां की॥
यह झगड़े और बखेड़े मैट कर आपस में मिल जाओ।
अबस तफ़रीक है तुममें यह हिन्दु और मुसलमां की॥
सभी सामाने इशरत थे मजे से अपनी कटती थी।
वतन के इश्क ने हमको हवा खिलवाई ज़िंदां की॥
वह मद लिल्लाह चमक उट्ठा सितारा मेरी किस्मत का।
कि तक़लीदे हक़ीक़ी की अता शाहे शहीदां की॥
इधर ख़ौफ़े ख़िज़ां है आशियां का ग़म उधर दिल को।
हमें यकसां हैं तफ़रीयें चमन और क़ैद ज़िंदां की॥
करो जब्ते मुहब्बत गर तुम्हें दावाये उल्फ़त है।
खमोशी साफ बतलाती है यह तस्वीर जाना की॥

वे मरते समय देशवासियों के नाम एक सन्देशा भी छोड़ गये। सन्देशे का सारांश यहां दिया जाता है:— भारतमाता के रङ्ग-मंच पर अपना पार्ट अब हम अदा कर चुके। हम ने गलत सही जो कुछ किया, वह स्वतन्त्रता प्राप्त की भावना से किया। हमारे इस काम की कोई प्रशंसा करेंगे और कोई निन्दा। किन्तु हमारे साहस और वीरता की प्रशंसा हमारे दुश्मनों तक को करनी पड़ी है। क्रान्तिकारी बड़े वीर योधा, और बड़े अच्छे वेदान्ती होते हैं। वे सदैव अपने देश की भलाई सोचा करते हैं। लोग कहते हैं कि हम देश को भय-त्रस्त करते हैं, किन्तु बात ऐसी नहीं है। इतनी लम्बी मियाद तक हमारा मुक़दमा, चला मगर हम ने किसी एक गवाह तक को भयत्रस्त करने की चेष्टा नहीं की, न किसी मुख़बिर को गोली मारी। हम चाहते तो किसी गवाह, या किसी खुफिया पुलिसके अधिकारी या किसी अन्य ही आदमीको मार सकते थे।

किन्तु हमारा यह उद्देश्य नहीं था। हम तो, कन्हाई लाल दत्त, खुदीराम बोस, गोपी मोहन साहा आदि की स्मृती में फांसी पर चढ़ जाना चाहते थे।

जजों ने हमें निर्दय, वर्बर, मानव-कलंक आदि विशेषणों से याद किया है। किन्तु हम पूछते हैं कि क्या इन जजों ने जलियावाला बाग़ में डायर को गोली चलाते देखा, या सुना नहीं? क्या उसने निशस्त्र भारतीयों—स्त्री, पुरुष, बाल, वृद्ध-सब पर गोलियां नहीं चलायी थीं? कितने जजों ने उसे इन विशेषणों से विभूषित किया? फिर क्या यह मज़ाक हमारे ही साथ उड़ाने को है?

भारतवासी भाइयो! आप कोई हों, चाहे जिस धर्म या सम्प्रदाय के अनुयायी हों, परन्तु आप देश-हित के कामों में एक हो कर योग दीजिये। आप लोग व्यर्थ में लड़ झगड़ रहे हैं। सब धर्म एक हैं, रास्ते चाहे भिन्न भिन्न हों परन्तु लक्ष्य सब का एक ही है। फिर यह झगड़ा बखेड़ा क्यों? हम मरने वाले काकोरी के अभियुक्तों के लिए आप लोग एक हो जाइये और सब मिल कर नौकरशाही का मुक़ाबिला कीजिए। यह सोच कर कि ७ करोड़ मुसलमान भारतवासियों में मैं सब से पहला मुसलमान हूं जो भारत की स्वतन्त्रता के लिये फांसी पर चढ़ रहा हूं, मन ही मन अभिमान का अनुभव कर रहा हूं। किन्तु मैं यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि मैं हत्यारा नहीं था जैसा कि मुझे साबित किया गया।

अब मैं विदा होता हूं। ईश्वर आप सब का भला करे। इस अवसर पर सैयद अईनुद्दीन मजिस्ट्रेट, श्री खैरातअली पब्लिक प्रासीक्यूटर, सी०आई०डी० के अधिकारी ख़ास कर ख़ान बहादुर तसद्दुक हुसेन साहब तथा अन्य गवाहों को धन्यवाद न

देना अनुचित होगा, क्योंकि इन्हीं की कृपा से हम को यह मान-मर्यादा प्राप्त हुई है। मेरे परिवार में आज तक देश सेवा के लिये कोई त्याग न हुआ था। अब यह कलङ्क छूट जायगा। अन्त में अपने साथी अभियुक्तों तथा मुख़बिरों और इक़बाली मुलज़िमों से भी वन्दे करता हूं।

सब को आख़िरी सलाम। भारतवर्ष सुखी हो। मेरे भाई आनन्द लाभ करें।

"क्या था"

(१)

देश हृष्टि में माता के चरणों का मैं अनुरागी था।
देश द्रोहियों के विचार से मैं केवल दुर्भागी था॥
माता पर मरने वालों की नज़रों में मैं एक त्यागी था।
निरंकुशों के लिए अगर मैं, कुछ था तो बस बाग़ी था॥

(२)

माता के बन्धन तोड़ूंगा, रखता था नित ध्यान यही।
अथवा मातृ मानपर मर जाऊंगा था मुझको अभिमान यही॥
चाह रहा था जीवन में मैं, फांसी का वरदान यही।
जन्मूंगा फिर भी भारत मे, होता उर में मान यही॥

(३)

देश-प्रेम के मतवाले कब, झुके फांसियों के भय से।
कौन शक्तियाँ हटा सकी हैं, उन वीरों को निश्चय से॥
हो जाता है शक्ति हीन जब शासन,अतिशय अविनय से।
लखता है जग बलिदानों को, पूर्ण विजय तब विस्मय से॥

(४)

वीर शहीदों के शोणित से, राष्ट्र महल निर्माण हुये।
उत्पीडक बन राज कुलों के भाग्य दीप निर्माण हुए॥
माता के चरणों पर अर्पित; जिन देश के प्राण हुए।
रहे न पल भर पराधीन फिर प्राप्त उन्हें कल्याण हुए॥

(५)

जाता हूं, दो मातृ यही वर, भारत में फिर जन्म धरूं।
एक नहीं तेरी स्वतन्त्रता पर, जननी मैं सौ बार मरूं॥

श्री राजेन्द्रनाथ लहरी ।

राजेन्द्र नाथ लहरी का जन्म १६०१ ई० के जून महीनेमें अपने मामाके ग्राम भरेंगा ज़िला पबना (बंगाल) में हुआ था। इनका घर इसी ज़िले के मोहनपुर ग्राममें था, इनके पिता श्री क्षितिमोहन लहरी बड़े ही उदार सहृदय और लोकोपकारी व्यक्ति थे। इन्होंने जनताके उपकारार्थ अनेक काम किए। अपने यहा एक हाई स्कूल भी खोला, बंग भंग के समय स्वदेशी आन्दोलन में भी इन्हों ने बहुत भाग लिया था। श्री राजेन्द्रनाथ लहरी १६०६ ई० में बनारस आये और हिन्दू विश्व विद्यालय की ऐडमीशन परीक्षा पास कर हिन्दू विश्वविद्यालय (सेन्ट्रल हिन्दू कालेज) में पढ़ने लगे। इतिहास और अर्थ शास्त्र से इन का बड़ा प्रेम था और इसी कारण इन्होंने एफ०ए० और बी०ए० इन दोनों विषयों को ले कर ही पास किया था तथा एम०ए० में भी इतिहास ही पढ़ते थे। ये कहते थे कि अर्थ शास्त्र वर्तमान युग का योग शास्त्र है। जिस को अपने देश की आर्थिक अवस्था और उस के सब अंगों का तुलनात्मक ज्ञान नहीं है, उस के लिए 'देश देश' रटना व्यर्थ है। देश सेवकों को अर्थ शास्त्र और अन्तर राष्ट्रीय राजनीति का पर्याप्त ज्ञान होना बहुत ज़रूरी है। इस उद्देश्य को सामने रखते हुये उन्हों ने अर्थशास्त्र का खूब अध्ययन किया था, साथ ही यूरोपीय और भारतीय इतिहास में भी इनका अच्छा प्रवेश था पर इतिहास और अर्थशास्त्र के समक्ष इन्हों ने साहित्यकी महत्ता को भुला दिया हो सो बात भी नहीं थी। अंगरेजीमें इन्होंने यूरोप के बड़े बड़े साहित्य सेवियों और बंगला के रवी बाबू, शरत बाबू

जैसे विख्यात लेखकों के ग्रन्थों का भी अध्ययन किया था पठन पाठन की अत्यधिक रुचि और अपने बंगला साहित्य के प्रति प्राकृतिक प्रेम के कारण इन्होंने अपने भाइयों के साथ मिलकर अपनी माता की यादगार में 'वसन्तकुमारी' नाम का एक अच्छा सा पारिवारिक पुस्तकालय भी स्थापित कर लिया था। गिरफ्तारी के समय ये हिन्दू विश्वविद्यालय की बंगला साहित्य परिषद् के मंत्री थे। इनके लेख बंगाल के 'वंगवाणी', 'शंख' आदि पत्रों में छपा करते थे। बनारस के क्रांतिकारियों के हस्तलिखित पत्र 'अग्रदूत' के प्रवर्तक ये ही थे। ये बराबर कोशिश करते थे कि क्रांतिकारी दल का प्रत्येक सदस्य अपने विचार लेखों के रूप में ज़रूर लिखे, यहां तक कि छोटे छोटे लड़कों से भी 'अग्रदूत' के लिये कुछ न कुछ ज़रूर लिखवाया करते थे।

ये सदा बिलकुल सीधा-सादा रहा करते और शृङ्गार बनाव के पास भी नहीं फटकते थे। अपने माता पिता तथा बड़े भाइयों के बड़े श्रद्धालु रहे और सदा उनकी आज्ञा पालन करते थे। सत्यवादी तो ये ऐसे थे कि कहते हैं कि इनको किसी ने कभी भी झूठ बोलते नहीं पाया। यहां तक कि खेल और मज़ाक में भी असत्य नहीं बोलते। पढ़ने लिखने में इनकी जैसी अधिक प्रवृत्ति थी, खेद कूद और दौड़ धूप में भी ये वैसे ही चुस्त और चालाक थे। तैरने, कूदने, हाकी खेलने आदि में ये बड़े निपुण थे। शुरू से ही बनारस के सेन्ट्रल हैल्थ यूनियन के सदस्य तथा कुछ दिनों तक मंत्री भी रहे। कभी कभी अपने मित्रों और छोटे लड़कों को ले पैदल ही सारनाथ, मुगलसराय आदि जगहों में जाकर घूमा करते थे। खेलना हंसना और लतीफे सुना सुनाकर दूसरों को हंसाना इनका स्वाभाविक गुण था। लापरवाह और मस्त तो ऐसे कि किसी बात की कभी कोई चिन्ता नहीं करते। भयंकर से

भयंकर आपत्ति सर पर मंडरा रही हो, पर इनके चेहरे पर उस समय भी मन्द मन्द मुसकान नज़र आती। लखनऊ जेल में इन के इस मस्ताने स्वभाव को देखकर बैरिस्टर चौधरी ने एक बार इनसे पूछा, क्यों जी क्या तुम्हें पता है कि तुम्हारे विरुद्ध कितने गवाह गुजर चुके? जवाब में उन्होंने इस निश्चिन्तता और सरलता से 'नहीं' कहा कि सभी इनकी ऐसी बेफ़िकरी पर खिलखिलाकर हंस पड़े। पर इसके साथ ही तारीफ की बात यह थी कि ऐसा स्वभाव होते हुए भी इनके किसी काम में कभी कोई वैसी त्रुटि नहीं होने पाती थी। इनके विचार बड़े ही क्रान्तिकारी थे और राजनैतिक क्रांति के साथ ही सामाजिक तथा धार्मिक क्रांति के भी ये जबरदस्त पोषक थे। पोषक भी सिर्फ बातों से ही नहीं, बल्कि अपने आचरण द्वारा क्रांति का उत्कृष्ट आदर्श समाज के सामने पेश करते रहे। ऊंच नीच के भाव धार्मिक अन्ध विश्वास के गढ़ को भस्मसात करने की दृष्टि से ब्राह्मण होकर भी इन्होंने अपने यज्ञोपवीत को तिलांजलि दे दी थी और सुअर तथा गोमांस तक खाने में इन्हें परहेज नहीं था। इन का विचार था कि जब तक समाज से आजकल की प्रचलित सभी कुरीतियों के विरुद्ध ज़बरदस्त आन्दोलन न होगा—कुरीतियों पर ज़बरदस्त कुठाराघात न होगा, तब तक न तो समाज में समानताका भाव आयगा और न उसका कल्याण होगा। किसान और मज़दूरों के संगठन और उनके लिये आन्दोलन करने के ये पूरे समर्थक थे, और इस सम्बन्धमें एक स्कीम भी बनाई थी। सेवाका भाव इनमें इतना अधिक था कि काशी में निराश्रित मरी हुई बूढ़ी स्त्रियों को, ये अपने कन्धे पर उठा ले जाते और उनका दाहसंस्कार कर आते थे। स्त्रियों की वर्तमान पतितावस्था से इनके हृदय को बड़ी चोट लगती थी तथा उनके सुधार और समानाधिकार प्राप्ति का बराबर समर्थन करते थे।

श्री राजेन्द्रनाथ लहरी देश के इने गिने होनहार नवयुवकों में से थे। देशोद्धार के कामों से इन की बहुत रुचि थी। अपने विद्यार्थी जीवन में ही उन्हों ने वे काम किये, जो कोई स्वतन्त्र रह कर भी शायद ही कर पाता। उन की सब से अधिक उल्लेखनीय विशेषता यह थी कि वे बड़े नीरव कार्यकर्त्ता (Silent worker) थे। बरसों तक वे काम करते रहे, किन्तु किसी को पता तक नहीं हुआ। स्वभाव से वे बड़े साधु और निर्भीक थे। मृत्यु का तो वे मज़ाक उड़ाया करते थे। काकोरी केस में गिरफ्तार होने के समय वे हिन्दू विश्वविद्यालय काशी में एम० ए० क्लास में शिक्षा पा रहे थे। काकोरी का डाका पड़ने के बाद इस प्रान्त की ख़ुफ़िया पुलिस ने श्री लहरी के नाम वारन्ट कटाया। लहरी महाशय इसके पहिले ही कलकत्ता के दक्षिणेश्वर बम केस के सम्बन्ध में गिरफ़्तार हो चुके थे, और उस मामले में उन्हें १० वर्ष के लिए कालेपानी की सज़ा हो चुकी थी। वह सजा हुई ही थी कि वे काकोरी केस के सम्बन्ध में भी तलब किये गये। कलकत्ता से वे लखनऊ लाये गये और उन पर काकोरी षड्यन्त्र का मामला चला। पुलिस का उन पर गहरा दांत था। मामले में एक दिन पुलिस के एक हवलदार से और उन से कुछ तकरार भी हो गई। हवलदार ने श्री राजेन्द्रनाथ को हथकड़ियां पहनाना चाही थी, उन्हों ने इसका विरोध किया। इसी पर कुछ तकरार हो गई थी। इस के बाद अदालत में उन्हों ने अपने वकील की मारफ़त इस की शिकायत करवाई, तो यह मालूम हुआ कि अदालत ने हथकड़ियाँ पहनाने का कोई हुक्म नहीं दिया था। फिर भी हवलदार साहब ने यह क्यों किया, इस का कोई जवाब अदालत से नहीं मिला। उलटा एक दिन स्पेशल मैजिस्ट्रेट की अदालत में डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के पास से यह चिट्ठी

आई कि इन्हों ने (श्री राजेन्द्रनाथ लहरी) पुलिस के काम में बाधा डाली है, इससे उन पर मामला चलाया गया है उन्हें मौक़ा दीजिये कि वे हमारी अदालत में उस मामले के सम्बन्ध में हाज़िर हों। पर बाद को शायद मामला कमज़ोर समझ कर दाखिल दफ़्तर कर दिया गया।

श्री राजेन्द्रनाथ लहरी ने तमाम मुक़दमें में बड़ी शान्ति से काम लिया। सब अभियुक्तों की भांति इन पर भी तीन धाराएं लगाई गई थीं। सेशन जज ने इन धाराओं में से धारा १२१ अ और १२० ब के अनुसार आजन्म कालापानी की और धारा ३९६ के अनुसार फांसी की सज़ाएं दीं। सजा के इस हुक्म के बाद वे लखनऊ से बाराबङ्की जेल भेज दिये गये। बाराबङ्की जेल से फिर वे गोंडा भेज दिये गये। जेलों में वे सदा प्रसन्न चित्त और निर्विकार भाव से समय व्यतीत करते थे। अधिकांश समय वे गाना गाया करते थे। इसी बीच में चीफ कोर्ट में उन की अपील और गवर्नर आदि से माफ़ी की प्रार्थनाएं हुई, किन्तु सब के निष्फल हो जाने पर फांसी पर टांग देना निश्चय किया गया। ११ अक्टूबर को फांसी की तारीख़ निश्चित हुई। इस तारीख़ के लगभग १ सप्ताह पूर्व ६ अक्टूबर को आपने अपने सम्बन्धियों को एक पत्र लिखा। इस में आप ने लिखा: —

पूरे छः मास तक बाराबङ्की और गोंडा जेल की काल कोठरियों में बन्द रहने के बाद कल मुझे सूचना मिली है, कि एक सप्ताह के भीतर ही फांसी हो जायगी। अब मैं यह अपना कर्तव्य समझता हूं कि उन सब मित्रों के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करूं, जिन्हों ने हम लोगों के लिए हर प्रकार की कोशिशें कीं। आप लोग मेरी अन्तिम नमस्कार स्वीकार कीजिए।

हमारे लिये मृत्यु शरीर का परिवर्तन मात्र है, पुराने कपड़ों को फेंक कर नया कपड़े पहन लेना है। मृत्यु आ रही है। मैं प्रसन्न चित्त और प्रसन्न वदन से उस का आलिङ्गन करूंगा। जेल के नियमों के कारण अधिक नहीं लिख सकता। आप को नमस्कार! देश हितैषियों को नमस्कार!! सब को नमस्कार!!! वन्दे मातरम्!

आपका—राजेन्द्रनाथ लहरी

किन्तु इस पत्र के बाद वाली फांसी की तारीख टल गयी। इसी बीचमें प्रीवी कौंसिल में अपील दायर करने का निश्चय हुआ, इस लिए फांसी की मियाद बढ़ा दी गई थी। फिर जब प्रीवी कौंसिल ने भी अपील नहीं सुनी और फांसी दे देना निश्चय कर लिया गया, तब मृत्युके तीन दिन पहिले १४ दिसम्बर १९२७ को उन्होंने एक और पत्र अपने एक मित्र के नाम लिखा। इसका आशय इस प्रकार था:—

कल मैंने सुना कि प्रीवी कौंसिल ने मेरी अपील खारिज कर दी। आपने हम लोगोंकी प्राण-रक्षा के लिए बहुत किया, किन्तु यह मालूम पड़ता है, कि देश को बलि-वेदी पर हमारे प्राणों के चढ़ने की ही आवश्यकता है। मृत्यु क्या है? जीवन की दूसरी दिशा के अतिरिक्त और कुछ नहीं! जीवन क्या है? मृत्यु की दूसरी दिशा के अतिरिक्त और कुछ नहीं' इस लिए मनुष्य मृत्यु से दुःख और भय क्यों माने? वह तो नितान्त स्वाभाविक अवस्था है, उतनी ही स्वाभाविक जितनी कि प्रातः-कालीन सूर्यका उदय होना। यदि यह सच है कि इतिहास पलटा खाया करता है, तो मैं समझता हूं कि हमारी मौत व्यर्थ न जायगी। सबको मेरा नमस्कार,—अन्तिम नमस्कार!

...आपकाराजेन्द्र।

इन पत्रों से श्री राजेन्द्रनाथ की स्वाभाविक गम्भीरता, विद्वता, निर्भीकता, वीरता और देश-प्रेमका परिचय मिलता। श्री राजेन्द्रनाथ लहरी अपने साथियों से दो दिन पहिले ही १७ दिसम्बरको प्रातःकाल गोंडा में फांसी पर चढा दिये गये। फांसी के समय उन के भाई बनारस से गोंडा आये थे। १६ की रात को वे बहुत प्रसन्न थे और रात भर वे गीता तथा उपनिषद्के पाठ करते रहे। सुबह वे बड़ी प्रसन्नता के साथ हंसते हुए फांसी पर चढ़ गये। फांसी एक ऐसी भयानक वस्तु है कि उस का नाम सुनते ही बड़े बढ़ों के भी होश बिगड जाते हैं, और चेहरा उतर जाता है। परन्तु श्री राजेन्द्रनाथ के चेहरे पर फांसी पर झूल जानेके बाद भी शिकन तक न आई थी। श्री लहरी की इच्छा थी कि हिन्दू रीतिके अनुसार उनके शव का दाह संस्कार हो। गोंडा निवासी, विशेषतः आर्य समाजी सज्जन, उन की अर्थी बड़ी धूमधाम के साथ वेद मन्त्र पढ़ते और भारत-माताकी जय ध्वनि करते हुए ले गये। वहां उनका दाह संस्कार किया गया। गोंडा वालोंने वहांपर उनका स्मारक बनाने का भी निश्चय किया है...

राजेन्द्रनाथ "लहरी" ने यह फाँसी पर जाते समय गाई थी।

हम सरे दार बसर शौक़ जो घर करते हैं।
ऊंचा सर क़ौम का हो नज़र यह सर करते हैं॥
सूख जाये न कहीं पौदा यह आज़ादी का।
खून से अपने इसे इस लिये तर करते हैं॥
इस गुलामी में तो कोई न खुशी आई नज़र।
खुश रहो अहले वतन हम तो सफ़र करते हैं॥
सर तन से जुदा कर दो ये है हाथ तुम्हारे।
पर तन से जज़्बाते जुदा कर नहीं सकते॥

श्री रोशन सिंह

रोशन सिंह शाहजहांपुर ज़िले के नवादा नामक ग्राम के रहने वाले थे। इस ग्राम में मुख्यतः क्षत्रिय लोगों का ही निवास है, और यह गांव अपने ज़िले में साहस तथा वीरता के लिये प्रसिद्ध है। ठा० रोशन सिंह इस वीर-ग्राम के एक बांके लड़ाके थे, जिन्होंने अपने साहस और धैर्य से सबों को चकित कर दिया। चूंकि यहां पढ़ने का रिवाज बहुत कम था, इस लिये ठाकुर साहब ने बचपन से ही तलवार, बन्दूक़, गदका-फरी, आदि का अभ्यास किया था। बन्दूक़ चलाने में तो ये इतने प्रवीण थे कि उड़ती चिड़िया को भी आसानी से मार गिराते थे। कुश्ती भी ये खूब लड़ते थे। यही कारण था कि काकोरी के अभियुक्तों में श्री मुकुन्दीलाल के सिवा इन से अधिक पहलवान और कोई न था। बचपन में यदि इन्हें शिक्षा नहीं दी गई, फिर भी इन्होंने अपने उद्योग से आगे चल कर उर्दू और हिन्दी पढ़ लिया था। अंग्रेज़ी भी जानते थे और जेल में आकर उन्होंने बंगला भी सीख लिया था। ये आर्य समाजी थे। पर आर्य समाजियों में प्रायः जो धार्मिक कट्टरता पाई जाती है, वह इनमें न थी। ये बड़ी निष्ठा के साथ रहते तथा नियमानुसार पूजा पाठ किया करते थे। व्यायाम में भी कभी व्यतिक्रम नहीं होने पाता था। इनके धैर्य और कष्ट सहिष्णुता का इससे अनुमान किया जा सकता है, कि जिस समय हवालात में थे, उसी समय इन के पिता का स्वर्गवास हो गया। पर पिता के निधन का अत्यन्त दुःखप्रद समाचार सुन कर ये ज़रा भी विचलित न हुए। आंखों में आंसू भी न आये।

केवल दो तीन बार ज़ोर ज़ोर से 'ॐ तत्सत्' कहा और फिर अपना काम नियमित रूप से करने लगे !

असहयोग आन्दोलन के आरम्भ से ही इन्हों ने उस में काम करना शुरू कर दिया था, और शाहजहांपुर तथा बरेली ज़िले के गांवों में घूम घूम कर ये ग्रामीणों तक स्वराज्य-सन्देश सुनाते रहे। इन्हीं दिनों बरेली में गोली चली और इस सम्बन्ध में इन्हें दो वर्ष सख़्त क़ैद की सज़ा मिली। यह सज़ा भुगत कर निकलने के बाद ये श्री रामप्रसाद से मिले और क्रान्तिकारी दल में शामिल हो गये। फांसी के समय इन की उम्र लगभग ३७ साल की थी। ये एक बड़े ही निस्पृह कार्यकर्ता थे। अपनी समस्त योग्यता, शक्ति, तत्परता और एकाग्रता के साथ ये आजन्म देश-सेवा के काम में लगे रहे और अन्त में देश-सेवा ही करते (चाहे वह कितने ही 'ग़लत रास्ते' को क्यों न हो) इन्हों ने अपना प्राण त्यागा। काकोरी षड्यन्त्र के मामले में गिरफ्तार होने के बाद फांसी के समय तक उन का व्यवहार एक विचित्र उदासीनता और बेपरवाही का था। उन्हों ने शायद कभी भी यह चिन्ता नहीं की कि मामले में क्या होगा, और प्राण-दण्ड से क्या होगा? मामला पेश हुआ, समाप्त हुआ, फांसी की सज़ा भी हो गई परन्तु उनके मन में विकार उत्पन्न न हुआ। जब जैसा समय आया, तब वैसा ही व्यवहार किया। जिस बात को पकड़ा अन्त तक उस पर हिमालय की भांति अटल रहे। बड़े दृढ़ सङ्कल्प के मनुष्य थे। लखनऊ जेल में जब विशेष व्यवहार की प्राप्ति के लिये अभियुक्तों ने अनशन किया, तब इन्हों ने बड़ी वीरता का परिचय दिया। कुछ लोगों की हालत डावांडोल थी। सरकारी कर्मचारी नली आदि के द्वारा थोड़ा बहुत दूध ज़बरदस्ती पिला दिया करते थे, किन्तु इन्हों ने सिवा पानी के और कोई पदार्थ नहीं ग्रहण किया।

अनशन करते थे, फिर भी कोई नैमित्तिक कार्य बन्द न था। दिन-चर्या का पालन सदा की भांति ही होता रहा! कहते हैं, पन्द्रह दिन के अनशन के बाद भी इन में शिथिलता न आई थी। यह इन्हीं जैसे वीर का काम था।

मामले की तमाम कार्यवाही में उन के खिलाफ़ कोई खास सबूत न था। फिर भी सेशन जज महोदय ने इन्हें सज़ा दे ही दी। सज़ा भी मामूली नहीं फांसी की। तीन अभियोगों में से धारा १२१ अ और धारा १२० ब के अभियोगों पर पांच पांच वर्ष की सख़्त कैद और धारा ३९६ के अनुसार फांसी की सज़ाएं दी गयीं। इन्हे फांसी होने का अन्देशा किसी को न था, इस लिये जब जज ने इन्हें फांसी की सज़ा दी तो इन का हिचकिचाना स्वाभाविक होता, परन्तु फांसी की सज़ा सुन कर भी इन्हों ने जिस धैर्य, साहस और शौर्य का प्रदर्शन किया, उसे देख सभी दंग रह गये। लोगों को आश्चर्य हुआ कि जिस के खिलाफ़ कोई खास सबूत नहीं उसको इतनी सख्त सज़ा कैसे दी गयी। इस लिये जब इस मामले की अपील चीफ़कोर्ट में की गई तब सब को आशा थी कि श्री रोशन सिंह अवश्य छूट जायेंगे; परन्तु वह आशा मृग-तृष्णा सिद्ध हुई। चीफ़कोर्ट ने भी सज़ा बहाल रखी। फिर कौंसिल के प्रस्तावों, क्षमा-प्रार्थनाओं और प्रीवी कौंसिल के अपीलों के अवसर आये और सब व्यर्थ सिद्ध हुए; और फांसी देना ही निश्चय हुआ। फांसी के लगभग १ सप्ताह पूर्व १३ दिसम्बर को इन्हों ने अपने एक मित्र के नाम यह पत्र लिखा था:—

इस सप्ताह के भीतर ही फांसी होगी! ईश्वर से प्रार्थना है कि वह आप को मुहब्बत का बदला दे। आप मेरे लिये हर-

गिज़ रंज न करें। मेरी मौत ख़ुशी का बाइस होगी। दुनिया में पैदा हो कर मरना ज़रूर हैं। दुनिया में बदफल कर के मनुष्य अपने को बदनाम न करे और मरते वक्त ईश्वर की याद रहे—यही दो बातें होनी चाहिये। और ईश्वर की कृपा से मेरे साथ ये दोनों बातें हैं। इस लिए मेरी मौत किसी प्रकार अफ़सोसके लायक नहीं है। दो साल से मैं बाल-बच्चों से अलग हूं। इस बीच ईश्वर—भजन का खूब मौका मिला। इस से मेरा मोह छूट गया, और कोई वासना बाक़ी न रही। मेरा पूरा विश्वास हैं कि दुनिया की कष्ट भरी यात्रा समाप्त कर के मैं अब आराम की ज़िन्दगी के लिए जा रहा हू। हमारे शास्त्रों में लिखा है कि जो आदमी धर्म्म—युद्ध में प्राण देता है, उस की वही गति होती है, जो जंगल में रह कर तपस्या करने वालों की।

ज़िन्दगी ज़िन्दा दिली को जान ऐ रोशन,
वरना कितने मरे और पैदा होते जाते हैं॥

आखिरी नमस्ते! आपका—रोशन

फांसी के दिन श्री रोशन सिंह पहिले ही से तैयार बैठे थे। ज्यों ही बुलावा आया, आप गीता हाथ में लिए, मुसकराते हुए चल पड़े। फाँसी पर चढ़ते हुए उन्होंने 'वन्दे मातरम्' का नाद किया और 'ओश्म' का स्मरण करते हुए लटक गये। जेल के बाहर उनका शव लेने के लिए आदमियोंकी बहुत बड़ी भीड़ एकत्र थी। दाह-संस्कार करने के लिये भीड़ के लोगों ने श्री रोशनसिंह का शव ले लिया। वे जलूसके साथ उस शवको ले जाना चाहते थे। किन्तु अधिकारियोंने जुलूस की इजाज़त नहीं दी। निराश हो लाश वैसे ही ले जाई गयी, और आर्य-समाजी विधिसे श्मशान भूमि में उसका दाह संस्कार हुआ।

श्रीयुत भाई रोशनसिंह जी।

ज़िन्दगी ज़िन्दा दिली की जान ऐ! रोशन।
वरना कितने हुये पैदा व फ़ना होते हैं॥
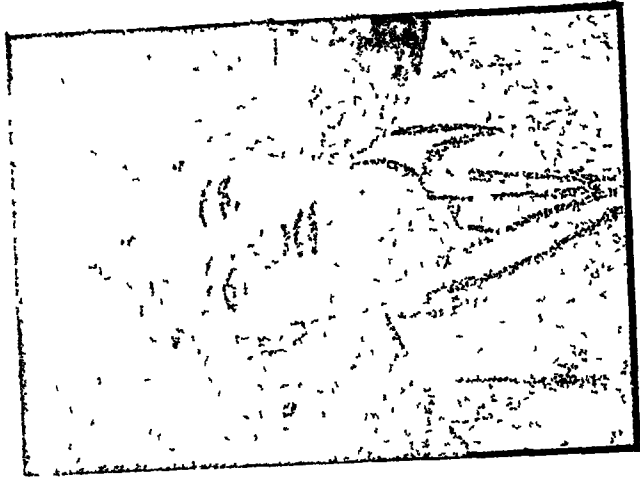
श्रीयुत भाई अशफाक़उल्ला खां 'हशरत'

कुछ आरज़ू नहीं है है आरज़ू तो ये है।
रखदे कोई ज़रासी खाके वतन कफ़न में॥

श्री योगेश चंद्र चटर्जी

योगेशचन्द्र चटर्जी पूर्व बंगाल के ढाका ज़िला के रहने वाले हैं। इन के जीवन का प्रायः सभी हिस्सा बंगाल में ही बीता। इस समय इन की आयु लगभग ३२ साल की है। जिस समय इनकी उम्र सिर्फ १५ वर्ष की थी, तभी से क्रान्तिकारी दल के सदस्य हैं। इन्हों ने अपने देश की सेवा और सिद्धान्तों की रक्षा के लिये जो कष्ट सहे, जो त्याग किये वे अनोखे हैं। इन्हों ने अपने व्यक्तिगत सुख-शोक आदि का कुछ भी खयाल न कर के अपना तन, मन, धन-सर्वस्व-देश के लिये न्योछावर कर दिया। अपनी छोटी सी अवस्था में ही इन्हों ने प्रशंसनीय मर्दानगी और साहस के साथ जो जो यंत्रणाएं सहीं, उन्हें सुनकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं, और इनके प्रति अनायास ही श्रद्धा उमड़ आती है। १९१६ ई० में पहले पहल ये पुलिस के पंजे में पड़े। उन दिनों बंगाल की अवस्था बड़ी खतरनाक थी। सरकार के छक्के छूट गये थे। आज यहां बम गिरता है, तो कल वहां पुलिस का पिस्तौल से सामना किया जाता है, ऐसी भयंकर स्थिति थी कि पुलिस को यह विश्वास हो गया था कि योगेश बाबू भी इस प्रकार के कामों में लिप्त हैं। इस लिये उसने इन से इस सम्बन्ध में कुछ बातें जानने की चेष्टा की। शुरू में मीठी मीठी बातों से, फिर लालच देकर और फिर धमकी से काम लिया गया। पर इन्हों ने साफ साफ इन्कार कर दिया कि "मैं कुछ नहीं जानता।" डर और धमकी का वार फिर हुआ, पर इस से कुछ काम न निकलता देख ब्रिटिश

न्याय के नाम पर इन के साथ अनेक अमानुषिक अत्याचार हुए। पुलिस वालों ने इन्हें मारना तथा हर प्रकार से तंग करना शुरू किया। चांटे मारे; घूंसे और लातें मारीं, लिटा कर लकड़ी के एक मोटे रूल से पीठ पर मार मार के लहू लुहान कर किया; खाने को एक दो पूरी तथा नाम मात्र को तरकारी दे कर कई दिनों तक उपवास करने को मजबूर किया, और स्नान करने तक की मनाही कर दी गई। पुलिस नैतिक शक्ति को पशु शक्ति के सामने विजित करना चाहती थी। परन्तु योगेश बाबू टस से मस न हुए। सब कुछ सहा, पर एक बार भी मुंह से आह न निकली, न किसी ने उनकी आंख से आंसू हो आते देखा; आखिर तक 'मैं कुछ नहीं जानता' वे यही कहते रहे। पुलिस तंग आगई, मारते मारते थक गई, पर इसे कुछ भी शर्म नहीं मालूम हुई। अन्त में उस ने इस वीर नौजवान को गिराने के लिये एक अत्यन्त वीभत्स और अमानुषिक तरीका अख्तियार किया। दो आदमियों से श्री योगेशचन्द्र जी के दोनों हाथ पकड़वा कर तीसरे आदमी के हाथ से कई बार अप्राकृतिक ढंग से उनका वीर्य स्खलन करवाया गया; और इसके बाद ही उस अवस्था में उनके सिर पर मैले (विष्ठा) से भरा हुआ एक बड़ा गमला एक महतर के द्वारा पलटवा दिया गया। सिर से लेकर पैर तक उन के बदन का सब हिस्सा मैले से भर गया। शायद उन के ओठों के बीच में भी कुछ पहुच गया। बदबू से हवा तक खराब हो गई। पर इसी अवस्था में, उन्हें देर तक रखा गया! बदन धोने के लिये पानी का एक बूंद तक नहीं दिया गया। पुलिस इस प्रकार उनको कमज़ोर और पतित बनाना चाहती थी परन्तु योगेश उस वक्त सचमुच योगेश हो गये, पत्थर से अटल रहे और उन्हों ने चूं तक नहीं किया! लड़ाई अब खतम हो गई। एक तरफ बेशुमार आदमी, अपार सम्पत्ति, उचित-

और अनुचित सभी उपाय और परम शक्तिवान सरकार थी और दूसरी तरफ़ एक—बिलकुल अकेला—एक निःसहाय नौजवान था, जिसकी मूंछों के अभी रेख भी नहीं आये थे। पर इस निमूछिये नौजवान ने अपने नैतिक बलके अमोघ अस्त्र द्वारा परम शक्तिशाली शत्रुओं की पाशविक शक्तिको चारो खाने चित्त कर डाला। कुछ अनहोनी बातें भी हो गईं और सताने वालों में कइओं ने आकर माफ़ी भी मांगी।

इसके बाद सरकार ने इन्हे १८१८ ई० के तीसरे रेगूलेशन के मुताबिक़ राज्य-क़ैदी (State prisoner) बना के रखा। महायुद्ध की समाप्ति के बाद ये छोड़ दिये गये। इसके बाद भी पुलिसको बराबर यह सन्देह बना रहा कि ये बराबर क्रांतिकारी कामों में भाग लेते हैं, पर वे गिरफ्तार नहीं किये जा सके। इन्हीं दिनों असहयोग आन्दोलन चला और इन्हों ने अपने को उस में डाल दिया और गांव गांव में रचनात्मक कार्य के लिये काफ़ी दौड़ धूप की। बाद को असहयोग आन्दोलन की शिथिलता के कारण उस आन्दोलन पर से इनका विश्वास उठ गया। दिल्ली की स्पेशल कांग्रेस के समय ये वहीं थे। पुलिसका ख़याल है कि दिल्ली में उस मौके पर विभिन्न प्रान्तों के क्रान्तिकारी नेता पधारे थे और उन्होंने एक सभा कर के यह तय किया कि क्रान्तिकारी आन्दोलन फिर जोरों के साथ चलाया जाय। योगेश बाबू संयुक्त प्रान्त में क्रान्तिकारी केन्द्रों की स्थापना के लिये, बंगाल की तरफ से नियुक्त किये गए थे और उन्हों ने इस प्रान्त में यह आन्दोलन आरम्भ करवाया। १९२४ ई० में युक्त प्रान्त के प्रायः सभी शहरों में 'राय महाशय' के नाम से, इन्होंने भ्रमण किया। इधर के लोगोंसे अपरिचित होने के कारण इस कार्य में इन्हें अनेक कठिनाइयां भी पड़ीं, पर सबों का सामना करते

हुए ये अपने कार्य में लगे रहे। शुरू में इन्होंने बनारस और शाहजहांपुर में काम किया। बनारस में उनको कुछ पुराने क्रान्तिकारियों से मदद मिली और शाहजहांपुर में श्री रामप्रसाद 'बिसमिल' से। श्री रामप्रसादजी सदा इनकी बड़ी तारीफ़ करते थे। कुछ दिनों के बाद ये सब भार श्री रामप्रसाद जी पर छोड़ बंगाल चले गये। वहां बंगाल की पुलिस बहुत दिनों से इन की तलाश में हैरान थी। एकाएक एक दिन हवड़ापुल पर पुलिस के कई उच्च अधिकारियों द्वारा घेर कर गिरफ़्तार कर लिये गये। कहते हैं कि उन की जेब में पाये गये एक पत्र के द्वारा पुलिस को यह पता लगा कि बंगाल से बाहर—उत्तर भारत के पचास बड़े बड़े शहरों में क्रान्तिकारी दल काम कर रहा है। सरकार उस काग़ज़ के मिलते ही सम्भवतः घबड़ा गई; और इस घटना के कुछ ही दिनों बाद बंगाल में काला कानून जारी हो गया; जिस के अनुसार बंगाल के पचासों निर्दोष व्यक्ति जेलों में ठूंस दिये गये। श्री योगेश चन्द्र चटर्जी भी आर्डिनेन्स के ही अनुसार नज़रबन्द कर लिये गए। बिहार के वर्त्तमान गर्वनर और बंगाल के तत्कालीन होम मेम्बर ने उक्त पत्र का हवाला बंगाल कौंसिल में दिया था।

शुरू में योगेश बाबू बंगाल के ब्रह्मपुर जेल में रखे गये थे। यहां के काले क़ानून के कैदियों पर, इन का बड़ा प्रभाव देख सरकार ने इन्हें इन के एक साथी श्री सन्तोष-कुमार के साथ हज़ारीबाग़ भेज दिया। परिवर्तन के वक्त इन पर जो जुल्म हुए, उस की निन्दा के लिये बंगाल कौंसिल में बड़ी आंधी उठी और यहां तक कि कौंसिल की कार्रवाई स्थगित करने तक का प्रस्ताव पास हुआ। हज़ारी बाग़ से वे

नजरबन्द की हालत में काकोरी षड्यन्त्र के मुकद्दमे में लाये गये। सरकारी वकील ने इन्हें इस 'षड्यन्त्र का जनक' बतलाया था। पुलिस इन से बहुत अधिक इस लिये जलती थी कि इतनी दूर से आ कर वह यहां के सीधे साधे आदमियों को क्यों राजद्रोही बनाता है! सेशन्स जज ने इन्हें दस साल की सजा दी थी, परन्तु पुलिस ने अपील की और चीफ़ कोर्ट से इन्हें आजन्म काले पानी की सजा दिलवा ही के छोड़ा। इन दिनों ये आगरा सेन्ट्रल जेल में हैं।

ये बड़े ही गम्भीर प्रकृति के आदमी हैं। बोलते बहुत कम हैं और प्रायः 'हां' या 'ना' कह कर ही अपनी राय बतला देते हैं। जोर से हंसने के बजाय मन्द मन्द मुस्कुराहट से ही वे अपना काम चला लेते हैं। शरीर से दुबले पतले, आंखे बड़ी बड़ी और चेहरे से बुद्धिमत्ता टपकती है। कोई दोषी व्यक्ति इनकी आंखों से शायद ही अपना दोष छिपा सकता है! बराबर मुसीबतों का सामना करते रहने के कारण इन के चेहरे पर त्याग की एक छाप सी पड़ गई है। ब्रह्मपुर जेल में आर्डिनेन्स के सभी कैदी इन को बड़ी इज्जत करते थे। उन का उज्ज्वल व्यक्तित्व और त्याग ही इस का मुख्य कारण था। इन में संगठन शक्ति बहुत जबर्दस्त है और अपने सहकारियों को प्रेम से वश में करना खूब जानते हैं। विपत्ति में कभी नहीं घबड़ाते। सब काम नियम पूर्वक करते और जरा भी समय बर्बाद नहीं होने पाता। युक्त प्रान्त में इन के समय के मिनट मिनट का हिसाब रहता था। युक्तप्रान्त के विभिन्न नगरों का इन्होंने कई बार दौरा किया था। कार्य करने की इनकी क्षमता और दक्षता का एक बड़ा सुन्दर उदाहरण 'कुमिल्ला लेबर यूनियन' है। इस कम्पनी में इस समय लोहा आदि का काम होता है। मशीनों क पुर्जे भी काफ़ी तादाद में

बनाये जाते हैं। २००) से भी कम पूञ्जी से इन्हीं की देख-रेख में एक-टीन के छप्पर के नीचे इस का काम शुरू हुआ था। आज कल इस कम्पनी के व्यवसायकी पूञ्जी लगभग डेढ़ लाख से भी ऊपर तक पहुंच गई है। इस व्यवसाय में जो लाभ होता है, उसी में लगा दिया जाता है। सरकारी वकील ने कहा था कि इस कम्पनी का गुप्त उद्देश्य क्रान्ति के समय राइफल और पिस्तौल बनाना है! योगेश बाबू ने कभी इस कम्पनी से एक पैसा भी नहीं लिया! ये आजन्म ब्रह्मचारी हैं और आजीवन विवाह नहीं करना चाहते। विचारों में पूरे साम्यवादी हैं। खाने-पीने में किसी से किसी प्रकार का परहेज नहीं रखते। कहते हैं कि मैंने मेहतर के हाथ का खाना तो कितने ही मर्तबा खाया है। आप के विचार आरम्भ से ही बहुत गर्म हैं। आपने हवालात में १५ रोज और सज़ाके बाद फतेहगढ़ जेलमें ५५ दिनों तक अनशन किया था। शरीर से कमजोर होने के कारण ४५ दिनों के अनशन के वक्त मृतप्राय हो गये थे। जेल के कैदी इन की बड़ी इज्जत करते और इनके लिये हर एक तकलीफ सहने को तैयार रहते। अधिकारियों को यह बहुत खटका फिर उन्होंने फतेहगढ़ से इन्हें आगरा सेण्ट्रल जेल में भेज दिया। बड़े अच्छे तैराक होने के साथ ही नाव चलाना भी ये खूब जानते हैं। जेलमें हमेशा कबड्डी आदि खेलों में बलकर भाग लेते थे। गाना गानेमें ये बड़े निपुण हैं और जिस वक्त मस्त हो कर गाना गाने लगते, उस समय सुनने वाले विह्वल हो जाते हैं। १६१६ ई० की गिरफ्तारी के वक्त ये कालेज में पढ़ते थे। इन्होंने अन्तर-राष्ट्रीय क्रान्ति, आयर्लैण्ड का इतिहास, पूर्वी देशोंकी जागृति आदिका अच्छा अध्ययन किया है।

श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल ।

शचीन्द्रनाथ सान्याल का जन्म सन् १८९३ ई० में कलकत्ते में हुआ था। इनके पिता श्रीयुत हरिनाथ सान्याल यद्यपि एक सरकारी नौकर थे, फिर भी इन में राष्ट्रीयता का भाव बहुत अधिक था। बङ्गाल के स्वदेशी आन्दोलन के बहुत पहिले से ये स्वदेशी वस्त्र धारण करते थे। स्वदेशी धारण करने के बाद से फिर कभी भी इन्हों ने विदेशी वस्त्र नहीं ख़रीदा। १९०८ ई० में जब कि श्री शचीन्द्रनाथ की उम्र सिर्फ़ १५ वर्ष की थी, उनका देहान्त हो गया। पर देहान्त के पूर्व ही अपने पुत्रों को इन्हों ने कलकत्ते की 'अनुशीलन समिति' में भर्ती करा दिया था। भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन के इतिहास के पाठक जानते होंगे कि बंगाल के क्रांतिकारी आन्दोलन में इस समिति ने कितना प्रमुख भाग लिया है। पिता की मृत्यु के बाद श्री शचीन्द्र नाथ बनारस आये और यहां पर नवयुवकों का संगठन आरम्भ कर दिया। १७ वर्ष की अवस्था में ही इन्हों ने तीन शाखाओं सहित एक बढ़िया संस्था संगठित कर ली। शुरू में संस्था का नाम अनुशीलन समिति था और यह कलकत्ते की अनुशीलन समिति से सम्बंध था, पर बाद को बंगाल सरकार ने जब कलकत्ते की अनुशीलन समिति को ग़ैर-क़ानूनी क़रार दे दिया तो इन्हों ने इस संस्था का नाम बदल कर 'यङ्गमेन्स एसोसियेशन' कर दिया। कुछ दिनों तक इस के मुख्य केन्द्र के ३०० तथा शाखा केन्द्रों के ३०० से १५० तक सदस्य थे। १९१५ ई० में इस संस्था को पुलिस ने विनष्ट कर डाला।

श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल ने १९१२ ई० में ही बंगाल के क्रांतिकारी दल से अपना सम्बन्ध स्थापित कर लिया था। इस के बाद से वे बराबर युक्तप्रांत में क्रांतिकारी आन्दोलन के बढ़ाने के प्रयत्न में लगे रहे। बनारस में इन के तथा इन के साथियों के पीछे सदा ख़ुफ़िया पुलिस लगी रहती थी, फिर भी यह तारीफ़ की बात है कि उस अवस्था में भी ये श्रीयुत रासबिहारी बोस, श्री यतीन्द्र मुकर्जी आदि जैसे फ़रार क्रांतिकारियों को छिपा सके थे। १९१४ ई० में श्रीयुत रासबिहारी बोस को गिरफ्तार कराने वाले के लिये ७५००) के इनाम की घोषणा सरकार द्वारा हो चुकी थी। पर उसी अवस्था में श्री बोस ने बनारस पहुँच कर उसे ही अपने कार्य का मुख्य केन्द्र बनाया। श्री रासबिहारी बोस का शचीन्द्र पर बहुत विश्वास था, और वे इन के जिम्मे बहुत बड़ी बड़ी जिम्मेदारी के कार्य सौंपते थे। इन्हों ने श्री शचीन्द्रनाथ तथा उन के दो और साथियों को नये प्रकार का बम बनाना सिखाया। एक बार उसके प्रयोग का अनुभव करते समय वह फूट पड़ा और श्री शचीन्द्रनाथ बुरी तरह घायल हुए पुलिस की चौकी उस स्थान से सिर्फ ५ मिनट के रास्ते की दूरी पर थी, पर पुलिस वालों को इस बात का कुछ भी पता न लगा। लाहौर षड्यन्त्र के मुक़दमे के समय ही पहले पहल श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल का नाम षड्यन्त्रकारी के रूप में प्रकट हुआ। इस के बाद ८ महीने तक जब तक कि १९१६ ई० में बनारस षड्यन्त्र के सम्बन्ध में वे गिरफ्तार न हो गये वे फ़रार रहे। इस के पहले कलकत्ते में क्रान्तिकारियों की एक मीटिंग हुई थी। इस में श्री रासबिहारी, श्री नरेन भट्टाचार्य, श्री यतीन मुकर्जी, गिरिजा बाबू, श्री शचीन्द्रनाथ आदि उपस्थित थे। इस मीटिंग में श्री रासबिहारी बोस को विदेश जा कर वहां से अस्त्र--शस्त्र

भेजने तथा धन-संग्रह का काम श्री नरेन* को विदेशी हथियारों को लेने तथा रक्षा करने का काम, श्री यतीन और श्री गिरिजा को देश में धन-संग्रह करने का काम और श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल को पंजाब तथा यू० पी० के किसानों तथा सैनिकों में क्रांतिकारी भाव फैलाने का काम दिया गया था। इस के बाद ही श्री यतीन के संरक्षण में कलकत्ता में मोटर-डकैतियां शुरू हुईं, जिस से छः महीने से भी कम समय में काफी रुपये जमा हो गये थे। श्री शचीन्द्रनाथ वहां से बनारस अपना कार्य करने आये, और शीघ्र ही गिरफ्तार हो गये। यहां पर यह बतला देना अप्रासंगिक न होगा कि श्री शचीन्द्रनाथ की गिरफ्तारी इन के दल के ही एक आदमी के विश्वासघात के कारण हुई थी। मुकद्दमा होते समय जब इन से सफ़ाई मांगी गई, तो इन्हों ने बड़ी निर्भीकता और बहादुरी के साथ निम्न लिखित वक्तव्य पेश किया मैं हिन्दुस्तान के लिये पूरी आज़ादी चाहता हूं और मैंने अपना जीवन उसी की प्राप्ति के लिये निसार कर दिया है। मैं ब्रिटिश सरकार के जजों की अपेक्षा किसी और उच्च ही शक्ति में विश्वास करता हूं, जो मनुष्यों और राष्ट्रों की एक भाग्य निर्णायक है, उन्हें आजन्म कालेपानी की सज़ा हुई, और बड़ी ख़ुशी से उन्हों ने उस का आलिंगन किया। अण्डमान में पहुंच कर इन की सिक्खों से बड़ी मित्रता हो गई। वहीं पर देशभक्त श्री सावरकर

---

* यह वही नरेन महाशय हैं, जो बाद को बटेविया के एक जर्मन एजेण्ट के तार द्वारा बात चीत करते समय गोआ में गिर-फ़्तार कर के सिकन्दराबाद-क़िला में क़ैद कर रखे गये थे। उस बार वे फांसी पर चढ़ा दिये गये होते, पर वे वहां से भाग निकले तथा हिन्दुस्तान से बाहर चले गये। आज कल यही महाशय प्रसिद्ध साम्यवादी श्री एम० एन० राय के नाम से प्रसिद्ध हैं।

से भी इन का परिचय हुआ। सभी क़ैदी इन्हें बड़े
निगाह से देखते थे। वहां पर इन्हों ने अर्थशास्त्र, इति
का अध्ययन किया। १९-१ ई० की राज-घोषणा मे
हो गये। इस के बाद कुछ अन्य कामों में लगे
फिर ज्यों ही बनारस पहुंचे अपने उसी उत्साह,
मुस्तैदी के साथ पुराने साथियों को खोज ढूंढ कर, उ
लग गये। इस के बाद बंगाल के काले क़ानून
कलकत्ते में दूसरी बार भी इन की जो गिरफ़्तारी हुई,
एक अपने ही आदमी के विश्वासघात के कारण हुई। उ
१०००) के लोभ में आ कर पुलिस को इन के निवास
पता बतला दिया था। इन दो मौकों के और अपने ही
वाले आदमियों के विश्वासघात से हृदय को
सदमा पहुंचा और तब से एक प्रकार से नौजवानों
का विश्वास उठ सा गया। इस नज़रबन्दी की अवस
उन पर बांकुरा राजद्रोह केस चलाया गया। इस
आधार उन के पास में एक ऐसे लिफ़ाफे का पाया
जिस के भीतर 'क्रान्तिकारी' नामक पर्चा था और
रासबिहारी बोस का जापान का पता लिखा हुआ था।
में इन्हें दो वर्ष की सख़्त क़ैद की सज़ा मिली। इस प्र
बन्दी और उक्त सज़ा की मियाद भुगत ही रहे थे,
षड्यन्त्र केस में भी घर लिये गये और आजन्म का
सज़ा दी गई।

श्री शचीन्द्रनाथ के जीवन को बनाने में उन की
बहुत अधिक हाथ रहा है। इन के सभी के सभी पु
दुर, देशभक्त, वीर और त्यागी निकले। जो भी

समस्त बंगाल में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी माता * के नामसे उसी तरह विख्यात है, जिस तरह पारसी महिला मैडम कामा यूरोप में भारतीय क्रान्तिकारियों की माँ कर के प्रसिद्ध हैं। श्री शचीन्द्रनाथ बनारस षड्यन्त्र केस में जिस समय गिरफ्तार हुये उस समय कालेज में पढ़ते थे। बंगला, अंग्रेजी और हिन्दी अच्छी तरह जानते है टालस्टाय, गोर्की, वर्कले, क्रोन्डी आदि को अच्छी तरह पढा है। इन का जीवन बड़ा सीधा सादा और स्वार्थ शून्य है। गाने के बड़े प्रेमी हैं। इन्हों ने 'बन्दी जीवन' नामक पुस्तक बंगला में दो भागों में लिखी है, जिस में क्रान्तिकारी आन्दोलन का सविस्तार वर्णन किया गया हैं। इस पुस्तक का अनुवाद हिन्दी, तेलगू और गुजरातीमें भी प्रकाशित हो गया है।

मातायें अब करें न ममता देश प्रेम मतवालों की।
पिता न मोह करें पुत्रों का बलि दें अपने लालों की॥
वीर पत्नियां बनें बाधक पतियों को वह विदा करें।
आज़ादी ले आओ कह कर अर्ज प्रेम से अदा करें॥

* मार्च १९२८ ई० में इन की माता का स्वर्गवास हो गया। इन की तस्वीर अन्यत्र दी गई है। इन के जीवन का विवरण हिन्दी भवन हास्पिटल रोड लाहौर द्वारा प्रकाशित 'बन्दी-जीवन (प्रथम भाग) नामक पुस्तक में दिया गया है।

श्री मन्मथनाथ गुप्त ।

मन्मथनाथ गुप्त का जन्म बनारस में १९०७ ई० में एक प्रतिष्ठित वैद्य वंश में हुआ था। इन के पितामह श्री आद्यानाथ गुप्त १८८० ई० में हुगली (बंगाल) से बनारस आ बसे थे। इन के पिता का नाम श्री वीरेश्वर गुप्त है। बचपन से ही श्री मन्मथ बड़े तेज़ और प्रतिभावान व्यक्ति रहे। ५ वर्ष की अवस्था में ही गणित के कठिन कठिन प्रश्न बड़ी आसानी से हल कर देते थे। इन के पिता ने इन्हें किसी स्कूल में न भेज कर अपनी ही देख रेख में प्रारम्भिक शिक्षा दी। उस के बाद इन्हें एक सन्यासी बनाने के उद्देश्य से एक सन्यासी गुरु के पास संस्कृत पढाने के लिये भेज दिया पर कुछ दिनों तक संस्कृत पढ़ने के बाद श्री मन्मथ का मन संस्कृत पढ़ने में न लगा। इन के बाद दो वर्ष तक ये अपने पिता के साथ वीरटेनगर (नेपाल) में (वहां इनके पिता हाईस्कूल के हेड मास्टर थे) रहे। वहां से आने के कुछ ही दिनों बाद असहयोग का अन्दोलन चला और इनके पिता ने इन्हें काशी के गान्धी राष्ट्रीय विद्यालय में भर्ती करा दिया, वहां ये स्वयं भी शिक्षक थे। इन्हीं दिनों (१९२१ ई० में) युवराज भारत में आये थे और उन के बहिष्कार क लिये हर जगह हड़ताल आदिकी गई थी इसी सम्बन्ध बनारस में वहां के नेताओं के साथ बहिष्कार और हड़ताल का नोटिस बांटते हुये यह भी गिरफ्तार हुये और तीन महीने की जेल की सजा काट आये। उस दिन नोटिस बांटते वक्त

इन के पिता ने जब इन से कहा कि तुम नोटिस तो बाँट रहे हो, पर इस के कारण तुम्हें जेल जाना पड़ेगा । तुम्हारी उम्र अभी सिर्फ १४ साल की है । तुम क्या जेल की यन्त्रणाओं को बरदाश्त कर सकोगे? उत्तर देते हुये श्री मन्मथ ने बड़ी बहादुरी से कहा, "बाबू जी, मैं अपनी मातृभूमि के लिए सभी कुछ सहने को तैयार हूं।" यह उन की पिता की शिक्षा और देखरेख का ही फल है कि श्री मन्मथनाथ अपने को एक ऐसा योग्य देश भक्त, दृढ, वीर और सहिष्णु व्यक्ति बना सके हैं।

इस मुकद्दमे में फँसने के पहिले से ही ये सार्वजनिक कामों में भाग लेने लगे थे, पिता जी ने देशभक्ति और सच्चरित्रता का बीज बो ही दिया था, असहयोग आन्दोलन और फिर उसके बाद काशी विद्यापीठ के राजनैतिक वातावरण ने, देशभक्ति की उस भावना को सींच कर अच्छी तरह हरा भरा कर दिया। तीन महीने की सजा काट कर जेल से निकलने के बाद वे महात्मा गांधी द्वारा स्थापित सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय संस्था काशी विद्यापीठ में भर्ती हो गए और वहां की 'विशारद' परीक्षा (मैट्रिक) पास कर विद्यापीठ के ही कालेजमें पढ़ने लगे। इन्हीं दिनों (१९२३ई०) इनकी भेंट बंगाल के एक प्रसिद्ध क्रान्तिकारी से हुई और बहुत बहस तथा सोच विचार के बाद, जब इन्हें यह विश्वास हो गया, कि इसी रास्ते से भारत का अधिक कल्याण होगा, तब ये क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित हो गये। काकोरी के डाके के बहुत पहिले से ही पुलिस की नेक नज़र इन पर पड़ गई थी, और बराबर इन का पीछा किया जाता था। काकोरी षड्यन्त्र की गिरफ्तारी की नियत तारीख २६ सितम्बर (१९२५ ई०) को ही ये गिरफ्तार कर लिये गये। षड्यन्त्र के मुकद्दमों की सब बातों की इन्हें जानकारी न थी, और इस कारण इन्होंने यह समझ लिया था कि मुझे फांसी हो जायगी।

यह सोच कर उन्हों ने एक दिन अपने पिता जी (जब कि वे जेल में इन से मिलते गये थे) से कहा कि अब मुझे इस संसार से चला ही जानिये।' यह कहते वक्त पिता जी के सामने ही उन की आंखों में आंसू के दो बूंद आ गये। बहादुर पुत्र के वीर पिता ने यह देख कर कहा "I don't expect tears in the eyes of my son" (मै अपने पुत्र की आंखों में आंसू देखने की आशा नहीं करता)।

काकोरी के हवालातियों में एक को छोड़ कर सम्भवतः सब से छोटे श्री मन्मथ नाथ ही थे, फिर भी ये बहुत गम्भीर रहते थे। उनकी यह गम्भीरता स्यात् उन के विशेष अध्ययन के फल स्वरूप थी। मुकद्दमे में ये मुख्य अपराधियों में एक समझे जाते थे तथा सरकार की दृष्टि में बड़े खतरनाक व्यक्ति गिने जाते थे। कहते हैं कि आज से कई वर्ष पूर्व "My friend the Revolutionary" और "Much about Shivaji and Rana Pratap" शीर्षक "यंग इण्डिया" में प्रकाशित दोनों पत्र इन्हीं के लिखे थे। इन पत्रों के प्रकाशन के समय राजनैतिक जगत में एक सनसनी सी फैल गई थी। मुकद्दमे में सेशन से इन्हें १४ साल की सख्त कैद की सज़ा मिली। पुलिस ने इसे कम समझ कर अपील की, पर इनके मामले में उसे मुंह की खानी पड़ी। इन की सज़ा और अधिक न बढ़ी। सज़ा के बाद श्री विष्णुशरण दुबलिस के साथ ये नैनी जेल में भेजे गये। वहां, साधारण कैदी सा व्यवहार होने के विरोध में दल की आज्ञा के मुताबिक इन्होंने भी अनशन शुरू कर दिया और ४६ दिनों तक—जब तक श्री गणेश शङ्कर विद्यार्थी जी ने जा कर बहुत आग्रह पूर्वक अनशन बन्द न करवाया—अनशन किया। इस के पहले, हवालात में भी सबों के साथ, इन्होंने भी १५ दिनों तक अनशन किया

था। स्वास्थ्य कुछ सुधर जाने के बाद जेल वालों ने इन्हें कष्ट देने के इरादा से चक्की पीसने को कहा। साथ ही धमकी भी दी गई। हुक्म के पीछे धमकी का ज़ोर दिखलाये जाने क कारण इन्होंने उस हुक्म की तामील करना कायरता समझी, और इस लिये साफ़ साफ़ कह दिया कि मर जाना मंजूर है, पर चक्की नहीं पीसूंगा। जेल में हुक्म-उदूली से बढ़ कर बड़ा अपराध भला और क्या हो सकता है? कई अधिकारियों ने बहुत समझाया। अंग्रेज़ सुपरिन्टेन्डेन्ट ने यहां तक कहा कि हम पिसवा के छोड़ेगा। पर श्री मन्मथ टससे मस न हुए। फिर क्या था? अधिकारियों का पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया, और जेल की एक के बाद दूसरी सजायें दी जाने लगीं। लेकिन सब व्यर्थ हुआ। आखिर हार मान कर उनको यहां से तबदील कर के बरेली सेन्ट्रल जेल में भेज दिया गया। आजकल वे वहीं हैं।

इन का विचार है कि देश के नेताओं में ऐसे बहुत कम हैं, जिन्हें देश के लिये सच्ची लगन हो और सोते जागते जिन्हें मातृभूमि के उद्धार की फ़िक्र हो। ऐसी दशा में, इनका कहना है कि देश के ऐसे नवयुवकों को ही मैदान में आना चाहिये, जो राजनीति को अपना समय बिताने या खेलने की सामिग्री नहीं, बल्कि देश के जीवन-मरण और करोड़ों दरिद्रों के पेट-पालन की समस्या को हल करना समझें। ये हिन्दुस्तान को साम्यवादी स्वाधीन हिन्दुस्तान के रूप में देखना चाहते हैं। काकोरी के कैदियों द्वारा 'भारतीय प्रजातंत्रकी जय' का घोष करना इन्होंने खास तौरपर जोर देकर चलाया था। इतनी छोटी उम्रमें ही इन्होंने अपना ज्ञान-भंडार खूब बढ़ा लिया है। मातृभाषा बंगला के सिवा ये हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, उड़िया और फ्रेंच भी जानते हैं। आजकल जर्मन भाषा सीख रहे हैं। ये हिंदी और बंगलाके

लेखक भी हैं और हिन्दी तथा बंगला के पत्र--पत्रिकाओं में समय समय पर इनके लेख निकलते रहे हैं। बनारस से उन दिनों यह 'अग्रदूत' नामक साप्ताहिक क्रान्तिकारी हस्त लिखित पत्र भी गुप्त रूप से निकालते थे। इस के सम्पादक ये स्वयं ही थे। अंग्रेज़ी में भी इन के कई लेख निकले हैं। हवालात के समय के साहित्यक जमावों में इनका बड़ा मुख्य भाग होता था। इन के इन सब गुणों को देख कर श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल प्यार से अक्सर कहा करते, 'परमात्मा इसे दीर्घजीवी करे। यह बहुत बड़ा आदमी हो कर ही रहेगा।' शरीर से ये बड़े बलिष्ठ है और रोजाना नियमित रूपसे कसरत करते हैं। धैर्यवान ऐसे कि बड़ी से बड़ी मुसीबत में भी हंसते हुए कूदते फिरते हैं। हवालात में कहा करते कि अगर पं० रामप्रसाद जैसे बहादुरके सेनापतित्व में मरू' तो मैं अपना सौभाग्य समझूंगा। श्री राजकुमार सिनहा से इनकी बड़ी मित्रता है और दोनों एक दूसरेके प्रति बहुत स्नेह रखते हैं। श्री रामकुमार उम्र में अधिक होते हुए भी इन्हें श्रेष्ठ की नाईं आदर की दृष्टि से देखते हैं। अगर जेल से जिन्दा बच कर निकलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, तो इन की इच्छा है कि पत्रकार कलाके ज़रिये यथासाध्य देश की सेवा करेंगे। क्रान्तिकारी दल में नये आदमियों को भर्ती करने में दल को इनसे बड़ी सहायता मिली थी। जेल में अधिकारियों के अन्याय का विरोध करने के कारण इन्हें कई बार सजाएं मिल चुकी हैं। ये कहते हैं कि किसी उसूल पर लड़ते रहनेसे मेरा उत्साह और वज़न बढ़ जाता है। नैनी जेल में ऐसा ही हुआ भी था। इनका वजन १८ पौण्ड बढ़ गया था।
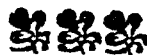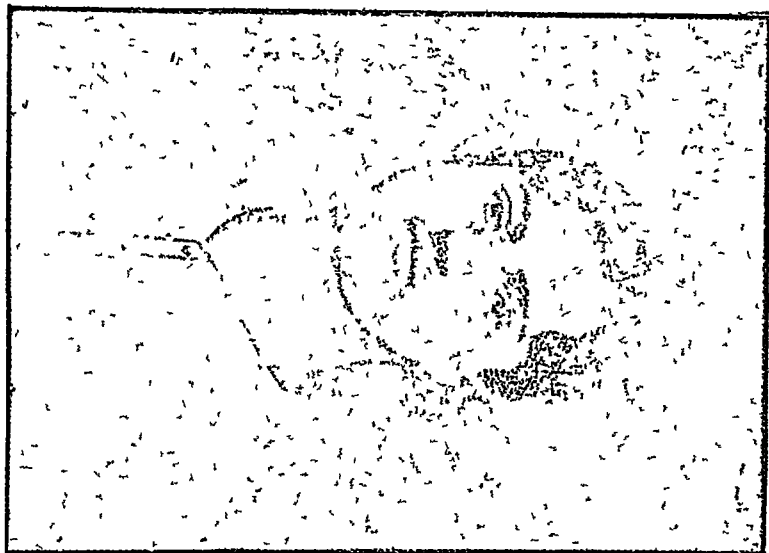
श्रीयुत भाई राजेन्द्रनाथ "लहरी"

श्रीयुत भाई राजेन्द्रनाथ 'लहरी' का शव चित्र।

हम सरेदार बसर शौक़ जो घर करते हैं।
ऊँचा सर क़ौम का हो और यह सर करते हैं॥
सूख जाये न कहीं पौधा यह आज़ादी का।

श्री शचीन्द्रनाथ बख्शी

शचीन्द्रनाथ बख्शी का जन्म २५ दिसम्बर १९०४ ई० में बनारस में हुआ था। इन के पिता फरीदपुर (बंगाल) के कृष्णपुर नामक गांव के प्रतिष्ठित बख्शी खान्दान के वंशज हैं। श्री शचीन्द्रनाथ बख्शी एक बड़े योग्य क्रान्तिकारी संगठन कर्त्ता हैं। श्री मन्मथ-नाथ गुप्त और श्री बख्शी, श्री योगेशचन्द्र चटर्जी के दो भुजा थे और बनारस का सुदृढ़ सङ्गठन इन्हीं लोगों के बल पर हुआ था। श्री राजेन्द्र लाहरी तो इन के संरक्षक और उत्साह दाता थे। श्री बख्शी के पिता काशी निवासी प्रवासी बंगाली है। युवावस्थामें कुछ दिनों तक ये जंगल विभाग में मुलाजिम थे। इस कारण श्री बख्शी को बच-पन में जंगलों में रहना पड़ा, जिस के फल स्वरूप वे बड़े साहसी और निर्भीक हो गये, श्री बख्शी ने १९२१ ई० में बनारस के ऐंग्लो बंगाली हाई स्कूल से मैट्रिक परीक्षा पास की। इसके बाद वे जिन दिनों बनारस क्वींस कालेज के एफ० ए० में पढ़ रहे थे, तभी पुलिस वालों की दृष्टि इन पर पड़ी, जिस के कारण एफ० ए० की परीक्षा देने के पहले ही इन्होंने पढ़ना छोड़ दिया। इस के बाद व्यायामशालाओं के संस्थापक की हैसियत से इन्होंने सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया। शुरू में इन्होंने 'सेण्ट्रल हेल्थ इम्प्रूविंग, नामक व्यायाम समिति स्था-पित की। इन के रहते रहते इस में नवयुवक सदस्यों का संख्या ७०-८० तक पहुंच गई और समिति सार्वजनिक जीवन

का एक मुख्य केन्द्र समझा जाने लगा। पर बाद को इस में
जी-हुजूरों का प्रवेश हो गया, जिस के कारण श्री बख्शीने इस
से अलग हो कर 'सेन्ट्रल हेल्थ यूनियन' नाम की व्यायाम
समिति स्थापित की। यह संस्था इस समय काशी के सार्व
जनिक जीवन में एक प्रमुख स्थान रखती है। श्री बख़्शी ने
इस समिति के द्वारा तैराकी प्रतिद्वन्द्विता का कार्य भी आरम्भ
किया था, और आज तक प्रति वर्ष इस समिति द्वारा ही चुनार
से बनारस तक की १३ मील का तैराकी प्रतिद्वन्द्विता हुआ
करती है। अब तक इस समिति के चार सदस्य राजनैतिक कैदी
हो चुके हैं। काकोरी केस वालों में श्री बख़्शी के अतिरिक्त
श्री मन्मथ और श्री राजेन्द्र भी इस के सदस्य थे। चौथे सदस्य
श्री केशव चक्रवर्ती थे, जिन्हें गवर्नमेण्टने बंगालके काले कानून
(आर्डिनन्स) के अनुसार गिरफ़्तार कर रखा था। ये भी का-
कोरी षड्यन्त्र में फांसे जाने वाले थे, परन्तु इधर प्रमाण
न मिला और काले कानून के शिकार बना दिये गये। श्री केशव
चक्रवर्ती बड़े ही दक्ष तैराक हैं। बनारस की १३ मील की तैराकी
प्रतिद्वन्द्विता में लगातार तीन बार प्रथम आ कर सैकड़ों रुपये
के तमगे आदि प्राप्त कर चुके हैं।

दिल्ली की स्पेशल कांग्रेस के कुछ दिन पहले श्री बख्शी
से श्री योगेश चटर्जी की भेंट हुई और वे क्रान्तिकारी दल में
सम्मिलित हो गये। वे तो मानों इसकी प्रतीक्षा ही कर रहे
थे। कुछ दिनों तक बनारस में काम करने के बाद ये झांसी
गये। वहां न तो कोई इनका परिचित था और न पास में इतना
रुपया ही था कि सुविधा से अपना कार्य-सञ्चालन कर सकें।
परन्तु ऐसे साहसी वीरों को विपत्तियों की कुछ परवा नहीं
होती है! ये वहां डट गये और काम करने लगे। इन्हें यहां

एक और बड़ी बाधा थी। झांसी में एक ऐसे महाशय हैं, जो क्रांतिकारी न होते हुए भी अपने को क्रांतिकारी बतलाते हैं, और इस प्रकार रुपये आदि ठग कर अपना उल्लू सीधा किया करते हैं। पहिले तो लाला मुकुन्दीलाल जैसे पुराने क्रांतिकारी भी इन के चक्कर में आ गये थे। पर श्री बख्शी उन के जाल में फंसने वाले जीव न थे। बख्शी जी का झांसी में रहना उन के लिये खतरनाक था, क्योंकि किसी भी वक्त उन की पोल खुल जाने की आशङ्का थी। इस लिये उन्हों ने निश्चय किया कि बख्शी जी को यहां से भगाना चाहिये। इस के लिये वे कई चाल चले, पर श्री बख्शी के सामने उन की एक न चली। एक दफे, उन्हों ने यह भी उड़ा दिया कि बख्शी पुलिस के आदमी हैं। पर श्री बख्शी इस से भी न दबे। इन बाधा विपत्तियों के होते हुए भी श्री बख्शी ने वहां बड़ी इज़्ज़त प्राप्त की। वे बहुत दिनों तक वहां एक अंग्रेज़ी पत्र के सम्पादक भी रहे। इस पत्र में उन्हों ने श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल की गिरफ़्तारी पर एक ज़ोरदार लेख लिखा था, इस पर इन से और प्रकाशक से विरोध हुआ और इन्हों ने सिद्धान्त के निमित्त पद त्याग कर दिया। गिरफ्तारी के वक्त वे स्थानीय म्युनिसिपैलिटी के चुनाव में खड़े होने वाले थे।

श्री बख्शी बहुत दिनों तक फ़रार रहे। २६ दिसम्बर (१६२५) को उन की भी गिरफ़्तारी का वारण्ट था, पर वे गिरफ़्तार न हुए, भाग गये। बाद को भागलपुर में गिरफ़्तार हुए। इन का मुकद्दमा मुख्य मुकद्दमे से अलग चला। इन को आजन्म काले पानी की सज़ा हुई। इस समय वह फ़तेहगढ़ जेल में हैं।

श्रीयुत बख्शी के ख्यालात इतने गरम हैं कि क्रान्ति-

कारियों में भी उन्हें गरमपन्थी (Extremist) कहना चाहिये। एक बार इन्हीं ने कुछ क्रान्तिकारियों से कहा था "तुम लोग चाहे जो कुछ समझो, मैं तो क्रान्तिकारी काम के बिना जी नहीं सकता। मैं यदि कभी देखूंगा कि सभी लोग खिसक गये हैं। कोई भी सहायक नहीं तब मैं अकेला ही अन्याय से लड़ूंगा। एक ऊंचे मकान में एक बन्दूक तथा कुछ कारतूस ले कर बैठ जाऊंगा, और कुछ न हो सका तो चिल्ला कर ही ऐलान कर दूंगा कि मैं बागी हूं, मेरे साथ जिसे लड़ना हो लड़े।" बख्शी जो राजनैतिक क्रान्तिकारी होने के अतिरिक्त सामाजिक क्रान्तिकारी भी हैं। उन का कहना है "केवल राजनैतिक क्रान्ति से या देश मे साम्यवाद का प्रचार होने से हमारा केवल एक आना काम हो चुकेगा, बाकी पन्द्रह आने सामाजिक, धार्मिक तथा नैतिक क्रान्ति से होंगे।" उन की समझ से समाज की अट्टालिका इस समय कुसंस्कारों तथा अनावश्यक प्राचीन प्रथाओं की भिती पर खड़ी है; उसको खोद कर विज्ञान तथा बुद्धि की नींव पर उसे स्थापित करना पड़ेगा, तभी देश का पूरा और वास्तविक कल्याण होगा। इन सामाजिक कुसंस्कारों को चुनौती देने के उद्देश्य से उन्हों ने कई बार गोमांस भी खाया। उन का कहना है कि यह कुसंस्कार है कि गाय को माता कहा जाय, और जानवर के पीछे मुसलमानों की अर्थात्——आदमियों की हत्या की जाय। हां, आर्थिक बुनियाद पर गोरक्षा अवश्य बहुत आवश्यक है। श्री बख्शी अपने वासस्थान काशी में पुरोहितों, पुजारियों तथा साधुओं की अपार ढोंग लीला लड़कपन से देखते आए थे। वे जानते हैं कि इन के बड़प्पन की कोई वास्तविक नींव नहीं है। इन का मान मिथ्या, कुसंस्कार तथा अनावश्यक लोकाचार पर अवलम्बित है, इस कारण उन को इस श्रेणी से

विशेष चिढ़ थी और इस पीपलीला को अन्त करने का काम नवयुवकों पर निर्भर बतलाते थे। एक बार काशी के पुरोहितों और ब्राह्मणों ने निश्चय किया कि काशी के ब्राह्मणों को एक सभा कर महात्मा गांधी के अछूतोद्धार विषयक कार्यों की तीव्र निन्दा की जाए, और स्पष्ट शब्दों में यह कह दिया जाए कि किसी सामाजिक वा धार्मिक विषयपर महात्मा जी का बोलना उन की अनधिकार चेष्टा हैं। काशी के षड्यन्त्रकारी दल में यह समाचार पहुंचा। श्रीयुत बख्शो ने कहा—"अव्वल तो हम लोगों को ऐसो सभा होने नहीं देना चाहिये और यदि हो भी जाय तो किसी भी हालत में उपरोक्त प्रस्ताव पास न होना चाहिये।" उनके इस निश्चयानुसार श्री राजेन्द्र लहरी, श्री बख्शी और श्री मन्मथ गुप्त दल बल के सहित सभास्थल पर समय से कुछ पूर्व ही पहुंचे। अभी बिचारे पण्डित लोग आ भी न पाये थे कि इन लोगों ने अपनी तरफ से एक सज्जन को सभापति बना कर वक्तृतायें शुरू कर दीं, और महात्मा गांधी की जय, तथा वन्देमातरम् ध्वनि सभास्थल को गुंजा दिया। पण्डितों ने आ कर जब यह हालत देखी तो बहुत शोर गुल किया, पर जनता उन के विरुद्ध थी, बिचारे करते तो क्या करते? बख्शी जी के प्रस्ताव पर सभा ने निर्णय किया कि महात्मा गान्धी बहुत उचित काम कर रहे हैं, उस के लिये वे दीर्घजीवी हों। दूसरे प्रस्ताव में यह निर्णय किया गया कि पण्डितों को लघु कौमुदो में लगा रहना चाहिये, महात्मा गांधो के कार्यों की समालोचना करने का उन्हें कोई अधिकार नहीं है। उस दिन से श्रीयुत बख्शी काशी के धर्म व्यवसाइयों के लिये एक भयानक शत्रु से हो गये थे। स्त्रियों और किसान तथा मजदूरों की उन्नति, सुधार और शिक्षा के सम्बन्ध में भी उन के विचार बड़े उन्नत हैं।

बख्शी जी बड़े ही सच्चरित्र तथा सीधे व्यक्ति हैं। उनको किसी बात का गर्व नहीं, पर आत्माभिमान उन में कूट कूट कर भरा है। वे हरेक क्रान्तिकारी को अपने भाई से भी बढ़कर प्रेम करते हैं। उन की बुद्धि बड़ी तीव्र है। एक बार वे लखनऊ की एक धर्मशाला में बन्दूकों की एक पेटी ले कर ठहरे थे। किसी कारण वहां के अध्यक्ष को उन पर सन्देह हुआ, तथा उस ने उन की तलाशी लेनी चाही। बख्शी जी तलाशी के पूर्व ही उसे अलग ले गये, और सब खोल कर कहा कि वे क्रान्तिकारी हैं और इन बन्दूकों का इस्तेमाल देश के निमित्त क्रान्तिकारी कामों में होता है। इस पर वह शख्स इतना प्रभावित हुआ कि बिलकुल शान्त हो गया, और कहने लगा, 'बाबू जी, आप के लिये मेरी जान हाजिर है!' खैर, थोड़ी देर बाद वे वहां से खिसक गये। यदि उन्हों ने इस प्रकार हाजिर बुद्धिमत्ता न दिखाई होती, तो उन्हें अवश्य 'लाल घर' जाना पड़ता। इस प्रकार ये कितने ही मर्तबा बचे। क्रान्तिकारी बख्शी काम की धुन में खाना भी भूल जाते हैं। वे समयाभाव के कारण दाढ़ी भी न बना पाते। और न अखबार ही ठीक से पढ़ पाते। इन्हों ने साम्यवादी साहित्य बहुत कम पढ़ा है, पर ये हमेशा वही बात करते और कहते हैं साम्यवाद की दृष्टि सब से उचित होती है। ये बड़े अच्छे तैराक तथा साइक्लिस्ट भी हैं। उन्हों ने एक बार क्रान्तिकारी दल की एक आवश्यकता के कारण लगातार झांसी से कानपुर तक बिना कहीं रुके साइकिल से सफ़र किया था। मुंहसे खून आने लगा था, पर तो भी वे कहीं न रुके।

श्री गोविन्दचरण कर

गोविन्द चरण कर बङ्गाल प्रान्त के सुदूर-पूर्व ढाका जिला के रहने वाले है। ये पुराने क्रान्तिकारी हैं। सोलह, सत्रह वर्ष की उम्र में ही पढ़ना छोड़ कर ये क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित हो गये। कुछ दिनों बाद पुलिस की दृष्टि इन पर पड़ी; और सन् १९१० ई० मे ही वह इनके पीछे पड़ गई। ये बड़ी सावधानी से काम करते रहे। पर अन्त में १९१६ ई० में पुलिस ने इन्हें गिरफ्तार कर ही लिया। पर ये सहज ही गिरफ्तार न हुए। उन दिनों ये पबना में रहते थे, पुलिस ने अचानक इन के मकान को घेर लिया। इन्हें सीधे गिरफ्तार होना पसन्द न आया। प्रश्न जीवन मरण का था, क्यों कि सामने हथियार बन्द पुलिस खड़ी थी। वह यह खूब समझते थे कि भागने पर गोली से मारे जायंगे या पकड़े जानें पर फांसी होगी। परन्तु इस बहादुरने चिन्ता को मार भगाया, और अपनी जान हथेली पर लेकर मकान के पीछे के रास्ते से निकल भागा। हाथ में भरा तमञ्चा था, और घोड़े पर उंगली; मकान के पीछे भी पुलिस सशस्त्र तैनात थी, परन्तु पुलिस के दिमाग में यह बात न आई कि जान पर खेल कर कोई ऐसी हिम्मत भी कर सकेगा कि उनकी राइफलों के मुंह के सामने से भाग निकलेगा। इस लिये उन के निकल भागने के कुछ देर बाद तक वह हत—बुद्धि सी रह गई। तब तक श्री कर महाशय धान के खेतों से होते हुए कई सौ गज निकल गये। पर शीघ्र ही पुलिस के कई सिपाहियों ने हाथ में बन्दूक लिये उनका पीछा किया। पुलिस

ने गोली चलाना भी आरम्भ किया। कर महाशय भी अपने तमंचेसे गोलियों का गोलियों से जवाव देने लगे। वे भागते जाते थे, तमंचा वदलते जाते थे; उस में गोली भरते जाते थे और साथ ही फायर भी करते जाते थे। उनका भागना, पुलिस वालों का पीछा करना और गोलियों का चलना लगातार बहुत देर तक जारी रहा। पुलिस इस आशा पर कि इनकी गोलियोंके ख़तम होते ही गिरफ़्तार कर लेंगे, पीछा करती जा रही थी। अन्त में हुआ भी ऐसा ही। कर वावू दौड़ते दौड़ते थक गये। पुलिस की कई गोलियां इन्हीं के लग चुकी थीं। लगातार खून निकलने से वदन में वहुत कमजोरी आ रही थी, और दुर्भाग्यवश वे इस समय ऐसी जगह जा पड़े थे, जहां खुला मैदान ज्यादा था, फसल वाला खेत कम। इन सव कारणों से उन्हें विश्वास सा हो गया कि अव और ज्यादा देर तक पुलिस से वचना सम्भव न होगा। इसी लिये वे धान के एक घने खेत में घुस कर बैठ गये, और अपनी वची वचायी शारीरिक शक्ति एवं कारतूसों की मदद से अन्त तक लड़ना निश्चित किया। पुलिस ने आड़ में रह कर खेत को घेर लिया, नज़दीक जाने की उस की हिम्मत न पड़ी; और अन्दाज़ ही से उन का लक्ष्य कर के वह गोली चलाने लगे। कर वावू भी गोली चलाते रहे, कई पुलिस वाले घायल भी हुये। आखिर उन की गोलियां खतम हो गयीं। पुलिस वहुत देर तक उन के तमंचे की आवाज न सुन कर खेत की तरफ वढ़ी और उसने उनको गिरफ़्तार कर लिया। उस वक्त वे अर्ध मृत और प्रायः वेहोश अवस्था में पाये गये। चलने की शक्ति नहीं थी, वदन की जगह जगह से खून की धार वह रही थी। पर गिरफ़्तारी के वक्त इन के पास हथियार का कोई नामोनिशान भी न था। पूछने पर कि तमञ्चा कहां है, उन्होंने आश्चर्यान्वित हो कर कहा—तमञ्चा कैसा?

मुझे तो गोली चलाना भी नहीं आता, मैं तो अभी तक आप ही लोगों की गोलियों की बौछार से आच्छादित था। पुलिस वाले ढूढ़ते ढूढते थक गये, पर तमञ्चा का कुछ भी पता न चला! गिरफ़्तारी के बाद श्री कर बहुत दिनों तक हिरासत के अस्पताल में रक्खे गये। अच्छा हो जाने के बाद उनपर 'पबना शूटिंग केस' चला। इस मुकद्दमें से बङ्गाल में बड़ी खलबली मच गयी थी। पुलिस ने इन पर हत्या करने का कोशिश करने की दफा लगवाना चाहा, पर पास में हथियार के न पाये जानेके कारण मुक़द्दमा जम न पाया; तिस पर भी इन्हें दस साल काले पानी की कैद की सज़ा हुई। काळे पानीमें आप कई साल रहे। उन दिनों अण्डमन में क्रान्तिकारियों की भरमार थी। अधिकारियों के सब अत्याचारों के रहते हुए भी कर महाशय का कहना है कि वहां का जीवन बड़ा आदर्श था। वहां बड़े बड़े विद्वान् इकट्ठे थे। सम्पादकों और लेखकों की कोई कमी न थी। देश पूज्य सावरकर, भाई परमानन्द वग़ैरह उस वक्त वहीं थे। कहने का मतलब यह कि एक रास्ते पर चलने वाले बहुत से सिद्धान्तवादी मुसीबत के कारण सौभाग्यवश एक स्थान पर एकत्रित हो गये थे। समय की कोई कमी नहीं थी। किताबों के पार्सल बराबर पहुंचते रहते थे। वहां एक ख़ासा पुस्तकालय बन गया था। सरकार तो यह समझती थी कि वह अपने शत्रुओंकी शक्ति उन्हें वहां बन्द कर कुचल रही है, पर, वास्तव में ज़्यादातर लोग वहां अपना भविष्य-निर्माण कर रहे थे। कर महाशय ने वहां काफ़ी अध्ययन किया। वे अपने उस जीवन को सदा याद किया करते, तथा काकोरी केस के हवालात के समय अण्डमनके राजनैतिक कैदियों के जीवन सम्बन्धी अनेक जानने लायक बातें बड़े ही रोचक ढंग से अपने दूसरे साथियों से कहा करते थे। इनकी इन बातों के सुनने से लोग कभी ऊबते न थे।

अभी पूरा चार साल भी न हो पाया था कि अस्वस्थता के कारण १९२० ई० में ये रिहा कर दिये गये। वहांसे लौटते ही आपने असहयोग आन्दोलन में भाग लेना शुरू कर दिया। ढाका के गांव गांव में बहुत प्रचार—कार्य किया। ढाका कांग्रेस कमेटी में इन का काफी प्रभाव था। इस जमाने में भी दिन रात सी० आई० डी० इन के पीछे लगी रहती थी। सन् १९२५ ई० में श्री शचीन्द्र नाथ सान्याल और श्री योगेश चन्द्र चटर्जी की गिरफ्तारी के बाद संयुक्त—प्रदेश के विप्लव—आन्दोलन को ठीक तरह से चलाते रहने के उद्देश्य से इन्हें बंगाल से इधर भेजा गया। संयुक्त—प्रान्त के बड़े बड़े शहरों में घूम कर इन्होंने षड्यन्त्रकारी आन्दोलन का प्रचार भी किया। इस केस में इनकी गिरफ्तारी लखनऊ में हुई। उन दिनों ये वहां वेश बदल कर अमीनाबाद के पास एक मामूली होटल में रहा करते थे। यहां रहने का पता केवल एक 'देशभक्त' महाशय को मालूम था, जिन्हों ने विश्वासघात कर के पुलिस को पता बतला कर इन्हें गिरफ्तार करवा दिया। यह 'देशभक्त' वही सज्जन हैं, जिन्हों ने बनारस में श्री कुन्दी लाल को भी गिरफ्तार करवाया था। इनकी गिरफ्तारी के बाद यह भी पता लगा कि उधर बंगाल सरकार 'आर्डिनेन्स' के द्वारा इन्हें अपना मेहमान बनाने के लिये अलग परेशान थी। चटर्जी को सेशन जजने दस सालकी सजा दी थी। परन्तु पुलिस को इस से क्यों सन्तोष होने लगा! उस ने औरों के साथ इनकी सज़ा बढ़ाने के लिये भी अपील की और अपील से इन्हें आजन्म काले पानी की सज़ा दी गई। काकोरी केस के हवालातियों में श्री कर सब से अधिक उम्र वाले होते हुए भी अपने को 'लड़का' और 'योद्धा' कहने में गौरवान्वित होते थे। पहली बार की गिरफ्तारी के समय से, पुलिस की

गोलियों के तीन चार चिन्ह अब भी इन की देह में बने हुए है। आप कहते हैं कि यही हमारा तमगा है। आप क्रान्ति और स्वाधीनता प्राप्ति के विभिन्न पहलुओं पर सदा विचार करते रहते हैं और सदा दूसरे स्वतन्त्र देशों के इतिहास से अपने देश की तुलना का व्यग्र होते हैं। इन्हों ने कितनी ही रातें इन्हीं बातों को सोचने मे बिताई हैं। इन का जीवन लड़कपन से ही त्यागमय, और कठोर रहा है। ये अभी तक अविवाहित हैं। इन्हों ने पंजाब तथा बम्बई प्रान्त के प्रायः सभी नगरों में भ्रमण किया है। अहमदाबाद के मज़दूरों के जीवन का इन्हें अच्छा ज्ञान है। कई प्रकार के उद्योग धन्धों को भी ये अच्छी तरह जानते हैं। मज़ाकिया तो अव्वल दर्जे के हैं। हवालात में इन लोगों का जो जमाव होता, ये उस में बहुत प्रमुख भाग लेते थे। हवालात के समय लखनऊ में १५ दिनों तक और सज़ा के बाद फतेहगढ़ जेल में ४५ दिनों तक इन्हों ने अनशन किया था। पहले कुछ दिनों तक ये ढाका-हिन्दू-सभा के मन्त्री भी रह चुके हैं।

युवकों का जै घोष

कुछ सोच न कर ले कटती हैं सब कड़ियां तेरी गुलामी की।
यह हम से हो सकता ही नहीं कि सूरत देखें नकामी की॥
क्या फिक्र तुझे मां! कैसे कटे हम नन्हें नाहें, बेचारों से।
ज़न्जीर कभी जो कट न सकी इन बूढ़ों के औज़ारों से॥
हम जतो सती हैं ऐ माता! हम तेरा मान बढ़ायेंगे।
जो हम ने तुझ को वचन दिया वह पूरा कर दिखलायेंगे॥

श्री मुकुन्दी लाल ।

श्री

मुकुन्दी लाल इटावा ज़िले के औरइया कस्बा के रहने वाले है । इनके पिता एक प्रसिद्ध अमीर व्यापारी थे । मरते वक्त वे काफ़ी धन छोड़ कर मरे थे । उस समय लाला मुकुन्दी लाल की उम्र सिर्फ १४ वर्ष की थी। इन का राजनैतिक जीवन मैनपुरी षड्यन्त्र के प्रसिद्ध नेता श्रीयुत गेंदालाल दीक्षित के सह-वास से, जो औरइया में शिक्षक थे, आरम्भ हुआ। श्री गेंदालाल जी ही इन्हें इस पथ पर लाये। ये उन्हें अपना गुरु मानते हैं। श्री गेंदालाल जी एक बार लोक-मान्य तिलक से मिलने के लिये पूना गये थे। वहां से लौटने में देरी होने के कारण ये नौकरी से वर्खास्त कर दिये गये। उस समय ला० मुकुन्दी लाल ने जी खोल कर उन की मदद की। श्री मुकुन्दी लाल ने श्री गेंदालाल जी दीक्षित को उन के इस कार्य मे खूब आर्थिक मदद पहुंचाई। इन्हों ने अपने मकान के एक बड़े हिस्से को भी उन के रहने के लिए दे दिया था। आरम्भ से ही ये क्रांतिकारी दल के एक ज़िम्मेदार सदस्य रहे। कहते हैं कि सन् १६१७ ई० में हिन्दी के क्रान्तिकारी पर्चे के बांटने में इन का ज़बर्दस्त हाथ था, जो एक ही दिन सारे युक्तप्रांत में बांटा गया था, और जिस के कारण प्रान्त भर में भारी हल-चल मच गई थी। इस के कुछ ही दिनों बाद मैनपुरी षड्यन्त्र का मुक़दमा चला। यह भी उस सम्बन्ध में गिरफ़्तार हुए, और छः साल की सज़ा पाई। अपनी पूरी सज़ा नैनी जेल में काट कर, सन् १६२६ ई०

में ये मुक्त हुये। पुलिस इन से बहुत चिढ़ी हुई थी, और सिर्फ इसी कारण १९२० ई० में जब और सब लोग राज़ घोषणा में छोड़े गये, यह नहीं छोड़े गये। उन दिनों जेल में बड़ी धांधागर्दी हुआ करती थी, जिस के कारण जेल में इन्हें अनेक मुसीबतें सहनी पड़ी। कैदियों पर इन का बड़ा नैतिक प्रभाव रहा। जेल में ये म० गान्धी के शिष्य कहे जाते थे। जेल से लौट कर इन्होंने फिर देश के खुले कामों में हाथ बटाया। सन् १९२४ में इन की भेंट श्रीयुत शचीन्द्रनाथ बख्शी से झांसी में हुई। इन्हीं की मार्फत ये 'हिंदुस्तान रिपब्लिकन ऐसोसियेशन' के सदस्य हुए। समिति के लिए इन्होंने दिल खोल कर काम किया। काकोरी के मुकद्दमे के आरम्भ से ही ये फरार थे। फरारी के वक्त में इन्हें अनेक मुसीबतों का सामना करना पड़ा। आज यहां हैं तो कल वहां। न किसी से सहानुभूति मिलती थी। न किसी को मित्र बना कर अपना सच्चा परिचय देने का ही साहस होता था। नियमित रूप से खाना भी नहीं मिलता था। रात को सोते वक्त चूहे की आवाज से भी दहसत मालूम होती थी। ऐसी अवस्था में भी ये सन् १९२५ की कानपुर की कांग्रेस देखने का लोभ संवरण न कर सके। कांग्रेस में खुफिया वालों की भरमार के कारण गिरफ्तार हो जाने की, पूरी सम्भावना थी। पर इसकी इन्हों ने कोई परवा नहीं की। इसी अवस्था में ये एक मर्तबा रेल में जब भेष बदले सफ़र कर रहे थे, आगरे में एक इन्सपेक्टर ने इन से टिकट मांगा। पास में पैसा न होने के कारण ये टिकट न ले सके थे, इन्सपेक्टर ने इन पर कानूनी कार्रवाई करने की इच्छा प्रकट की। मामला बहुत नाजुक था। किसी खुफिया से भेंट हो जाना कोई असम्भव बात न थी। अन्त में इस देश भक्त ने अपने पहने के कपड़े बेच कर वहां से अपनी जान बचाई। उन

दिनों सख्त जाड़ा पड़ रहा था। पाठक यह महसूस कर सकते हैं कि मुल्क के लिये मर ने वालों को अपनी ज़िन्दगी में कैसी कैसी आपत्तियों का सामना करना पड़ता है! इस घटना के कुछ ही दिन बाद आप दिन दहाड़े काशी के कारमाइकेल पुस्तकालय में गिरफ्तार हुये। गिरफ्तार होने की घटना आश्चर्यजनक थी। इन के परिचित एक 'देशभक्त' महाशय ने सहायता भेजने के बहाने धोखा दे कर, इन का बनारस का पता जान लिया और उन्हीं के विश्वासघात के कारण ये वहां पकड़े गये। ये 'देशभक्त' महाशय भी काकोरी के अभियुक्तों में थे, पर अपनी करतूत और सरकार की विशेष कृपा से बाद को बरी हो गये! काकोरी के मुकद्दमे में श्री मुकुन्दीलाल को दस साल सख्त कैद की सज़ा मिली, पर पुलिस ने इन का नाम भी उन छत्रों में रक्खा, जिन की सज़ा बढ़ाने के लिये उस ने अपील की फल स्वरूप इन की सज़ा बढ़ा कर आजन्म काले पानी की कर दी गई। ये इस समय श्री राजकुमार सिंह और श्री मन्मथ नाथ गुप्त के साथ बरेली सेण्ट्रल जेल में हैं। इस वक्त इन की उम्र करीब ३६ वर्ष की है। अपनी पत्नी के एक मात्र सहारा होते हुये भी इन्हों ने उनका भार भगवान को सौंप दिया है। भगवान ही जानें कि इस महिला पर क्या बीतती होगी? मैनपुरी की कैद के बाद बाहर आकर इन्हों ने अपनी सम्पत्ति को स्वाहा पाया था। फिर भी ये निराश न हुये और अपने हृदय को खोखला नहीं बनने दिया। देश का कार्य वैसे ही करते रहे। ये जेल में बड़े धैर्य, शान्ति और सन्तोष के साथ रहते तथा चेहरे पर कभी उदासी नहीं आने देते। इनका शरीर बड़ा बलिष्ट है। पहलवानी का शौक़ बचपन ही से रहा है। इस में नाम भी काफ़ी पैदा किया है। दोनों बार के

अनशन में इन्होंने भाग लिया। इन्होंने अपने कस्बे के लोगों को पुलिस के जुल्मों से भरसक बचाया; इस से आपकी पुलिस से हमेशा खटपट बनी रही। काशी रहते वक्त आपने कितनी ही औरतों को गुण्डों के हाथ से बचा कर या तो उन को उनके घर भेजने का प्रबन्ध करवा दिया या ऐसी संस्थाओं में रखवा दिया, जहां उनके भरण पोषण का पर्याप्त प्रबन्ध हो गया है। ये हिन्दी और उर्दू जानते हैं। हिन्दी में इधर काफी अध्ययन किया है। आज कल अंग्रेजी पढ़ रहे हैं। अखबार पढ़ने के बेहद शौक़ीन हैं। नये विचारों के पूर्णतया पोषक हैं, और स्त्रियों को स्वाधीनता देने के बड़े पक्षपाती हैं। रूस के साम्यवाद आन्दोलन को दुनियां के लिये कल्याणकारी बतलाते हैं।

अहसान्ने ग़म नहीं, हमें परवाहे ग़म नहीं।
हमने समझ लिया है, कि दुनिया में हम नहीं॥
बुल बुल को गुल पसन्द है और गुल को बू पसन्द।
किसी को कुछ पसन्द हो पर मुझ को तू पसन्द॥

श्री रामदुलारे त्रिवेदी

श्री० रामदुलारे त्रिवेदी कानपुर जिलाके रहने वाले हैं। यह कानपुर में स्काउट मास्टर थे। इन्होंने सन् १९२३ ई० में श्री० योगेशचन्द्र चटर्जी के साथ शाहजहांपुर, अलीगढ़, झांसी आदि स्थानोंमें क्रान्तिकारी दलके संगठनके लिये भ्रमण किया था बंगला, हिन्दी, तथा अंग्रेजी अच्छी तरह जानते हैं, असहयोग के जमाने में भी जेल की सज़ा भुगत चुके हैं। इनकी अवस्था लगभग ३२ साल की है: —

ख़ौफ़ आफ़तसे कहां दिल में रिया आयेगी।
बात सच्ची है वह लब पै सदा आयेगी॥
दिलसे निकलेगी न मरके भी वतनकी उल्फ़त।
मेरी मिट्टी से भी खुशबूए वफ़ा आयेगी॥
मैं उठा लूंगा बड़े शौक़ से उसको सर पर।
ख़िदमते क़ौम में जो रंजो बला आयेगी॥
सामना सब्रो शुजाअत से करूंगा मैं भी।
खिचिके मुफ्तलक जो कभी तेग़े जफ़ा आयेगी॥
गर जौम और खुदी से जो करेगा हमला।
मेरी इमदाद को खुद जाते खुदा आयेगी॥
आत्मा हूं मैं बदल डालूंगा फौरन चोला।
क्या बिगाड़ेगी अगर मेरी क़ज़ा आयेगी॥
खूब रोयेगी मेरे लाशे पै शमा बादे शफ़क़।
ग़म मनाने के लिये काली घटा आयेगी॥
अब्रतर अश्क़ बहायेगी मेरे लाशे पर।
ख़ाक उड़ाने के लिये बादे सबा आयेगी॥
ज़िन्दगी में तो मिलने से झिझकती है फ़लक।
खल्क़ को याद मेरी बादे फ़ना आयेगी॥

श्रीयुत शचीन्द्रनाथ सान्यालकी माताका शव चित्र
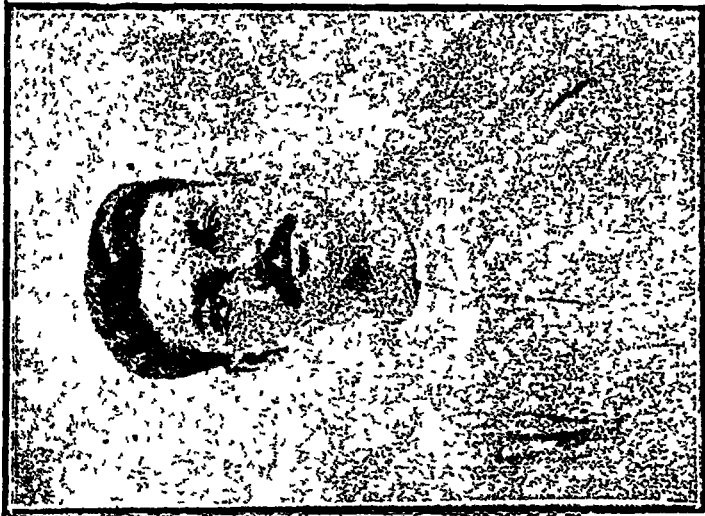
श्रीयुत भाई शचीन्द्रनाथ सान्याल।
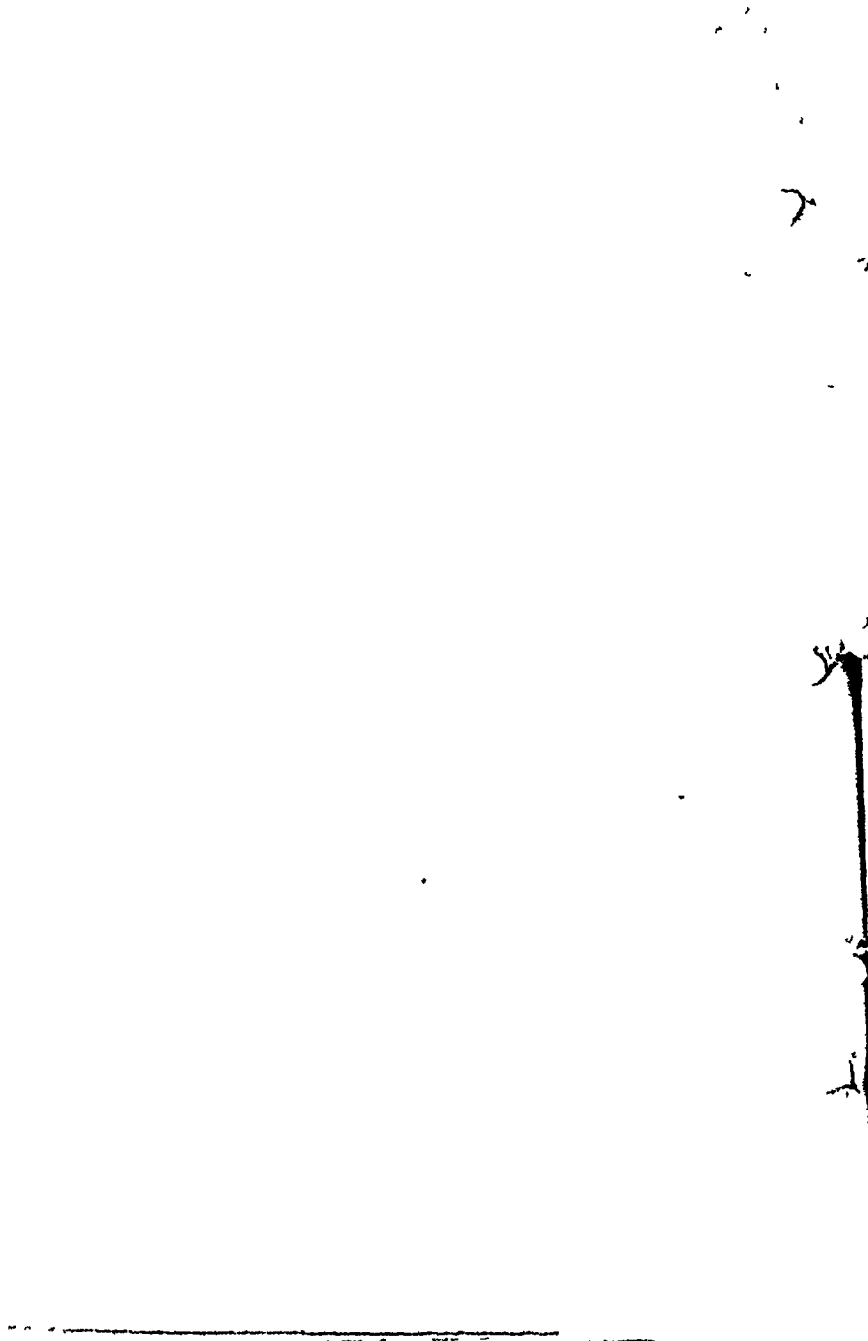
श्री राजकुमार सिन्हा

राज कुमार सिन्हा कानपुर के प्रतिष्ठित बंगाली स्वर्गीय बाबू मार्कण्डे दास सिन्हा के पुत्र हैं। १८ दिसम्बर सन् १९०५ ई० में मार्कण्डे-भवन करांची खाना, कानपुर में इन का जन्म हुआ था। इन के पिता परोपकारी, उदार-चेता और धर्मपरायण व्यक्ति थे। अपनी फुर्सत के समय में सदा अपने बच्चोंको धार्मिक कहानियां सुनाया करते थे। इन की माता भी एक सु-शिक्षित महिला हैं। श्री राजकुमार के ऊपर अपने माता पिता के उपदेश और पवित्र जीवनका बड़ा प्रभाव पड़ा है।

श्री राजकुमार जिस समय गिरफ्तार हुए, उस समय वे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के बी० एस—सी० में पढ़ते थे। स्कूली या कालेजी पाठ्य पुस्तकों की अपेक्षा इन को अख़बार तथा बाहरी पुस्तकों से अधिक प्रेम था, और समय मिलते ही ऐसी चीजों का अध्ययन करते थे। श्री राजकुमार का राज-नैतिक जीवन दिल्ली की स्पेशल कांग्रेस—१९२३ ई० से आरम्भ हुआ। हृदय में स्वदेशानुराग भरा था। फलतः उन्होंने क्रान्ति-कारी दल में प्रवेश किया। सन् १९२५ के शुरू में समस्त भारतमें सुप्रसिद्ध (Revolutionary)'क्रान्तिकारी' पर्चे बांटे। काशीके हिन्दू विश्वविद्यालय में ये पर्चे खूब बंटे। सवेरे उठ कर ही छात्रों ने तथा विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने देखा कि हरेक कमरे के प्रवेश द्वार पर एक एक पर्चा पड़ा है; तथा टट्टियों की दीवार तक पर बहुत से पर्चे चिपके हैं। उसी वक्त मालवीयजी को

तथा अन्य अधिकारियों को खबर दी गई, जिरह हुई, प्रश्न हुए, पर कुछ भी पता न लगा। इन्हों ने भी अपने कमरे में एक पर्चा पाने की रिपोर्ट की थी !

हिन्दू विश्व-विद्यालय के बंगाली नव युवकों की 'बंगला छात्र परिषत्' एक संस्था बहुत दिनों से चली आ रही है। इसका उद्देश्य विश्व-विद्यालयके बंगाला छात्रों में बंगला साहित्य के प्रति प्रेम बढ़ाना है। श्री राजेन्द्रनाथ लहरी के अनुरोधसे श्री राजकुमार ने भारत में राष्ट्रीय आन्दोलन और छात्रों का कर्त्तव्य' नामक एक बंगला निबंध लिखा। यह निबंध परिषद् के एक अधिवेशन में पढ़ा गया, लोगों ने इस की बड़ी प्रशंसा की। बाद को यह निबंध अदालत में भी पेश हुआ था और पुलिस ने इसे राजद्रोहात्मक बतलाया था। इस में सन्देह नहीं कि यह निबंध राष्ट्रीयताके भावों से ओत प्रोत था और भावुक नवयुवक लेखक के हृदय का प्रतिबिम्ब इसके पन्ने पन्ने पर था। श्री राजकुमार अपने विश्व-विद्यालय के टेरिटोरियल फोर्स के सदस्य थे। उन्हें इस बात का बहुत दुःख है कि गिरफ्तारी के कारण उनको सामरिक शिक्षा न मिल सकी। ये २६ सितम्बर १९२५ ई० को गिरफ्तार न हुए। पुलिस को उस समय तक उनका पता न था। बाद को श्री लहरी के कुछ कागज़ात से इन के ऊपर पुलिस को शक हुआ और ३० अक्टूबर को बनारस में उनके कमरे की तलाशी हुई। उस समय वे बीमार हो कर कानपुर पड़े थे। तलाशी में एक विंचेस्टर राइफल, एक शेरउड राइफल तथा एक पुलिस दारोगा का कब्बा और पगड़ी मिली, फिर तो दूसरे ही दिन वे कानपुर में गिरफ्तार कर लिये गये। विंचेस्टर राइफल के सम्बन्ध में पुलिस ने यह भी साबित किया कि यही राइफल मैनपुरी षड्यन्त्र में भी इस्तेमाल किया गया था। पगड़ी के सम्बन्ध में सरकारी वकील पं० जगतनारायण ने कहा कि कदाचित इस पगड़ी से क्रांतिकारियों ने सरकार को

या तो कहीं धोखा दिया है। या भविष्य में धोखा देने का विचार कर रहे थे। गिरफ्तारी के बाद श्री राज कुमार कुछ दिनों तक कानपुर जेल में रक्खे गये। वहां इन पर हर तरीके का दबाव डाला गया कि वे सब बातें कबूल करें। पर वे किसी तरह न डिगे। वे वहां दिन रात एक कोठरी में बन्द रक्खे जाते थे और जिरह आदि द्वारा बहुत परेशान किये जाते थे। ५ दिसम्बर को वे मुकद्दमे के लिये लखनऊ जेल भेजे गये इस के कुछ ही दिन बाद उन के पिता का देहान्त हुआ। इस से उनको बहुत चोट पहुंची। पर उन्हों ने हृदय पर पत्थर रख कर सब कुछ सहन किया। कर ही क्या सकते थे? जिसका देश गुलाम है, जो स्वयं बन्दी है, उसका पिता ही क्या, और उस के लिये पितृ शोक ही क्या? उनका दिल बहुत चाहा कि ज्येष्ठ पुत्र की हैसियत से घर के लोगों को जाकर सान्त्वना दें, इस के लिए ज़मानत की दरख्वास्त दी गयी, पर कौन सुनता है? जवाब मिला "तुम बागी हो, न्याय तथा शान्ति के शत्रु हो, तुम्हें जेल में ही रहना पड़ेगा।"

हवालात के सार्वजनिक जीवन में उनका बड़ा भाग रहा। वे बहुत अच्छे गाने वाले हैं। उनका गाना सुनने के लिये लोग हर वक्त उत्सुक रहते थे हारमोनियम सिखाने में तो सब के उस्ताद वही थे। वाद विवाद वगैरह में भी वे हमेशा भाग लेते रहे, और लोगों के कहने पर उन्हों ने एक बार चीन पर अंग्रेजी में भी वक्तृता भी दी थी। हवालात में इन्हों ने फ्रेंच भाषा सीखना प्रारम्भ किया। अब वे कोई भी फ्रेंच पुस्तक आसानी से पढ सकते हैं। इन दिनों वे मराठी तथा जर्मन भाषा का अध्ययन कर रहे हैं। हवालात में वे प्रति दिन नियमित रूप से पढ़ा करते थे। उन को अन्तर-राष्ट्रीय राजनीति से बहुत प्रेम है, और वह इस सम्बन्ध में विशेष रूप से अध्ययन करते हैं।

बाहर वे प्रतिदिन नियमित रूप से १०।१२ अख़बार देखा करते थे, हवालात में भी वे ५।६ अख़बार पढ़ ही लेते थे। ये कहते हैं कि अख़बार पढ़ने की चाट ही से मेरा दिल राजनीति की ओर झुका है। उन्हों ने वाल्टेयर,रूसो,गोर्की,टाल्सटाय आदि प्रसिद्ध लेखकों के ग्रन्थों का अध्ययन किया है। बंगला मातृ भाषा होनेके कारण इस के प्रति तो इन का स्वाभाविक ही विशेष प्रेम है।

श्रीराजकुमार सिनहा का क़द लम्बा और शरीर यथेष्ट मज़-बूत है। वे साइकिल चढ़ने तथा दौड़ने में बड़े दक्ष हैं। उन्हों ने एक बार लखनऊ से कानपुर तक एक दम में साइकिल से यात्रा की थी। फैसला के बाद बरेली सेन्ट्रल जेल में पहुंचते ही सर-कार के अन्याय के प्रतिवाद में अनशन आरम्भ किया। उन्हों ने लगातार ३८ दिनों तक उपवास किया। इस बीच में उन के मुंह में पानी के अतिरिक्त और किसी चीज़ का एक दाना भी नहीं गया। उनका वजन प्रायः ४७ पौंड घट गया। एक दफे तो उन की हालत इतनी ख़राब हो गई थी कि जेल के इन्सपेक्टर जनरल कर्नल क्लीमेन्ट भी आ गये थे। हवालात में भी इन्हों ने एक बार १६ दिन का अनशन किया था।

श्री राज कुमार आज कल के नवयुवकों की भाँति सुकुमार नहीं हैं। उन्हें हर तरह के काम से बड़ा प्रेम है। हवालात में ये जहां तक हो सकता था, अपना काम अपने ही हाथ से करते थे। इन्हें लड़कपन से ही किसी तरह का हाथ का काम सीखने का शौक़ था। एन्ट्रेन्स पास करने के बाद इन्हों ने कानपुर के चमड़े के कारख़ाने में चमड़े का काम सीखने के लिये प्रवेश किया। इस कारख़ाने में इन की प्रशंसनीय उन्नति देख, कारख़ाने का साहब उन पर बहुत ख़ुश था। गान्धी शाही के युग में इसी साहब ने एक दिन आज्ञा दी कि कोई भी छात्र या

कर्मचारी गान्धी टोपी पहन कर कारखाने में न आवे। श्री राज
कुमार बंगाली होने के कारण यों तो कभी टोपी नहीं पहिनते थे
किन्तु साहब को ऐसा हुक्म देते देख उन से न रहा गया। इस
निमूछिये युवक ने चुनौती को स्वीकार कर लिया और दूसरे ही
दिन वहां गांधी टोपी पहिन कर पहुंचा। साहब ने उन्हें
बुलाया और बहुत समझाया, पर उन्हों ने कहा, 'मैं आप से यह
काम सीखता हूं, आप को और किसी बात से क्या मतलब ?'
साहब ने बहुत खेद प्रकट करते हुए उन को कारखाने से अलग
कर दिया। इस से श्री राजकुमार सिन्हा की स्वाधीन मनोवृत्ति
साफ जाहिर होती है। जेल में भी वे अफ़सरों से कभी दब
कर नहीं चलते हैं।

श्री राजकुमार सिन्हा का ख़्यालात बिलकुल साम्यवादी
हैं। वे जात पांत बिलकुल नहीं मानते, तथा हर तरह के धार्मिक
कुसंस्कारों को त्याज्य समझते हैं। इस समय (१९३० ई०)
उन की उम्र केवल २५ साल की है। श्री राजकुमार को हमेशा
विदेशी मामलों में बहुत दिलचस्पी रही। ये भारतीय इतिहास को
सम-सामयिक विश्व इतिहास से मिलाकर पढ़ने वाले विद्यार्थी
हैं। वे समस्त दुनिया को स्वाधीन देखना चाहते हैं। और कहते
हैं कि भारतवर्ष पर दुनिया को स्वाधीन करने का भार है। उस के
स्वाधीन होते ही सारी दुनिया खुद बखुद स्वाधीन हो जायेगी
सज़ा से श्री राजकुमार बिलकुल नहीं घबड़ाये। वे कहते हैं
"जहां तक मुझे राष्ट्रीय तथा अन्तर-राष्ट्रीय राजनीति का पता है
उस से मैं कह सकता हूं, मुझ को सरकार १० साल तक क़ैद नहीं
रख सकती, किन्तु यदि रख भी पाई तो मुझे कोई खेद नहीं—मैं
जेल से प्रकाण्ड विद्वान होकर निकलूंगा"।

श्री रामकृष्ण खत्री
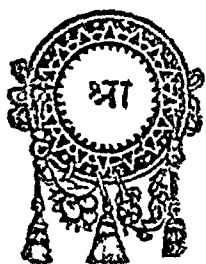
राम कृष्ण खत्री का जन्म चिरवली (बुलडाना बरार) में सन् १६०३ ई० में हुआ था। आप के पिता का नाम श्री शिवलाल खत्री था, और श्री राम कृष्ण के लड़कपन में ही उन का देहान्त हो गया था। पिता के देहान्त के बाद इन के बड़े भाई ही इन के अभिभावक हुए। वह चांदा में कपड़े की दूकान करते हैं, इस लिये रामकृष्ण जी को भी वहीं रहना पड़ा। वे स्वभाव के बड़े नटखट और चतुर हैं। इन की बुद्धि और मेधा इतनी अच्छी है कि स्कूल में बहुत थोड़ा पढ़कर भी अपने क्लास में सबसे अच्छे रहते थे। बचपन में जब नीचे के दर्जे में पढ़ते थे, इन्होंने एक दिन सुना कि दूरके एक गांवमें लोकमान्य तिलक का व्याख्यान होगा। घरपर बिना किसी से कहे अपने भाई की घोड़ी लेकर कई साथियोंके साथ वे वहां पहुंचे और लोकमान्यका दर्शन कर तृप्त हुए। लोकमान्यका भाषण हुआ, पर बच्चों की कुछ भी समझ में न आया। अन्तमें लोकमान्यने कहा कि जिसको कुछ सन्देह हो पूछे। लड़कों के मन में सन्देह ही सन्देह भरा था। उन्होंने विचारा कि लोकमान्य से पूछा जाय कि बच्चोंके लिये भी कुछ काम है? बात तो सोच लीगई;पर प्रश्न करने की किसी को हिम्मत ही न हो। अन्तमें श्रीराम कृष्ण ने प्रश्न पूछा। लोकमान्य ने कहा, 'तुम माता, पिता और गुरु की आज्ञा मानो, तथा उनकी सेवा करो।' पर इस उत्तर से श्री राम कृष्ण को कुछ अधिक सन्तोष न हुआ, वे कुछ और ही उत्तर चाहते थे। घरपर रहना और बराबर पढ़ते रहना इन्हें अच्छा नहीं लगता था। कहते दिन रात पढ़ो पढ़ो लगा रखा है, इस से

तो कहीं अच्छा नहर में तैरना और बागों में फल चुराना होता ?
न मालूम किस दुष्टने नन्हें नन्हें बच्चों को कष्ट देने के लिये
लिखने पढ़ने का आविष्कार किया था। खैर; किसी प्रकार दसवें
दर्जे तक पहुंचे। इसी समय एक विशेष प्रिय पात्र के वियोग के
कारण इनको वैराग्य हुआ, और वे काशी पहुंचे, और साधुओं
के कुछ असर से गेरुआ वस्त्र धारण कर साधु बन गये। अब
उनका नाम ब्रह्मचारी गोविन्द प्रकाश हो गया। इस समय ये प्रादे-
शिक उदासी महामण्डल काशीके मन्त्री हो गये। धीरे धीरे सा-
धुओं की सब पोल उनके सामने खुलने लगी, और उन्होंने अच्छी
तरह से जान लिया कि वे कितने भारी दुराचारी, लोभी और ढोंगी
होते हैं। एक बार एक बंगाली साधु भुलावा देकर इन्हें एक
विचित्र मकान में ले गया। रामकृष्णने सामने काली की मूर्ति
देखी। कुछ सन्देह जनक बातों से उन्हें ज्ञात हो गया कि, साधु
उन्हें वहां बलि देना चाहता है। वे किसी बहाने छत पर खिसक
गये, तथा वहां से कूद कर भाग निकले। साधुओं को ये बड़ी
घृणा की दृष्टि से देखते तथा कहते कि उन्हें जीते जी गंगा जी
में डुबो देने से डुबाने वाले को मुक्ति मिलेगी, और देश का
कल्याण होगा। ऐसे बेकार व्यभिचारी और विलास-प्रिय व्यक्तियों
को कानूनन शादी करनेके लिये मजबूर करना चाहिये या जेल में
चक्की चलवानी चाहिये। श्री रामकृष्ण ने असहयोग के जमानेमें
शराब तथा विलायती कपड़े के बहिष्कार के लिये दूकानों पर
पिकेटिंग भी की थी। १९२३ ई० में ये क्रान्तिकारी दलमें शामिल
हुए, और धीरे धीरे दलके एक प्रमुख कार्यकर्त्ता हो गये। वे
युक्तप्रान्त से महाराष्ट्र में संगठन और प्रचारकी दृष्टि से भेजे गये
थे। श्री लहरी और श्री रामप्रसाद के नाम उनकी लिखी चि-
ट्ठियां जो मुकदमे में पेश हुई थीं; पटियाला, जबलपुर, चांदा,
पूना आदि जगहों से लिखी हुई थीं। एक जगह से एक पत्र में

इन्हों ने पं० रामप्रसाद 'बिस्मिल' को लिखा था, कि "यहां अब मेरी तिजारत शीघ्र ही अच्छी तरह चलेगी । कोलेज के कुछ कुछ युवकों ने ग्राहक बन कर सहायता देने का वचन दिया है।" रामकृष्ण का चेहरा बहुत ही छोटा हैं, और आंखों से एक अजीव ज्योति छिटकती है। शरीर से दुबले, पर बड़े फुर्तीले हैं। हवालात में बराबर कसरत करते थे। ये पूना में गिरफ्तार किये गए। केवल एक इस आदमी को गिरफ़्तार कर ने के लिए १०० हथियार बन्द फ़ौजी भेजे गए थे । हवालात में ये सदा प्रसन्न चित्त रहते और इन के अच्छे गुणों के कारण सभी लोग इन से बहुत प्रसन्न रहते थे । शारीरिक स्वच्छता के साथ साथ मानसिक पवित्रता के भी बड़े पक्षपाती हैं। इन का स्वभाव बड़ा सरल और मिलनसार है, सहज में ही एक अपरिचित व्यक्ति से भी इनकी मित्रता हो जाती है। इन्हों ने पंजाब, युक्तप्रान्त, बिहार, मध्यप्रान्त और महाराष्ट्र का भ्रमण किया है। इन की बातें सदा रसीली और दिलचस्प होती हैं। लड़कपन से इन्हें पढ़ने से जितनी नफरत थी, इस समय पढ़ने का उन्हें उतना ही अधिक शौक़ बढ़ गया है। ये मराठी गुजराती, गुरुमुखी, हिन्दी, अंग्रेजी और बंगला अच्छी तरह जानते हैं। बंगला और गुजराती तो इन्हों ने जेल में ही सीखी है। पुस्तकें संग्रह करने का इन्हें नशा सा है और जेल में भी इन्हों ने कितनी अच्छी अच्छी पुस्तकें खरीदी हैं। ये सदा लोकमान्य तिलक के इस वाक्य को कि "स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे ले कर रहूंगा।" कहा करते हैं। हवालात में रहते समय इन्हों ने १६ दिनों का अनशन किया था। काकोरी षड्यन्त्र केस में इन्हें दस वर्ष की सख़्त कैद की सज़ा हुई। ये हिन्दी और मराठी में अच्छा व्याख्यान दे लेते हैं ये पक्के साम्यवादी विचार के पोषक हैं।

श्री विष्णुशरण दुबलिस।

श्री विष्णुशरण दुबलिस मेरठ के रहने वाले हैं। असहयोग के जमाने में इन्हों ने बी० ए० से अपना पढ़ना छोड़ दिया था और डेढ़ साल के लिये जेल भी गए थे। इन के साथ लखनऊ जैल में विशेष व्यवहार की आज्ञा हुई थी, पर इन्हों ने जब देखा कि अन्य कई असहयोगियों के साथ वहाँ पर साधारण कैदियों का सा व्यवहार होता है, तब इन्हों ने अपने साथ विशेष व्यवहार किये जाने से इनकार कर दिया था ये सन १९२३ से पहिले ही क्रान्तिकारी दल में शामिल हो गए थे तथा प्रान्तीय दल के एक योग्य संगठन कर्त्ता थे। जिस समय ये गिरफ्तार हुये उस समय मेरठ के वैश्य अनाथालय के मैनेजर थे। इन्होने इस औषधालय को बड़े परिश्रम से एक मज़बूत संस्था बना दिया। यद्यपि यह आर्यसमाजी हैं, फिर भी इनमें धार्मिक कट्टरता नहीं है। उन दिनों ये मेरठ के एक बड़े उत्साही-कांग्रेस कार्यकर्त्ता और सार्वजनिक नेता थे। इनकी वक्तृत्व शक्ति बहुत अच्छी है। काकोरी केस में हवालात के समय १६ दिनों तक और फैसले के बाद नैनी जेल में ४४ दिनों तक इन्हो ने अनशन किया था। इन्हें काकोरी केस में ७ वर्ष की सख्त कैद की सज़ा हुई। जनवरी १९२७ में नैनी जेल में जो दंगा हो गयाथा उसके सम्बन्धमें इन पर दंगा करानेका अभियोग लगाया गया था और इस मामले में इन्हें आजन्म कालेपानी की सज़ा दी गई है। उस दिन जब इस दंगे के सम्बन्ध में अन्य अभियुक्तों को फांसी की सजा सुनाई गई तो दयार्द्र होकर यह रोने लगे और कहने लगे कि मुझे भी फांसी की सज़ा क्यो न दी गई? ये बड़े सहृदय, निर्भीक और वीर प्रकृति के आदमी हैं।

श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य ।

श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य का जन्म बनारस में पहली अगस्त १८६७ ई० को हुआ था। इनके पिता का नाम पं० ईश्वर चन्द्र जी शिरोरत्न था। १६ वर्ष की अवस्था में इन्होंने बंगाली टोला हाई स्कूल से मैट्रिक परीक्षा पास की और उस के बाद बनारस के सेण्ट्रल हिन्दू कालेज में पढ़ने लगे। इन्हीं दिनों पुलिस-वालों की निगाह इन पर पड़ी, और १९१४ ई० में पकड़ कर ये उरई (जालौन) में चार वर्ष तक नज़रबन्द कर दिये गये। इस प्रकार इनकी कालेज की पढ़ाई बन्द हो गई। नजरबन्दी से रिहा होने के बाद ये उरई से ही निकलने वाले 'उत्साह' नामक हिन्दी साप्ताहिक पत्र का दो वर्ष तक सम्पादन करते रहे। फिर कानपुर के वर्तमान तथा 'प्रताप' के सहकारी सम्पादक रहे और जिन दिनों 'प्रताप' में काम कर रहे थे, उन्हीं दिनों काकोरी केस के सम्बन्ध में गिरफ्तार हुये। सेशन जज ने इन्हें सात साल की सख्त कैद की सज़ा दी थी, पर अपील से यह सजा बढ़ा कर दस वर्ष करदी गई। श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य बचपन से ही बड़े तेज बहादुर और साहसी रहे हैं। इनका स्वभाव मिलनसार व्यवहार मधुर तथा आचरण सादा और पवित्र है। यह इनकी सच्चरित्रता और पवित्रता का ही फल है, कि इस अवस्था मे भी इनका चेहरा दमकता रहता है और इन्हें देख कर एक बार दूसरों के हृदय में भी आनन्द उल्लसित हो उठता है। सदा प्रसन्न रहना और मज़ाक करना इनका खास गुण है। कोई भी व्यक्ति एक बार इन से मिल कर इन्हें कभी भूल नहीं सकता। गाने मे ये बड़े निपुण हैं और जिस समय मस्त हो कर गाने लगते हैं, उस समय सुनने वाले गद्गद हो उठते हैं। ये बड़े उदार प्रकृति के मनुष्य हैं।

श्री प्रेम किशन खन्ना ।

प्रेम किशन खन्ना दिल्ली के रहने वाले हैं इन के पिता एक बड़े अमीर आदमी हैं। ये ई० आई० रेलवे के हावड़ा डिविज़न के चीफ़ इन्जीनियर हैं। श्री प्रेम किशन स्वयं ठेके का काम करते और ख़ूब द्रव्योपार्जन करते थे। ये बहुत दिनों से कांग्रेस के कार्य में भाग लेते थे। श्री रामप्रसाद जी से इनकी घनिष्ठ मित्रता थी। श्री रामप्रसाद जी के साथ अहमदाबाद, गया आदि कांग्रेसों में गये थे। श्री रामप्रसाद जी की गिरफ्तारी के बाद पुलिस को इन पर भी सन्देह हुआ और शाहजहांपुर ही में ये गिरफ़्तार कर लिये गये। तलाशी में इन के यहां एक पिस्तौल पाया गया, जो मुकद्मे में साबित किया गया कि यह पिस्तौल काकोरी ट्रेन डकैती में इस्तेमाल किया गया था। ये हिन्दी, अंग्रेज़ी और बंगला जानते हैं। पढ़ने का इन्हें बड़ा शौक़ है, और पुस्तकों का बड़ा अच्छा संग्रह कर रखा है। हवालात के समय इन्हों ने बहुत सी अच्छी अच्छी पुस्तकें खरीदी थीं। अनशन में इन्हों ने भी भाग लिया था। स्वभाव के बड़े सरल और अच्छे आदमी हैं। उम्र लगभग ३३ साल की है। आप अभी बरेली जेल से छूट कर आये हैं।

श्री रामनाथ पाराडेय ।

रामनाथ पाराडेय का जन्म आश्विन कृष्ण १२ संवत् १९६७ (वि०) में सूरजकुण्ड बनारस में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री देवकीनन्दन पाराडेय था। बचपन में ही इन के पिता का स्वर्गवास हो गया था। जिस समय ये काकोरी षड्यन्त्र के मुकद्दमे में गिरफ्तार हुए उस समय इनकी अवस्था साढ़े पन्द्रह वर्ष की थी और काशी के सेण्ट्रल हिन्दू स्कूल के दसवें दर्जे में पढ़ रहे थे। इनके परिवार में इस समय भरण पोषण करने वाला इन के सिवा कोई नहीं है। इन के यहां जब तलाशी हुई तो पुलिसको श्री गोविंदचरण कर और श्री इन्दुभूषण मित्र के पते मिले, जिस से पुलिस ने खूब फायदा उठाया। साथ ही यहां पर पुलिस को १२ बातों वाला एक पर्चा भी मिला। यह पर्चा क्रान्तिकारी दल के नियमानुसार छावनियों नहर आदि के अच्छे २ रास्तों आदि के सम्बन्ध में था। श्री रामनाथ कसरत के बड़े ही पक्षपाती हैं और हवालात के समय जेल में ये बराबर कसरत करते रहे। उम्र से तुलना करते हुये अभियुक्तों में इन के स्वास्थ्य के जैसा अच्छा स्वास्थ्य एकाध को छोड़ कर शायद ही किसी का था। ये नियमानुसार नित्यप्रति पूजा पाठ भी किया करते हैं। मिजाज इनका बड़ा सीधा और बाल प्रकृति लिये हुए है। अपनी माँ के एक मात्र सहारा होते हुए भी इन्हों ने इस चिन्ता को अभी अपने दिल में नहीं आने दिया। कहते हैं कि मैं एक और बड़ी मां के प्रति अपना कर्तव्य पालन कर रहा हूं, फिर चिन्ता काहे की? इतनी छोटी

उम्र के होते हुये भी इन में बड़ी दृढ़ता है। हवालात में १५ दिनों तक अनशन कर के इन्हों ने प्रशंसनीय साहस और दृढ़ता का परिचय दिया। इन के व्रत को तोड़ने के लिये इन्हें अनेक तकलीफ़ें दी गईं, पर यह बराबर दृढ़ रहे। हवालात में पुलिस ने सेण्ट्रल हिंदु स्कूल के एक सम्भ्रान्त शिक्षक को बुलवा कर उन के द्वारा इन्हें फुसला कर सब बातें खुलवाने की चेष्टा की। पर श्री रामनाथ की दृढ़ता के सामने उक्त शिक्षक महाशय को असफल होकर लौटना पड़ा। इन्हें काकोरी केस में ५ वर्ष की कड़ी कैद की सज़ा दी गई थी। ये बराबर पढ़ते रहे तथा शान्त से जेल जीवन व्यतीत कर रहे हैं। ये हिंदी अंग्रेजी और बंगला जानते हैं। हवालात में इन पर सभी बड़ा स्नेह रखते थे। इन्हें गुस्सा होते तो किसी ने कभी देखा ही नहीं।

श्री भूपेन्द्र नाथ सान्याल ।

श्री भूपेन्द्र नाथ सान्याल श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल के सब से छोटे भाई हैं। इन का जन्म पहिली जनवरी सन १९०६ ईस्वी में कलकत्ते में हुआ। जन्म के इसी ही वर्ष इन के पिता का देहान्त होगया। इस के बाद इनका बाल्य काल अपनी माता के साथ बनारस में बीता। बनारस षड्यन्त्र के मुकद्दमे के समय इनकी अवस्था ९।१० साल की थी। खुफिया पुलिस वाले अकसर इन्हें मिठाइयां देकर श्री० शचीन्द्र नाथ सान्याल के विषय में पूछ ताछ करते थे। परन्तु भूपेन्द्र नाथ उन्हें कभी कुछ भी उत्तर न देते और उन्हें सदैव निराश होना पड़ता था। बनारस षड्यन्त्र में इन के तीनों भाइयों को सजा हुई थी। श्री शचीन्द्र नाथ को आजन्म कालेपानी, श्री यतिन्द्र नाथ को दो वर्ष की सख्त कैद और श्री० रवीन्द्र नाथ (जो आज कल सेण्ट एण्डरूज़ कालेज़ गोरखपुर में प्रोफेसर हैं)नजर बन्द कर दिये गये थे। श्री भूपेन्द्र नाथ पर अपनी माता का बहुत असर पड़ा और सदा इन का जीवन उत्साह मय रहता आया। गोरखपुर से स्कूल लीविंग परीक्षा पास कर के ये इलाहाबाद चले आये, और यहां पर इविंग क्रिश्चियन कालेज से आई० एस० सी० पास कर जब यूनिवर्सिटी कालेज में बी० एस० सी० में(चतुर्थ वर्ष)पढ़ रहे थे,काकोरी षड्यन्त्र के मुकद्दमे में गिरफ़्तार करलिये गये और इन्हें प्रत्येक धारा के अनुसार पांच पांच वर्ष की कड़ी कैद की सज़ा दी गई। यूनिवर्सिटी के वाद विवाद में ये खूब भाग लेते थे। शरीर से अधिक हृष्ट पुष्ट होते हुए बड़े परिश्रमी उद्यमशील और फुर्तीले व्यक्ति हैं फुटबाल तथा हाकी के अच्छे खिलाड़ी हैं, इन के चेहरे से गम्भीरता, उत्साह, साहस प्रत्यक्ष प्रकट होते हैं। मातृ-भूमि के उद्धार के लिये इन के हृदय में उत्साह है।

‡ गजल ‡

मत रो माँ तेरे चरणों पर कर दूंगा जीवन बलिहार।
हृदय रक्त जलसे धो दूंगा बहती हुई आंसूकी धार॥
शीश चढ़ा दूंगा माँ तेरे पद कमलों पर पुष्प समान।
पद पखार दूंगा शोणित से किन्तु न होने दूंगा म्लीन॥
देखूं कौन देखता है अब जननी तुझको नयन तरेर।
भयके दिन अब बीत गये माँ नहीं सुदिनकी है अब देर॥
कट जायेंगे तेरे बन्धन पहनेगी तू जयका हार।
मत रो माँ अब शेष रहे हैं दुखके दिन बस दो हा चार॥

‡ ग़ज़ल ‡

सरफरोशी की तमन्ना है तो सर पैदा करो।
दुशमने हिन्दुस्तान के दिल में डर पैदा करो॥
फूक दो बरबाद कर दो आशियां सैय्यादको।
शरबाज़ो अब ज़रा फिर से शरर पैदा करो॥
झोंक दो दोज़ख की भट्टीमें तुम इङ्गलिस्तान को।
जल के हो जाये खाक गोरे वह हशर पैदा करो॥
आगे बढ़ करके ज़रा अब फोर्ड-विलियम छीन लो।
लाड साहब के मिटानेकी अक्ल पैदा करो॥
दत्त, भगत सिंहको तरह झेलो हजारों सख्तियां।
दास जैसा सख्त ज़िगर फिर बसर पैदा करो॥
सन् सतावन सौ अठारह का वही आग़ाज़ हो।
नौजवानो ने वतन फिरसे ग़दर पैदा करो॥

निर्वासन काले पानीसे जग न भय मानूंगा मैं।
भूखे विना अन्न पानी रह गीत वना गाऊंगा मैं ॥
फांसी पर दे चढ़ा अरे हंसते हंसते झूलूंगा मैं।
बोटी बोटी मांस नोच ले आह नहीं बोलूंगा मैं ॥
आती सन सन सन गोलीको छाती से ठुकराऊं मैं।
'क्रान्ति विजय' 'साम्राज्य नाश' यह शब्द नहीं छोड़ूंगा मैं

गज़ल *

देश की खातिर मेरी दुनिया में यह तावीर हो।
हाथ में हो हथकड़ी पैरों पड़ी जंजीर हो ॥
शूली मिले फांसी मिले या कोई भी तदवीर हो।
पेट में खंजर दुधारा या जिगर में तीर हो ॥
आंख खातिर तीर हो मिलती गले शमशीर हो।
मौत की रक्खी हुई आगे मेरे तस्वीर हो ॥
मर कर भी मेरी जान पर जहमत बिला ताखीर हो।
और गर्दन पर धरी जल्लाद ने शमशीर हो ॥
ख़ासकर मेरे लिये दोज़ख नया तामीर हो।
अलग़रज जो कुछ हो मुमकिन वह मेरी तहकीर हो ॥
हो भयानक से भयानक भी मेरा आखीर हो।
देश की सेवा ही लेकिन एक मेरी तकशीर हो ॥
इस से बढ़ कर और दुनिया में अगर ताज़ीर हो।
मंजूर हो! मंजूर हो!! मंजूर हो!!! मंजूर हो!!!!
मैं कहूंगा फिर भी अपने देश का शैदा हूं मैं। ...
फिर करूंगा काम दुनिया में अगर पैदा हुआ ॥

---

* यह कविता पं० रामप्रसाद "बिस्मिल"ने शाहजहांपुर भारत दुर्दशा नाटकमें गाई थी तब जनताकी आंखोंसे पानी बहने लगा था, पण्डितजीको एक स्वर्ण पदक और पारितोषिक मिला था।
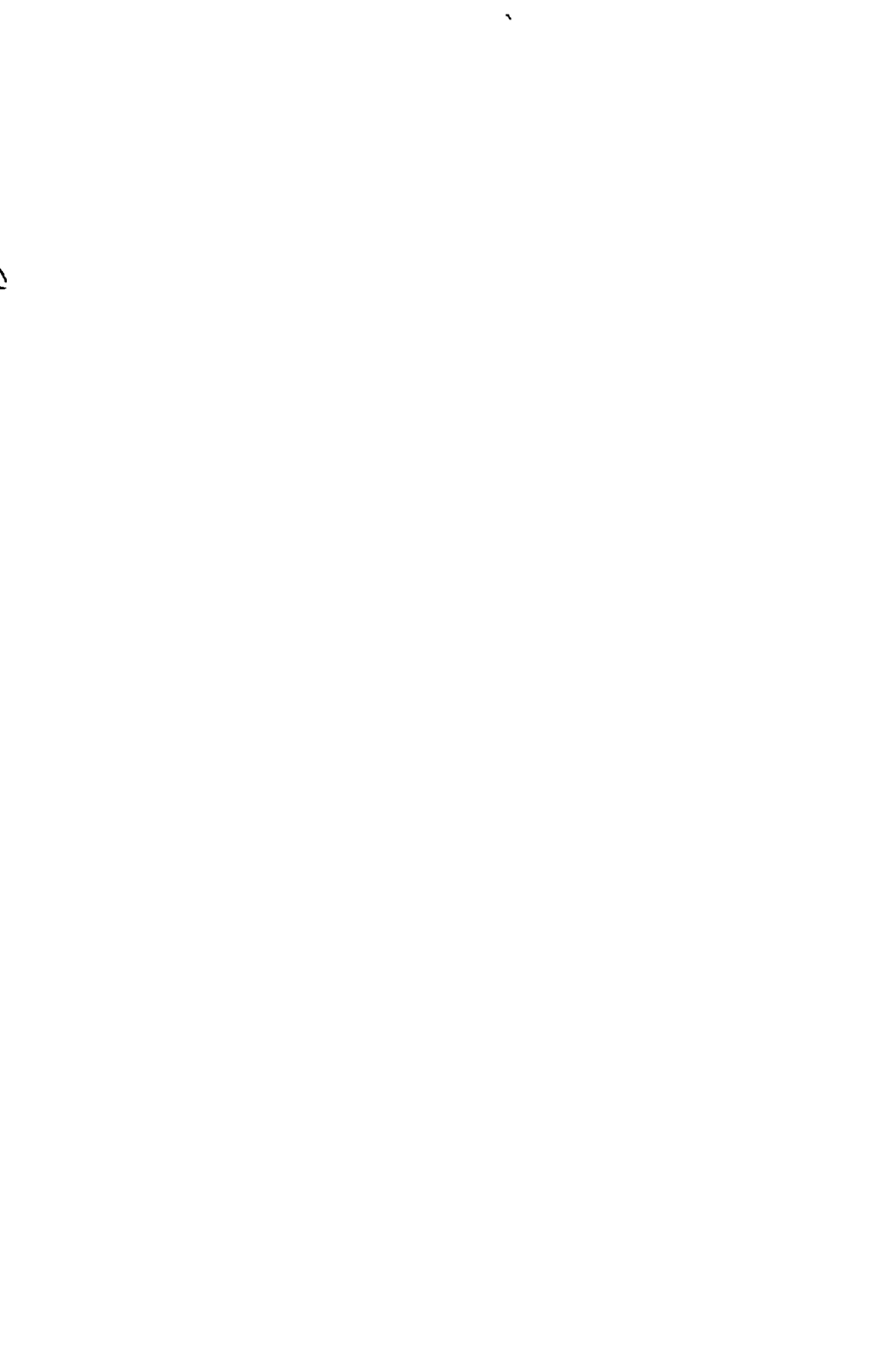
श्रीयुत रोशन सिंह का शव-चित्र

[पास में हाथ जोड़े उन की धर्म पत्नी बैठी हैं और हाथ जोड़े खड़ी बालिका उन की पुत्री है]